Revised and enlarged Edition

सत्य ग्रंथ-माला, संख्या १६

संगठन का बिगुल

लेखक

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

रचयिता

"मेरी जर्मन-यात्रा", "मेरी कैलाश-यात्रा",
"अमरीका-दिग्दर्शन", "अमरीका भ्रमण",
"संजीवनी बूटी", इत्यादि इत्यादि।

"*Religion is alright as long as it produces better citizens, but when it infringes the liberties of other people, it is a curse then.*"

—DEVA D.

शुद्ध और प्रामाणिक संस्करण

संवत् १९८३

मिलने का पता—

चतुर्थ संस्करण बीस हज़ार

मैनेजर सत्य-ग्रंथ-माला आफ़िस,
बेगमपुर पटना सिटी

मूल्य आठ आने

प्रकाशक—

सत्य-ग्रन्थ-माला आफ़िस, बेगमपुर पटना सिटी

प्रथमवार, चार हज़ार, अगस्त सन् १९२५
द्वितीयवार, चार हज़ार, दिसम्बर सन् १९२५
तृतीयवार, चार हज़ार, अप्रैल सन् १९२६
चौथीवार, बीस हज़ार, जनवरी सन् १९२७

मुद्रक—

के० पी० दर इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद

शोधित संस्करण की भूमिका

सन् १९२६ के कौंसिलों और असैम्बली के चुनाव ने मुझे बहुत बड़ी शिक्षा दी है। जब मैंने हिन्दू संगठन के सिद्धान्तों का प्रचार प्रारम्भ किया था तो उस समय मुझे स्वप्न में भी यह आशा न थी कि पण्डित मदन मोहन मालवीय और ला० लाजपत राय जी जैसे अनुभवी नेता हिन्दू संगठन और हिन्दू हितों की आड़ में अखिल भारतवर्षीय राष्ट्रीय महासभा (Congress) को भयङ्कर हानि पहुँचाने की चेष्टा करेंगे। इन दोनों नेताओं ने इस चुनाव के अवसर पर अत्यन्त घृणित तरीक़ों से जनता को कांग्रस के विरुद्ध भड़काने की चेष्टा की है। भाई परमानन्द जी तो कई स्पष्ट कारणों से राजनीति में पूरी तरह से भाग ही नहीं ले सकते, इसलिए उनका हिन्दू सभा द्वारा ही सब प्रकार के आन्दोलन उठाने की चेष्टा करना एक क्षन्तव्य अपराध है, लेकिन उपरोक्त दो नेताओं का हिन्दू हितों के नाम पर स्वतन्त्र-दल की रचना कर उसके द्वारा कांग्रेस के प्रस्ताव के विरुद्ध चुनाव के लिए उम्मेदवार खड़े करना एक ऐसा अपराध है कि जिसे कोई देश हितैषी क्षमा नहीं कर सकता। अतएव मैंने यह निश्चय किया है कि अपने संगठन के बिगुल का ऐसा संस्करण जनता की भेंट करूँ कि जो भविष्य में कोई भी बड़े से बड़ा नेता इस प्रकार के साम्प्रदायिक हितों के नाम से जनताको बहकाने में समर्थ न हो सके। इसी हेतु से मैंने अपने बिगुल के चौथे संस्करण को बिलकुल नया रूप दिया है और इसमें कई एक परिवर्तन कर इसे अत्यन्त उपयोगी बनाने की कोशिश की है।

इस संस्करण में मैंने हिन्दू-संगठन और कांग्रेस के पारस्परिक सम्बन्ध की विवेचना की है, हिन्दू सभ्यता के आदर्शों की व्याख्या जन साधारण के सामने पेश की है, संगठन के इतिहास पर सिंहावलोकन भी किया है, तथा राष्ट्र धर्म के नाते से हिन्दू संगठन का असली स्वरूप पाठकों को दिखलाया है—कहने का तात्पर्य्य यह है कि संगठन के सम्बन्ध में जो भ्रम जनता में फैल सकते हैं और जिन से भारत की राष्ट्रीयता को हानि पहुँचने की सम्भावना है, उन सबको मैंने सरल भाषा में दूर करने की चेष्टा की है। मुझे पूरा विश्वास है कि मेरी यह पुस्तक प्रत्येक राष्ट्रप्रेमी के हृदय को आह्लादित करेगी और हिन्दू जनता के लिए राष्ट्र धर्म का पथ-प्रदर्शक बनेगी। अपने देश वासियों से मेरा यह सविनय निवेदन है कि वे 'बिगुल' के इस संस्करण को ही मेरी प्रामाणिक पुस्तक समझें और इसी पुस्तक के सहारे संगठन सम्बन्धी मेरे सिद्धान्तों का प्रचार जनता में करें।

प्रभु से मेरी कर-बद्ध प्रार्थना है कि वे दयालु भगवान हिन्दू जाति के इस संकट के समय, इसकी सहायता करें, और इस की स्वतन्त्रता के मार्ग में जो विघ्न बाधाएँ हैं उन्हें दूर कर दें; हिन्दू शब्द को इसका व्यापक अर्थ (Indian Nationalist) मिले और भारत के बत्तीस करोड़ नर नारी हिन्दू सभ्यता के आधार पर स्वराज्य की नींव रक्खें ताकि इस देश का 'हिन्दुस्थान' यह नाम सार्थक हो।

कलकत्ता
२ दिसम्बर १९२६

निवेदक
सत्यदेव परिव्राजक

प्रस्तावना

मैंने यह संगठन का बिगुल क्यों बजाया है ?

सदियों से पराधीन अवस्था में पड़े हुये हिन्दू, राजनीतिक प्रश्नों पर विचार करने की बुद्धि को, खो बैठे हैं। इनके अपने छोटे छोटे घरेलू झगड़े इतने अधिक हैं, इनकी जाति बिरादरियों की क्षुद्र समस्यायें इतनी ज़्यादा हैं, कि वे देश के महान प्रश्नों पर तनिक भी ध्यान नहीं देते। यही कारण है कि बड़े बड़े क्रान्तिकारी अवसर इनके हाथ में आते हैं, किन्तु वे उनसे कुछ भी फ़ायदा नहीं उठा सकते। समय अपना काम करता चला जाता है, प्रकृति अपने नियमों का बराबर पालन करती जायेगी, वह हमारा लिहाज़ नहीं करती है। हम यदि उसकी परवाह न कर, काल की गति को न समझ, क्षुद्र बातों में पड़े रहेंगे तो हिन्दू जाति का नामोनिशान मिट जाएगा। हिन्दू जाति के अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न सब प्रश्नों से श्रेष्ठतम है। आज प्राचीन आर्यों की नस्ल और उनकी सभ्यता की रक्षा का प्रश्न हमारे सामने है, आज भारत के गौरव और उसकी स्वाधीनता का पूरा भार हिन्दू संतान के सिर पर है, इसलिये हमें छूत छात और जाति बिरादरियों की छोटी छोटी बातों की कुछ परवाह न कर, वर्तमान युग के धर्म का पालन करना होगा; गंदे, सड़े, रुधिर को निकाल कर शुद्ध रक्त का संचार अपनी नाड़ियों में करना पड़ेगा; जोंकों, मुफ्तखोरों और नपुंसकों की उत्पत्ति का रास्ता बन्द करना होगा, और हानिकारक कल्पित आचार सम्बन्धी नियमों को मिटा कर हिन्दू जाति

बलशाली बनाने के नये मार्ग निकालने होंगे। यही नहीं, बल्कि राष्ट्रीयता के नये धर्म से हिन्दू बच्चों को दीक्षित करना

पड़ेगा। सदाचार के प्रचलित रस्मोरिवाज ही केवल हमारा उज्ज्वल भविष्य बनाने में सहायक नहीं हो सकते, हमें वर्तमान युग के अनुसार नये शास्त्र और स्मृतियाँ बनानी होंगी। क्योंकि—

"देश काल समय भेदेन धर्म भेदः"

अर्थात् देश, काल और समय के बदलने से धर्म का स्वरूप भी बदल जाता है। जाति की जीवन गति का प्रश्न सब से मुख्य है। उसके अभ्युदय और निःश्रेयस सम्बन्धी बातों को ध्यान में रखकर ही धर्म के नियम बनाये जाते हैं। अंग्रेज़ी के एक बहुत बड़े विद्वान ने सत्य कहा है—

"The claim of the race
is the claim of religion."

अर्थात् जाति के जीवन रक्षा का हक़ धर्म की आज्ञा है। मेरा संगठन का बिगुल भारत के तेईस करोड़ हिन्दुओं को सावधान करता है और उन्हें कहता है कि वे प्राचीन आर्य-जाति के जीवन रक्षा के हक़ को मौजूदा बिरादरियों की क्षुद्र बातों के लिए बलिदान नहीं कर सकते। आज केवल वर्णाश्रम धर्म की डींग हाँकने का समय नहीं रहा, आज हिन्दू जाति के अङ्ग प्रत्यंगों को एक दूसरे के साथ मिलाने और सुगठित करने का समय है। आज धीमी चाल से चलने का समय नहीं रहा। मेरा बिगुल हिन्दू समाज में क्रांति की घोषणा करता है।

और सुनिये। मेरा बिगुल क्या कहता है? पूर्व और पश्चिम की ओर अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न शीघ्र ही गम्भीर स्वरूप धारण करने वाले हैं। कांग्रेस के विरोधी मज़हबी दीवाने मुसलमान लोग उसी गम्भीर स्थिति का लाभ उठाने के लिये सङ्गठित हो रहे हैं, और उसी के लिये उन्होंने हर बुरे भले उपायों से अपनी संख्या बढ़ाने का आयोजन बड़े ज़ोर शोर से शुरू किया है।

उनकी यह धारणा है कि योरुप अथवा एशिया में गम्भीर अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति होने पर वे हिन्दुस्तान में, अफ़ग़ानिस्तान और रूस की सहायता से, मुस्लिम राज्य स्थापित कर सकेंगे। अफ़ग़ानिस्तान को उस सहायता के बदले में वे सरहदी इलाक़ा और सिन्ध देने का विचार करते हैं, क्योंकि अफ़ग़ानिस्तान को कराची बन्दरगाह की अत्यन्त आवश्यकता है। हम अपने पड़ोसी अफ़ग़ानिस्तान का सर्वदा कल्याण चाहते हैं और उसे नेक सलाह देते हैं कि वह फ़ारिस की खाड़ी में अपने लिये उपयुक्त बन्दरगाह ले ले और हिन्दुस्तान के देशद्रोही मुसलमान नेताओं की बातों में न आवे। भारतवर्ष पेशावर से ब्रह्मा तक और हिमालय से रासकुमारी तक एक अभिन्न और अविछिन्न देश रहेगा। ऐसे मुसलमान लीडर, जो अफ़ग़ानिस्तान को झूठी आशायें दिलाकर सौदा कर रहे हैं, शेखचिल्ली हैं और देशद्रोही हैं। भारत की देशभक्त मुसलमान जनता इन मज़हबी दीवाने लीडरों के इस अपराध को कभी क्षमा न करेगी।

अच्छा ज़रा एकाग्रचित होकर मेरी बात पर विचार कीजिये। समुद्रपार, सात हज़ार मील के फ़ासले पर बैठी हुई एक गोरी जाति भारतवर्ष पर शासन कर रही है। क्या राष्ट्रधर्म के इस युग में यह एक मोजज़ा (Miracle) नहीं है ? यदि योरुप अथवा एशिया में अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के बिगड़ जाने के कारण भयंकर युद्ध छिड़ जाए और उस युद्ध में ब्रिटिश जंगी जहाज़ों को हानि पहुँच जाये, तो भारत की क्या अवस्था होगी ? क्या आप ने कभी इस पर विचार किया है ? योरुप और भारत के रास्ते में स्वेज़ की नहर है, जिसके दोनों किनारों पर लड़ाकू मुसलमान जातियाँ बसती हैं। क्या अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति बिगड़ने पर यह जातियाँ चुपचाप बैठी रहेंगी ? क्या मिश्र के निवासी अपनी आज़ादी के लिये संग्राम नहीं करेंगे ?

वे सब से पहले स्वेज़ का रास्ता बन्द करने की चेष्टा करेंगे, ताकि ब्रिटिश जाति का भारतवर्ष से कोई सम्बन्ध न रहे। यदि ऐसा विकट समय उपस्थित हो जाए, या उत्तर पश्चिम से बोल्शेविक रूस की भयङ्कर सेना भारतवर्ष पर आक्रमण करे तो उस समय हिन्दुस्तान के तेईस करोड़ हिन्दुओं की क्या दशा होगी? इस आने वाले ख़तरे से हिन्दू-जनता को बचाने के लिये मेरा यह बिगुल बड़े ज़ोर से घोषणा करता है—"हिन्दू संगठन करो! हिन्दू-संगठन करो!!"

हिन्दू-संगठन भारतीय राष्ट्रीयता की सुदृढ़ नींव है, इस महान तत्व को हमारे बड़े बड़े राजनीतिज्ञों ने नहीं समझा। यही कारण हुआ कि इस अत्यन्त आवश्यक आन्दोलन का प्रवेश हमारे राजनीतिक क्षेत्र में बहुत पहिले से नहीं हुआ, और जब हुआ भी, तब ऐसे नामुनासिब अवसर पर कि इसकी राजनीतिक उपयोगिता को स्वीकार करने में अच्छे अच्छे समझदार कांग्रेस-नेता आनाकानी करने लगे। कइयों ने तो इस पुनीत प्रगति को देश के लिये अत्यन्त हानिकारक कह डाला। यह भी एक बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हिन्दू संगठन का वर्तमान आन्दोलन देश के ऐसे लोगों के हाथों आरम्भ हुआ कि जिन्होंने इस हलचल के ऐतिहासिक स्वरूप पर बड़ी गम्भीरता से विचार नहीं किया, और साथ ही जिन्होंने इस आन्दोलन के दूर तक मार करनेवाले परिवर्त्तनकारी परिणामों पर दीर्घ दृष्टि नहीं डाली; उन्होंने केवल हिन्दू मुसलमानों के तात्कालिक झगड़ों से उत्पन्न परिस्थिति को ही सामने रखकर इस आन्दोलन में योग दिया, इसी कारण महात्मा गांधी जी जैसे विचारशील नेता भी प्रारम्भ में हिन्दू-संगठन की प्रगति को समझने में ग़लती कर गये।

हिन्दू संगठन स्वराज्य की प्राप्ति के लिये कितना आवश्यक

है, इसकी मज़बूत नींव पर ही हिन्दू मुस्लिम ऐक्य स्थापित हो सकता है, इसी के आधार पर भारतीय राष्ट्रीयता अपने स्वाभाविक स्वरूप को ग्रहण कर सकती है, इसी के सहारे हमारा प्यारा देश उज्वल कीर्ति को पा सकता है—इन बातों का दिग्दर्शन मैंने इस पुस्तक में कराया है; साथ ही हिन्दू संगठन के अमली साधनों को ब्योरेवार लिख दिया है ताकि तेईस करोड़ हिन्दू जनता अपने स्वरूप को पहिचान सके और प्रत्येक स्त्री, पुरुष, बाल और वृद्ध संगठन के काम में लग जाएँ; छोटे से लेकर बड़े तक सभी को संगठन की धुन लगे। हिन्दू संगठन कांग्रेस का विरोधी नहीं और न यह मुसलमानों का दुश्मन ही है। हिन्दू-संगठन भारत के बत्तीस करोड़ लोगों को अभयदान देनेवाला राष्ट्र-धर्म का जन्मदाता है। इसके बिना भारत की राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता का कुछ भी अर्थ नहीं।

मैं चाहता हूँ कि यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दू स्त्री और पुरुष के हाथों में पहुँच जाय। यह संगठन का बिगुल है। हिन्दू संगठन की फ़ौज में भर्ती होने वाले सभी सैनिकों की जेब में यह पुस्तक रहनी चाहिये।

ता० ११ सितम्बर सन् १९२५

निवेदक
सत्यदेव परिव्राजक

सङ्गठन के बिगुल की घोषणा

यदि हिन्दू जाति को जीवित रखने की इच्छा है, यदि हिन्दू समाज में क्रान्ति करने की अभिलाषा है, यदि अबोध बालक बालिकाओं को गुण्डों से बचाना है, यदि तेइस करोड़ हिन्दुओं को क्षात्र धर्म से दीक्षित करना है, तो इस मेरे बिगुल को भारत के कोने कोने में बजा दो ; मेरा यह बिगुल भारतवर्ष की सोई हुई आत्मा को चैतन्य करेगा, मेरा यह बिगुल भारतीय जनता में बुद्धिवाद और राष्ट्र धर्म का प्रचार करेगा ; यह बिगुल पाँच करोड़ मस्ताने हिन्दू नवयुवकों को अपने प्यारे देश के गौरव, उसकी सभ्यता तथा साहित्य की रक्षा के लिए बुलाता है। इस मेरे हिन्दू संगठन के बिगुल को हाथ में लेकर क़स्बे क़स्बे और ग्राम ग्राम में हिन्दू संगठन के पवित्र कार्य में लग जाओ।

सत्यदेव परिव्राजक

प्रथम खण्ड

हिन्दू संगठन के दर्शन

विषय सूची

विषय	पृष्ठ संख्या

※ भारत माता की जय ※

संगठन का बिगुल

पहली आवाज़

हिन्दू-संगठन का आदि कारण

आजकल के रेल, तार, विद्युत और आकाश-विमानों के ज़माने में कोई भी देश विदेशियों के हमलों से, सुरक्षित नहीं हो सकता, जब तक कि उस देश के लोगों के पास आधुनिक युद्ध-विद्या के साधन न हों; पर पुराने ज़माने में जब जातियाँ मज़बूत किलों तथा खाइयों द्वारा अपनी रक्षा किया करती थीं, तो देश के इर्द गिर्द समुद्र और बड़े बड़े पहाड़ों का होना बड़े सौभाग्य की बात मानी जाती थी। भारतवर्ष तीन ओर समुद्र से घिरा हुआ है, और उसके एक तरफ़ बड़े बड़े दुर्गम पर्वत और जङ्गल हैं। प्रकृति ने इसकी स्थिति ऐसी सुरक्षित बनाई है कि थोड़े से परिश्रम से ही इसके निवासी अपने इस विशाल देश को सदा के लिये स्वाधीन रख सकते हैं। इसकी उत्तर पश्चिमीय सीमा में ही एक ऐसा द्वार है जिधर से विदेशी इस देश पर हमला कर सकते हैं। इसी रास्ते से बहुत प्राचीन काल से भिन्न भिन्न जातियों ने इस देश में प्रवेश किया। यूनानी, पारसी, सिथियन्स, तातारी, यहूदी और तुर्क इस देश में इसी रास्ते से आये। और धीरे धीरे हिन्दू सभ्यता का आश्रय लेकर इस देश के निवासी बन

गये। बौध काल में मध्य एशिया में बौध धर्म की दुंदुभी बजती थी। बाद में ब्राह्मण-धर्म ने इन जंगली जातियों को शुद्ध करके अपने में मिला लिया, और वे लोग हिन्दू जाति के अंग बन गये।

ईसा के क़रीब ६०० वर्ष बाद जब हज़रत मुहम्मद साहब का जन्म अरब में हुआ, और उन्होंने अपनी दलबंदी कर, यहूदी और ईसाई मतों की भित्ति पर, अपना एक नया मज़हब चलाया, तो अरब में मानों एक भयङ्कर ज्वालामुखी फट पड़ा। उसकी लपटें तथा उसके दहकते हुए लावा ने इर्द गिर्द के देशों तथा पुरानी सभ्यताओं को भस्म कर दिया। फ़ारिस और मिश्र इसकी ज्वाला से मिट गये। स्पेन और आस्ट्रिया भी इसके ताप से न बचे; चीन और पोलैण्ड तक इसकी चिनगारियाँ पहुँचीं; पृथ्वी मानों कांप उठी। इस ज्वालामुखी के जलते हुये लावा की एक धारा भारत वर्ष की ओर बढ़ी और सिन्ध तथा पंजाब को भस्म करती हुई पतितपावनी भागीरथी के किनारे जाकर पहुँची। यहाँ इस्लाम के पापों का प्रायश्चित्त हुआ और अरब का ज्वालामुखी धीरे धीरे ठंडा पड़ने लगा। स्पेन और आस्ट्रिया से इस्लाम का वहिष्कार हुआ और यूरुप की सभ्य जातियों ने इसे एशिया का बीमार आदमी बनाकर काले समुद्र के किनारे इसकी मृत्युशय्या डाल दी।

सचमुच इस्लामी विजयों का रोमांचकारी इतिहास संसार में तबाही और बर्बादी लानेवाला हुआ है। यद्यपि प्रसिद्ध मुसलमान लेखक सैय्यद अमीरअली ने स्पेन पर विजय प्राप्त करने वाले मूअर लोगों की सभ्यता के गीत गाकर इस्लाम की तबाही के काम पर बहुत कुछ लीपापोती की है, पर

उनकी तमाम कोशिशें इस्लाम पर लगे हुए इस कलंक के टीके को नहीं मिटा सकीं। भारतवर्ष में तो इस्लाम के आने से भयंकर उथल पुथल हुआ। विचार-स्वातंत्र्य तथा धर्म में सहनशीलता माननेवाला हिन्दू धर्म इस्लामी विजेताओं के जंगली जोश को देखकर दङ्ग रह गया। धर्म को प्राणों से भी अधिक प्यार करने वाले हिन्दू मुहम्मदी मज़हब का मुक़ाबिला करने के लिये उठ खड़े हुए। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम—चारों तरफ़ से रण बाँकुरे सुभट राजपूत मज़हबी दीवाने पठानों पर बुरी तरह टूट पड़े। राजपूताने के वीर प्रवरों ने तो उन्मत्त तातारी फ़ौज़ों पर बराबर छापे मारने शूरू कर दिये, और इस्लाम के नशे में चूर विदेशियों को उन्होंने ज़रा भी चैन न लेने दी। राजपूतों की वीरता का उस समय का इतिहास हिन्दुओं के गौरव का इतिहास है। पुरुषसिंह दुर्गादास, वीर युगल जयमल और फत्ता, क्षत्रिय तिलक अमरसिंह, तथा प्रणवीर महाराणा प्रतापसिंह उस काल के उज्वल कीर्ति-स्तम्भ हैं, जिन्होंने विदेशी हमलावरों के बुरी तरह दाँत खट्टे किये। हिन्दुओं में अपने देश की स्वतंत्रता के लिये ज़बरदस्त जागृति प्रारम्भ हुई। मुग़ल बादशाह अकबर ने इस हिन्दू जागृति से उत्पन्न होनेवाले ख़तरे को अनुभव किया और हिन्दूमुस्लिम ऐक्य की बुनियाद डाली। इस्लाम की असहिष्णुता की बातों को मिटाकर उसने इस्लाम में सभ्यता का समावेश करना चाहा और मौलवी मुल्लाओं के प्रभाव को बिलकुल घटा दिया। हिन्दुओं के दिल को दुखानेवाली सभी बातें दूर कर दी गईं और भारतवर्ष में हिन्दू-मुस्लिम राष्ट्रीयता का प्रादुर्भाव हुआ। जहाँगीर और शाहजहाँ के शासन काल तक अकबर की नीति जारी रही। हिन्दू और मुसलमानों ने मिलकर एक नए

साहित्य को जन्म दिया। देश मानों स्वाभाविक चाल से चलने लगा।

पर दैव की लीला अपरम्पार है। इस्लामी सिद्धान्तों की प्रभुता द्वारा भारतीय राष्ट्रीयता ईश्वर को मंज़ूर नहीं थी। परमात्मा की इच्छा थी कि इस्लाम केवल हिन्दुओं के मायावाद के नाश करने का कारण बने, और हिन्दू जाति अपने प्राचीन ऋषियों की सभ्यता के आधार पर भारतीय राष्ट्रीयता का निर्माण करे। यही कारण हुआ कि औरंगज़ेब के ज़माने में इस्लामी मज़हब अपने भयावने रूप में पुनः प्रगट हुआ। जो हिन्दू, बादशाह अकबर के काल से लेकर शाहजहाँ के समय तक, मुसलमानों के साथ दूध चीनी की तरह मिल गये थे, वे ही मौलवी मुल्लाओं की धर्मान्धता के कारण एक दूसरे के घोर शत्रु बन गये। आज कल के मुसलमान हिन्दुओं के दिलों में बैठी हुई इस्लाम के प्रति घृणा को देखकर हिन्दुओं की तंगदिली की निन्दा करते हैं, पर उन्होंने इतिहास के पन्ने उलट कर संसार को विस्मित करनेवाले, हिन्दुओं के इस व्यवहार का कारण तलाश नहीं किया। जिस समय काशी, मथुरा और अयोध्या के जगत प्रसिद्ध देवालयों को तोड़कर मसजिदें बनाई गईं, उस दिन हिन्दू सन्तान ने मुग़लों के मज़हब का समूल वहिष्कार कर दिया। मुसलमानों में प्रायः दूसरों के दुखों के समझने का माद्दा ही नहीं होता, इसीलिए मुसलमानों ने आज तक अपने उन पापों के लिये पश्चात्ताप नहीं किया। मुग़ल और पठानों के अत्याचारों से पीड़ित हिन्दू जनता युद्ध के लिये खड़ी हो गई, और हिन्दू संगठन की पुनीत प्रगति का प्रादुर्भाव हुआ।

पाठक अब हम आपको ईसा की सत्रहवीं सदी के आख़िरी

भाग में ले जाकर हिन्दू-संगठन के जन्म-दाताओं के दर्शन कराते हैं।

दूसरी आवाज़

हिन्दू संगठन के जन्मदाता

ईसा की सत्रहवीं सदी के अन्तिम भाग में हिन्दू सभ्यता के लिये घोर संकट का समय उपस्थित हुआ था। जिस अरब के ज्वालामुखी ने मध्य एशिया के देशों की सभ्यताओं को मिटा दिया था, और जो अब अपनी तबाही का काम समाप्त कर ठंडा पड़ चुका था, उसकी बची खुची चिन्गारियाँ यकायक भारत में भभक उठीं, और ऐसा प्रतीत होने लगा मानों भारतवर्ष भी फ़ारिस की तरह अपना अस्तित्व खो बैठेगा।

किन्तु भावी के खेल न्यारे हैं। जैसे मृत्युशय्या पर पड़ा हुआ आदमी दम तोड़ते वक्त चैतन्यता दिखलाता है, ठीक यही दशा भारत में इस्लाम की हुई। औरङ्गज़ेब के ज़माने में इस्लाम ने फिर अपना विकराल रूप धारण किया, और उसने हिन्दू सभ्यता तथा हिन्दू आदर्शों को छिन्न भिन्न करने के लिये जी जान से कोशिश की। औरङ्गज़ेब, मुसलमानी काल का, सबसे अधिक प्रतापी बादशाह हुआ है। उसने राज्य की सारी शक्तियाँ लगा कर—सब प्रकार के सम्भव उपायों का अवलम्बन कर—हिन्दू जाति को मिटा देने की चेष्टा की। हिन्दुओं के लिये उनकी परीक्षा का यह सबसे कठिन समय उपस्थित हुआ था। हिन्दू समाज के डरपोक, लोभी, और कामी लोगों ने पहले ही हल्ले में इस्लाम कबूल

कर लिया। दुर्बल और अछूत हिन्दू भी लाखों की संख्या में अपने धर्म से च्युत हो गये। हज़ारों वीर मलकाने राजपूतों ने बीच का मार्ग अवलम्बन किया, और ईश्वर से प्रार्थना की कि अवसर मिलते ही वे अपने प्यारे हिन्दू धर्म में फिर सम्मिलित हो जाएँगे।

हिन्दू समाज के कचरे को इस प्रकार प्रलोभनों और तलवार के ज़ोर से अपने मज़हब में मिला कर मौलवी और मुल्ला फूले न समाये। उन्होंने समझा कि बस मैदान मार लिया। मगर भावी ने हँस कर कहा, "मूर्ख मुल्ला लोगो! हिन्दू समाज का यह कूड़ाकरकट तुममें मिल कर तुम्हारा ही सत्यानाश कर देगा।" वही हुआ। कमीने, भीरु, स्वार्थी और धूर्त हिन्दुओं के मुसलमान हो जाने से भारतवर्ष में मुसलमानी साम्राज्य का सदा के लिये ख़ातमा हो गया। धर्मपरायण, वीर और तेजस्वी हिन्दू अदम्य उत्साह से अपनी प्यारी जन्मभूमि की रक्षा के लिए उठ खड़े हुए और उन्होंने हिन्दू-संगठन की बुनियाद डाली। आर्य्य सभ्यता के अभिमानी समर्थ गुरु रामदास ने हिन्दू संगठन करने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञा की। उनके उपदेश को शिरोधार्य्य कर, छत्रपति शिवाजी महाराज ने, दक्षिण भारत में बिखरी हुई हिन्दू शक्तियों का संगठन किया, और मुग़ल सम्राट औरङ्ग़ज़ेब को ऐसी लातें लगाईं कि हिन्दुस्तान की इस्लामी दुनियाँ काँप उठी। महाराष्ट्र प्रान्त में मुसलमानों की संख्या बहुत ही कम होने के कारण हिन्दू-संगठन का काम आसान था, इसलिये औरङ्ग़ज़ेब के मरते ही मरहठों ने बहुत शीघ्र अपना बल बढ़ाया और इर्द गिर्द के मुसलमानी हाकिमों को पराजित कर उन्होंने विशाल हिन्दू साम्राज्य की स्थापना की।

परन्तु हिन्दू-संगठन का असली और सच्चा काम पंजाब में हुआ। पञ्जाब भारत का सिंहद्वार होने के कारण सदा सब से अधिक ख़तरे में रहा है। जितने विदेशी सेनानायकों ने भारत पर आक्रमण किया, उन्होंने सबसे पहिले पंजाब को ही अपने पाँव के तले रौंदा। इसलिये पंजाब निवासी हिन्दुओं की दशा मुसलमानी काल में बड़ी हीन थी। बाबर के समय में ही खत्रीवंश के सूर्य गुरु नानकदेव ने अपनी दिव्य दृष्टि से अपने प्यारे पञ्जाब की इस भीषण समस्या को अनुभव किया था, पर वे कर क्या सकते थे। हिन्दू समाज में संगठन नहीं था; सैकड़ों प्रकार के देवी देवताओं की पूजा करने वाले हिन्दू छोटे छोटे टुकड़ों में विभक्त थे; ऐक्य का कोई सीमेन्ट हिन्दू समाज में न था। मिथ्या विश्वासों में पड़ी हुई हिन्दू जनता जात पाँत के कंटकाकीर्ण मार्ग का अनुसरण कर रही थी। ऐसी हिन्दू समाज को किस प्रकार, संगठित विदेशियों के मुक़ाबिले में, खड़ा किया जाए? यही समस्या सामने थी। सदियों से बिगड़ा हुआ समाज एक दिन में थोड़े ही सुधर सकता है, और वह भी क्या अपने ही जीवन काल में? धैर्य और सन्तोष से उस ईश्वरपरायण गुरु नानकदेव ने अपना काम आरम्भ किया। उनका लगाया हुआ बीज आठ पीढ़ियों के बाद एक सुन्दर वृक्ष बन गया, और जब परम तपस्वी और अहिंसा के अवतार, गुरु तेग़बहादुर जी ने देहली में जाकर धर्म के लिये अपना सिर दे दिया तो भारत वर्ष में हिन्दू संगठन की प्रचण्ड ज्वाला प्रज्वलित हुई।

निस्सन्देह हिन्दू-संगठन के सच्चे जन्मदाता, वीर शिरोमणि गुरु गोविन्दसिंह जी थे। देहली में अपने परम पूज्य पिता गुरु तेग़बहादुर जी के पवित्र बलिदान के बाद इन्होंने हिन्दुओं के

संगठन का भगीरथ प्रयत्न किया। इनका संगठन देश काल के अनुकूल था, क्योंकि वे पश्चिमीय जातियों के गुण दोषों से भली प्रकार परिचित थे। उन्हें अपने समाज की कमज़ोरियों का भी ख़ूब पता था। कौन से दोषों के कारण हिन्दू जनता विदेशियों से पददलित हुई है, उसका स्पष्ट चित्र उनके सामने था। विदेशियों से नित्य सम्बन्ध रहने की वजह से अपने देश की ग़ुलामी के मूल कारणों का पता उन्हें लग गया था, अतएव उस क्षत्रिय वीर ने अपना सर्वस्व होम कर जाति के उद्धार की प्रतिज्ञा की।

अच्छा, हिन्दू संगठन के जन्मदाता दो पुरुष हुए—छत्रपति शिवाजी महाराज और वीर केशरी गुरु गोविन्दसिंह जी। दोनों के संगठन में क्या अन्तर था? इस पर थोड़ा विचार कर लेना अनुचित न होगा। छत्रपति शिवाजी महाराज प्राचीन हिन्दू धर्म के ज़बर्दस्त अभिमानी थे। वे वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा के पुजारी थे, इसलिये उन्होंने उसी ढंग पर हिन्दू समाज का संगठन किया। विदेशियों के साथ घनिष्ठ सम्पर्क होने का अवसर महाराष्ट्र हिन्दू जनता को बहुत कम मिला था, और न उन्हें अपने समाज के दोषों के देखने की ही आवश्यकता पड़ी थी। यही कारण हुआ कि महाराष्ट्रीय हिन्दू-संगठन ने हिन्दू समाज में कोई क्रान्ति उत्पन्न नहीं की, और समाज के सभी दोषों को रखते हुए उसने अपना साम्राज्य स्थापित किया। यदि महाराष्ट्र प्रान्त में समयानुकूल हिन्दुओं के अन्दर सामाजिक क्रान्ति हो जाती और उस क्रान्ति के आधार पर नवीन महाराष्ट्र-साम्राज्य स्थापित हो जाता, तो हिन्दू जाति सदा के लिये स्वाधीन हो जाती, और अङ्गरेज़ी शासन हिन्दुस्तान में हर्गिज़ न पनपता। हिन्दू सभ्यता और हिन्दू आदर्शों के साथ

साथ, यदि कुशाग्रबुद्धि महाराष्ट्र वर्तमान युग के प्रजातंत्रवाद और सामाजिक समता को अपना लेते तो भारत की स्वाधीनता का प्रश्न सदा के लिये हल हो जाता, पर ऐसा न हुआ। हिन्दू समाज की भीतरी कमज़ोरियों ने महाराष्ट्र संगठन को कमज़ोर कर दिया, और छत्रपति शिवाजी महाराज के पुरुषार्थ से निर्माण किया हुआ राष्ट्रभवन सौ वर्ष के भीतर ही जर्जरित होकर गिर पड़ा।

अब हम गुरु गोविन्दसिंह जी द्वारा किये गये हिन्दू-सङ्गठन पर एक दृष्टि डालते हैं।

तीसरी आवाज़

संगठन की पुनीत प्रगति

नवें गुरु तेग़बहादुर जी की देहली में बलिदान होने की घटना भारतवर्ष के इतिहास में बड़ी महत्वपूर्ण है। एक परम तपस्वी ईश्वर-भक्त महात्मा अपनी इच्छा से सारे देश के दुःखों को अपने सिर पर लेकर पीड़ित हिन्दू जनता का उद्धार करने के लिये मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब के पास देहली जाता है। वहाँ हँसते हँसते परमात्मा का नाम कीर्तन करते हुए वह अपना सिर कटवा देता है। अपने शत्रुओं के प्रति उसके चित्त में कुछ भी द्वेष नहीं। भारतवर्ष की सभ्यता और उसके आदर्शों का ज्वलन्त उदाहरण गुरु तेग़बहादुर जी ने अपने काल के मुग़लों को दिखला दिया। अत्यन्त पवित्र वस्तु के बलिदान से देश के घोर सङ्कट

की निवृति होती है और उसमें से एक उच्च सिद्धान्त निकलता है—

" Let us die so that the others may live."

अर्थात् हम बलिदान हो जाएँ ताकि भावी सन्तान सुखपूर्वक जिये। हिन्दूधर्म सेवा और बलिदान का धर्म है। गुरु तेग़बहादुर जी ने हिन्दू सभ्यता के आदर्श को पूरा कर दिखलाया।

वह बलिदान एक चमत्कार था। दसवें गुरु गोविन्द सिंह जी अपने पिता के मिशन को पूरा करने के लिये उठ खड़े हुए। जिन कारणों से हिन्दू प्रजा तुर्कों से भयभीत होती थी, उनको उन्होंने मिटा दिया। ख़ैबरघाटी से आने वाले पठानों की लम्बी लम्बी दाढ़ियाँ और लम्बे क़द हिन्दुओं को डराते थे। गुरु गोविन्दसिंह जी ने अपने सिक्खों से कहा, कि वे भी लम्बी दाढ़ियाँ और सिर के केश रक्खें, ताकि साढ़े पाँच फीट का आदमी छः फीट से अधिक लम्बा दिखलाई देने लगे। पठान लोग हिन्दुओं को सताने के लिये गाय मारते थे, सिक्खों ने सुअर को झटके से मारना और उसका मांस खाना शुरू किया। मुग़लों में छूत छात नहीं थी, और न वे जात पाँत को ही मानते थे, गुरु गोविन्दसिंह जी ने छूत छात और जात पाँत को उड़ा दिया और हिन्दू समाज को साम्यवाद के सिद्धान्तों से दीक्षित किया। मुग़ल और पठान लोग दग़ा, फ़रेब और छल से हिन्दुओं को परास्त कर देते थे, गुरु गोविन्दसिंह जी ने अपने सिक्खों को यह बतलाया कि यदि कोई तुर्क अपनी बाँह सरसों के तेल में डाले, और फिर उसी बाँह को तिलों के थैले में रख दे तो जितने तिल उसकी बाँह पर लग जाएँ उतनी बार भी अगर कोई तुर्क क़सम खाये तो उसकी

बात पर विश्वास मत करो। इस प्रकार उस जुग के क्षात्र-धर्म का प्रचार हिन्दू जनता में कर, उन्होंने मौत का सामना करने वाले बहादुर अकाली-दल की बुनियाद डाली और हिन्दुओं को भ्रातृ भाव के सूत्र में पिरो दिया। इसीलिए हम गुरु गोविन्द सिंह जी को हिन्दू-संगठन का सच्चा जन्म दाता कहते हैं।

इस दूरदर्शी हिन्दू नेता ने ; ख़ैबरघाटी से आने वाले ख़तरे को भली प्रकार समझा था। उन्होंने सोचा कि जब तक ख़ैबर का रास्ता बन्द नहीं होगा, तब तक हिन्दुस्तान सुरक्षित नहीं हो सकता। अकाली-दल ख़ैबर घाटी से आने वाले ख़तरे को रोकने के लिये बनाया गया, उत्तर पश्चिमीय सीमा पर सिक्खों की बस्तियाँ बसाई गई', अपना सर्वस्व होमकर उस दूरदर्शी राजनीतिज्ञ ने अफ़गानिस्तान और भारतवर्ष के बीच सुदृढ़ लोह की दीवार खड़ी कर दी। यदि अब अफ़गानिस्तान ख़ैबर की घाटी से भारतवर्ष पर आक्रमण करे तो पञ्जाब के निवासी हिन्दू तथा गुरु गोविन्दसिंह जी के प्यारे चालीस लाख सिक्ख अपने प्राणों को हथेली पर रख कर विदेशियों के मुक़ाबले में डट जाएँगे और एक भी विदेशी जीता लौटकर अपने घर वापिस न जा सकेगा। गुरु गोविन्दसिंह जी ने हिन्दुओं का अपूर्व संगठन किया, ख़ैबरघाटी से आने वाले ख़तरे को सदा के लिये मिटा दिया। ऐसे उपकारी, स्वार्थ-त्यागी, क्षात्रधर्म के अवतार, वीर-श्रेष्ठ गुरु गोविन्दसिंहजी के अहसान को हिन्दू संतान कभी भूल नहीं सकती। उस हिन्दू संगठन का परिणाम यह हुआ कि मुट्ठी भर संगठित हिन्दुओं (सिक्खों) ने पंजाब में अपना राज्य स्थापित कर लिया, और तुर्कों पर तलवार की ऐसी चोटें लगाई' कि अफ़गानिस्तान के पठान थर थर काँप उठे। जो मुग़ल हिन्दुओं को चिड़िया समझा करते थे, अब हिन्दुओं को शेर देख कर

उनका दम ख़ुश्क होने लगा। पाँसा पलट गया, मुगलों और पठानों को लेने के देने पड़ गये। स्वनामधन्य बंदा बैरागी ने गुरु गोविन्द सिंह जी की आज्ञानुसार पंजाब में दौरा किया, और तुर्कों को उनके अत्याचारों का ऐसा दण्ड दिया कि वे "तोबा! तोबा!" पुकार उठे।

हिन्दु संगठन के इतिहास में वन्दा बहादुर की कथा बड़ी अद्‌भुत है। हिरनी का शिकार करने वाला वीर राजपूत, माता के पेट में से निकले हुये नन्हें नन्हें बच्चों को देख कर अहिंसा के व्रत का व्रती हो जाता है। वैष्णव धर्म का अवलम्बन कर शरीर में भस्म रमा, वह तेजस्वी क्षत्री अपनी जन्मभूमि को छोड़ दक्षिण की ओर चल देता है। वर्षों वह भगवान के ध्यान में निमग्न रहता है। जिस समय उसकी मातृभूमि विदेशियों के अत्याचारों से त्रस्त होकर हा हा कार करती है, तो वह बैरागी अपनी तुलसी की माला को एक तरफ़ रखकर, शरीर की भस्म दूर कर, तलवार हाथ में लेता है। अपने देश के शत्रुओं के लिये वह काल का स्वरूप धारण कर, धनुष बाण हाथ में ले, जटाजूट बाँध जन्म भूमि की ओर चल देता है। अपने सब सुखों पर लात मार कर, वह युग के धर्म का अवलम्बन करता है, और रणभूमि में पहुंच कर आततायियों को उनके किये हुए पापों का उचित दण्ड देता है। हृदयशून्य पठान बन्दा बहादुर के अपूर्व साहस को देख कर विस्मित हो जाते हैं, और उन्हें मालूम होने लगता है कि मानों स्वयं ख़ुदावन्द क़रीम ही उनके गुनाहों की सज़ा देने के लिये आया है। हज़ारों मौलवी, मुल्ला, पीरज़ादे, नवाब ज़ादे, गाजर मूली की तरह काट दिये जाते हैं, और सैकड़ों मसजिदें, जहाँ ख़ुदा के नाम पर निरपराधों की गर्दनें काटी जाती थीं, भूमि के

साथ मिला दी जाती हैं। पंजाब के मालवा प्रान्त में बन्दा बहादुर के समय की यह उक्ति आम प्रसिद्ध है—

सुन ओ सिक्ख जवाना!
ढादे मसीताँ करदे मैदाना।

गुरु गोविन्दसिंह जी के मिशन को पूरा कर बन्दा बहादुर अपने साथियों के साथ देहली में शहीद हुए। यह घटना बादशाह फ़रुखसियर के समय की है। बहादुर बैरागी का किया हुआ पुरुषार्थ फल लाया, और पंजाब में क्षात्रधर्म की जड़ जमी। महाराजा रणजीतसिंह ने अपने अतुल पराक्रम से सारे पंजाब को स्वाधीन कर लिया, और उनके मशहूर सेनानायक हरीसिंह नलुवे ने सीमा प्रान्त को विजय किया। पठानों में हरीसिंह जी का ऐसा आतंक छाया कि आज तक मातायें अफ़ग़ानिस्तान में बच्चों को नलुवे का नाम लेकर डराती हैं।

चौथी आवाज़

उन्नीसवीं सदी में हिन्दू-संगठन

हिन्दूधर्म और हिन्दू साहित्य में मायावाद का सिद्धान्त विषवत सिद्ध हुआ है। हिन्दू जाति के अत्यन्त आपत् काल में समय समय पर महापुरुष जाति का दुःख दूर करने के लिये उत्पन्न होते रहे हैं और उन्होंने अपने पुरुषार्थ से जाति के दुखों को दूर किया है, पर जिस जनता में संसार को मिथ्या और गृहस्थ की जिम्मेदारियों को माया समझने का ख़्याल बैठा हुआ हो, इसे कोई सदा के लिये चैतन्य नहीं रख

सकता। यही कारण है कि महापुरुष आये और चले गये, परन्तु मूल बीमारी का इलाज बिलकुल नहीं हुआ। महापुरुषों के जाने के बाद हिन्दू जनता मायावाद के गहरे गढ़े में गिरकर फिर सो जाती है, और उनके दुःख जैसे के तैसे बने रहते हैं। मायावाद एक व्याधि है; यह निराशा की शराब है; यह अकर्मण्यता का भूत है। जगत् को मिथ्या समझने वाली जाति, क्षात्र-धर्म धारण नहीं कर सकती। उसके दुःखों का इलाज करने का सीधा सच्चा उपाय यही है कि झूठे वेदान्त और मायावाद के ढकोसले को समूल नष्ट किया जाय, और कर्म योग की शिक्षा जन साधारण को दी जाय।

ईसा की उन्नीसवीं सदी के पहिले भाग में महाराष्ट्र साम्राज्य का अन्त हुआ। छूत छात, जात पाँत के बन्धन और घर की फूट इसके मुख्य कारण थे। समुद्र पार कर एक विदेशी गोरी जाति ने, भारतवर्ष में आकर अपना प्रभुत्व जमाया और हिन्दुओं की कमज़ोरियों का सोलह आना फ़ायदा उठा कर धीरे धीरे देश पर अपना क़ब्ज़ा कर लिया। हिन्दू और मुसलमान जनता नवीन श्वेतांग हाकिमों को पाकर संतुष्ट हो गई। नीति निपुण ब्रिटिश जाति ने हिन्दू मुसलमान दोनों को वश में कर, अपने राज्य को सुदृढ़ किया, और इन्हीं की मदद से पंजाब के हिन्दुओं की स्वाधीनता नष्ट कर, उस सूबे पर भी अपना कब्ज़ा जमा लिया। इस्ट इण्डिया कम्पनी के स्वार्थी अंग्रेज़ हाकिमों के अत्याचारों के कारण रियासतों में भयङ्कर असन्तोष फैल गया। सन् १८५७ में, कुछ चालाक मुसलमान लीडरों ने उन असंतुष्ट देशी रियासतों को मिलाकर, हिन्दू और मुसलमान फ़ौजी सिपाहियों में मज़हबी अफ़वाहें फैला, हिन्दुस्तान से अंग्रेज़ी राज्य को समाप्त करने की चेष्टा की। जन साधारण

उस युद्ध में पूरी तरह सम्मिलित नहीं हुए। जिन शिकायतों के कारण, सन् १८५७ का झगड़ा शुरू हुआ था, झगड़ा शान्त होने के बाद अंग्रेज़ों ने उन शिकायतों को दूर करने की घोषणा की। इस्ट इण्डिया कम्पनी की हकूमत ख़तम हो गई। देश में अंग्रेज़ी शासन अंग्रेज़ी पार्लीमेंट के आधीन होकर मस्ताना चाल से चलने लगा। मुसलमान जनता तक़दीर के गढ़े में गिर कर सो गई और हिन्दू मायावादी बन कर फ़िलासफी छाँटने लगे, ईसाई मिशनरी नवीन पाश्चात्य ढंगों से देश की जनता में अपने धर्म का प्रचार करने लगे। कालेज और स्कूलों में अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा होने लगी। थोड़े ही वर्षों में ऐसा प्रतीत होने लगा, कि मानों अंग्रेज़ों का राज्य आदि सृष्टि से चला आ रहा है। अंग्रेज़ी पढ़े लिखे लोग, विदेशी गवर्नमेंट के साथ दूध चीनी की तरह मिल गये और अपने अनपढ़ देशवासियों की भाषा तथा वेष का तिरस्कार करने लगे। योरुप का साहित्य और उसके आदर्श पढ़े लिखों के दिलों में घर कर गये, और सारे देश ने गुलामी का आवरण पहिन लिया। स्वत्वाभिमान और जाति-प्रेम लोगों के दिलों से जाता रहा और शिक्षित समुदाय अंग्रेज़ अधिकारियों की हर बात में नक़ल करने लगा। देश की तिजारत नष्ट हो गई और लोग विदेशी माल से अपने देवी देवताओं की पूजा करने लगे। देश में अजीब नामर्दी छा गई। ऐसे समय में हिन्दुओं को एक ज़बर्दस्त नेता की आवश्यकता थी जो अपने देश के प्राचीन गौरव की गाथा जनता को सुनाता और जन साधारण में स्वत्वाभिमान भरता। ईश्वर ने ऐसा नेता भेज दिया।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती उन्नीसवीं सदी में हिन्दू संगठन के ज़बर्दस्त प्रवर्तक हुए। अपनी प्राचीन सभ्यता का अभिमान उनमें कूट कूट कर भरा हुआ था। अपने देश में

भ्रमण कर जब उन्होंने जन साधारण को मायावाद के गढ़े में गिरा हुआ देखा, और शिक्षित समुदाय को अपनी ही भाषा और वेष से घृणा करते हुए पाया, तो उनका हृदय संतप्त हो उठा। उन्होंने देखा कि कालेज और स्कूलों में पढ़ने वाले विद्यार्थी अपने धर्म से परांमुख होते जा रहे हैं और ईसाई मिशनरी घरों में घूम घूम कर लोगों को विदेशी आदर्शों की ओर खींच रहे हैं। ऐसे समय में उनका क्या कर्तव्य है? यही विचार वे करने लगे। अन्त में अपना कर्तव्य निश्चित कर उस देश भक्त संन्यासी ने हिन्दू धर्म के सुधार का बीड़ा उठाया। स्थान स्थान पर घूम कर शास्त्रार्थ किये; मौलवी और मुल्लाओं से टक्करें लीं; ईसाई पादरियों को अपने धर्म का गौरव बतलाया, और जन साधारण की भाषा में अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" की रचना की। स्वामी दयानन्द सरस्वती शास्त्र-युद्ध-कला के अद्भुत पण्डित थे। उनके ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" ने हिन्दुस्तान की मज़हबी दुनियाँ में बम के गोले का काम किया। सोये हुए हिन्दू चैतन्य हो गये; ईसाई मिशनरी विस्मित हो उठे; मौलवी लोग बगलें झाँकने लगे; देश में एक अजीब जागृति हुई; पश्चिम की ओर बहनेवाली लहर फिर पूरब की ओर बहने लगी; हिन्दी भाषा को राष्ट्रीयता का स्थान मिला; संस्कृत साहित्य का पुनरुद्धार हुआ; जन साधारण में देशभक्ति का संचार होने लगा, और निराशा में डूबे हुए हिन्दू आशावादी बनकर अपने देश की प्राचीन कीर्ति को पुनर्जीवित करने के हेतु अपना सङ्गठन करने लगे।

निस्सन्देह आर्यसमाज के पिछले चालीस वर्षों का इतिहास हिन्दू-संगठन के लिये भगीरथ प्रयत्न का इतिहास है। यद्यपि, आर्यसमाज के काम करनेवालों से, बहुत सी भूलें हुई हैं, तो भी

आर्यसमाज ने हिन्दू जाति की बड़ी ज़बर्दस्त सेवा की है, और भारतवर्ष के प्राचीन गौरव का अभिमान जनता में भरने में तो इस संस्था का काम चिरस्मरणीय रहेगा। बङ्गाल प्रान्त के शिक्षित हिन्दुओं में हिन्दू संगठन के लिये जागृति उत्पन्न करने में राजाराम मोहनराय जी का ख़ास स्थान है। हिन्दू समाज को घोर अन्धकार में डूबा हुआ देख कर इस ईश्वर परायण महा पुरुष ने, समाज सुधार का बोड़ा उठाया। एक ईश्वर की पूजा का भाव जनता में भर उन्होंने, उपनिषदों के ब्रह्मस्रोत की धारा बङ्गाल में बहा दी। उस धारा में स्नान करने वाले लोग आगे चल कर हिन्दू संस्कृति के चैतन्य करने में जन साधारण के नेता बने और उन्होंने भारतवर्ष की कीर्ति को जगत में फैलाने वाले सुन्दर साहित्य को जन्म दिया। हिन्दुओं में अपने देश की ममता और उसके आदर्शों के प्रति श्रद्धा का भाव भरने में श्री स्वामी विवेकानन्द जी और श्री स्वामी रामतीर्थ जी ने भी बड़ा काम किया। नई दुनियाँ में घूमने वाले इन दोनों परिव्राजकों ने हिन्दू जनता को नवीन स्फूर्ति दी और सेवा-धर्म के मन्त्र से दीक्षित किया। लोग इनके उपदेशों से प्रभावित होकर, अपने देश के आदर्शों का आदर करने लगे और यह भी समझने लगे कि भारतवर्ष के जीवन का एक पवित्र मिशन है और वह मिशन संसार में शान्ति फैलाना है।

हिन्दू जाति को उन्नीसवीं सदी के अन्त में हिन्दू-सङ्गठन के लिए एक आदर्श मिल गया। बिना लक्ष्य के जाति मुर्दा होती है। लक्ष्य पाकर हिन्दू नवयुवकों में नवशक्ति का संचार हुआ और हिन्दू-संगठन के व्यापी आन्दोलन के लिये सामग्री इकट्ठी होने लगी।

पाँचवीं आवाज़

संगठन का मूल तत्व

समाज में संगठन लाने वाली कौन सी शक्ति है ? अलग अलग बिखरे हुये लोग आपस में कैसे मिल सकते हैं ? कौन सा तत्व उनको आपस में मिला कर कठोर कर देता है ? इन प्रश्नों पर प्रकाश डालना अत्यावश्यक है ।

एक कठोर लकड़ी के टुकड़े को हाथ में लेकर देखिये । उसके छोटे छोटे अंश आपस में कैसे संगठित हैं । आप यदि उस लकड़ी पर ज़ोर से मुक्का मारें तो वे संगठित अंश आप के मुक्के का मुक़ाबिला कर उसे चोट पहुँचा देंगे । इस लकड़ी में ऐसा संगठन—ऐसा कठोरपन—कहाँ से आया ? इसकी पड़ताल करते हैं ।

आप दियासलाई लेकर इस लकड़ी में आग लगा दीजिये । ज्यों ज्यों वह लकड़ी जलती जायगी, त्यों त्यों उसके परमाणु अलग अलग होते जाएँगे और थोड़ी देर में वह राख बन जायगी—उसका संगठन बिल्कुल टूट जायगा । यह स्पष्ट है कि लकड़ी के अङ्ग प्रत्यंगों को आपस में संगठित करने वाली शक्ति आग है; जब वह आग निकल जाती है तो वस्तु का संगठन टूट जाता है ।

दूसरा उदाहरण लीजिये । मनुष्य का शरीर कैसा संगठित है, शरीर की हड्डी पट्ठा कैसा मज़बूत है । शरीर को संगठित करने वाली शक्ति इसकी गरमी है । जब शरीर में से गरमी निकल जाती है, जिस्म ठण्डा पड़ जाता है, तो शरीर का संगठन नष्ट होने लगता है और धीरे धीरे हड्डी मांस एक दूसरे से जुदा हो जाते हैं । सचमुच संगठन का मूल तत्व आग है ।

आग के बिना भिन्न भिन्न परमाणुओं का संगठन नहीं हो सकता। अच्छा तो फिर बिखरे हुये अंगों में संगठन कैसे लाया जाय? इसका भी उत्तर देना आवश्यक है। आपको नया मकान बनवाने के लिये मज़बूत ईंटें चाहियें। आप ईंटें कैसे बनाते हैं? बिखरे हुये मिट्टी के कणों में पानी डालकर, आप उन्हें नज़दीक लाते हैं और उनकी कच्ची ईंटें बनाते हैं। वे ईंटें कच्ची हैं, क्योंकि उनमें आग का समावेश नहीं हुआ। उन कच्ची ईंटों को पक्का करने के लिये आप भट्ठा बनाते हैं और लकड़ी, कोयला जलाकर इन ईंटों में अग्नि भरते हैं। जब आग उनके छिद्रों में प्रवेश कर जाती है, तो वह ईंटें .खूब पक्की हो जाती हैं और उनका तोड़ना कठिन हो जाता है। अतएव यह बात बिल्कुल साफ़ है कि जल, साधारण तौर पर, और आग, ख़ास तौर पर, संगठन करने वाली शक्तियाँ हैं। यह भी समझ लेना चाहिये कि सामर्थ्य से अधिक जल और आग मिलाने से भी संगठन टूट जाता है। यदि आप भट्टी में अधिक आग दे देंगे तो ईंटें भुरभुरी होकर अपने साधारण संगठन को भी खो बैठेंगी।

इन दो उपरोक्त उदाहरणों में समाज के संगठन का इतिहास छिपा हुआ है। पहले एक वंश के लोग आपस में संगठित होकर दूसरे वंश वालों के साथ लड़ा करते थे। जब वंशवालों की अत्यन्त वृद्धि हुई और उनमें नये वंश मिल गये तो बलवान लोग अपना अपना दल बनाकर लूटमार के लिये संगठित होने लगे। साझी लूट, उनके संगठन का मूल तत्व बना। सदियों तक समाज इसी ढंग पर संगठित होता रहा। जब मज़हब ने समाज में दख़ल किया, तो मज़हबी लीडरों ने परलोक की अज्ञात बातों के आदर्श जनता को दिखलाकर, उनका संगठन करना प्रारम्भ किया। लूटमार के संगठन से यह संगठन अधिक

शक्ति शाली बना और इसने प्रचण्ड आँधी और तूफ़ानों जैसा संहारक काम किया। ईश्वर और स्वर्ग की प्राप्ति के लोभ के वशीभूत होकर मूर्ख जनता पागलों की तरह मज़हबी लीडरों के पीछे चली और दुनियाँ में मज़हबी संगठन की प्रचण्ड ज्वाला भड़क उठी। उस ज्वाला ने जहाँ दूसरों को भस्म कर दिया वहाँ भड़काने वाले संगठन को भी जला दिया। कुछ शताब्दियों के भीतर ही मज़हबी संगठन अपनी सारी शक्ति खोकर नपुंसक बन बैठा और समाज को स्वाभाविक संगठन करने वाले तत्व की खोज करनी पड़ी। पाश्चात्य देश के विद्वानों ने क़ौम परस्ती के आदर्श को संगठन का मूलतत्व बनाया और उसमें साम्राज्यवाद (Imperialism) को ख़ास स्थान दिया। भिन्न भिन्न देशों के रहने वाले लोग साम्राज्यवाद के नशे में मस्त हो गये और उन्होंने मज़हबी पक्षपात को छोड़ कर राष्ट्रीयता के पक्षपात को ग्रहण किया। जातियाँ मशीनें बन गईं और उन्हें साम्राज्यवाद की आग से संगठित कर क़ौमी लीडरों ने दूसरी कमज़ोर जातियों पर विजय प्राप्त की। आज संसार की सभ्य जातियाँ क़ौम परस्ती और साम्राज्यवाद के आदर्शों से संगठित हो रही हैं।

अब यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि समाज की बिखरी हुई शक्तियों को संगठित करने के लिये किसी मूलतत्व की आवश्यकता है और वह मूलतत्व आग है। यह आग बिना किसी आदर्श के पैदा नहीं हो सकती, अतएव समाज के सामने ज़बर्दस्त आदर्श रखना आवश्यक है। मायावाद के गढ़े में गिरी हुई हिन्दू समाज के पास किसी प्रकार का आदर्श नहीं रहा। वह संसार को मिथ्या समझती है और संसार को मिथ्या समझने वाली जनता आपस में संगठित क्यों होगी? मायावाद

ने हिन्दू समाज के संगठन का सीमेन्ट नष्ट कर दिया है। यही कारण है कि हिन्दू जाति के पास सब साधन होते हुए भी उसका संगठन अत्यन्त कठिन हो रहा है। तो फिर करना क्या चाहिये? भारत के तेईस करोड़ हिन्दुओं को एक ज़बर्दस्त आदर्श की ज़रूरत है—ऐसा आदर्श जो इनमें प्रचण्ड ज्वाला उत्पन्न करे। ऐसे आदर्श के बिना हिन्दू-संगठन नहीं हो सकता। छत्रपति शिवाजी महाराज ने अपने काल के हिन्दुओं के सामने एक आदर्श रखा था, पञ्जाब के हिन्दुओं को गुरुगोविन्द-सिंह जी ने एक आदर्श की आग से फूँक दिया था, उन्नीसवीं सदी में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने एक आदर्श को सामने रखकर आर्य-समाज का संगठन किया था, आदर्श रखने वाले इन्हीं हिन्दुओं में संगठन की चिनगारियाँ मौजूद हैं, इसलिये यह परमावश्यक है कि यदि हम तेईस करोड़ हिन्दुओं का संगठन करना चाहते हैं, तो हमें हिन्दू-समाज के सामने एक ऐसा आदर्श रखना चाहिये कि जिसमें साम्प्रदायिकता की गंध भी न हो, और जो सब सम्प्रदायों के हिन्दुओं को कठोर संगठन के सीमेन्ट से जोड़ दे; जो हिन्दुओं के मस्तिष्क में अग्नि प्रज्वलित कर दे, और जो उन्हें निर्भय बना दे। ऐसा आदर्श पाये बिना, हिन्दुओं का संगठन होना असम्भव है। इस संगठन के बिगुल में हमने उस आदर्श को अपने देश-वासियों के सामने रखा है। पाठक आगे चलकर बिगुल की ध्वनि के साथ उस आदर्श के प्रकाश को देखेंगे।

छठीं आवाज़

स्वराज्य की लड़ाई

ईसा की बीसवीं सदी के शुरू में भारतवर्ष में नये युग का आरम्भ हुआ। स्वर्गीय दादा भाई नौरोजी के प्रताप से देश की राजनीतिक परिभाषा में स्वराज्य शब्द को स्थान मिला। अङ्गरेज़ी इतिहास के प्रचार से शिक्षित समुदाय में स्वतन्त्रता के विचारों का समावेश हो चुका था, अतएव बंगाल के नव-युवकों ने बहुत शीघ्र देश को स्वतन्त्र करने की ठानी। देश का वातावरण बदल गया। अखिल भारतवर्षीय राष्ट्रीय महासभा में क़ौमपरस्त पार्टी का ज़ोर बढ़ा। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने अपने चालीस वर्ष के परिश्रम से जनता को राष्ट्र-धर्म की शिक्षा दी और अपने अतुल परिश्रम से राष्ट्रीय महासभा को एक राष्ट्रीय शक्ति बना दी। सन् १९१६ की लखनऊ कांग्रेस में पहिली वार हिन्दू मुसलमान एक प्लेटफ़ार्म पर इकट्ठे हुए, और दोनों ने मिल कर देश का ध्येय स्वराज्य निश्चित किया। हिन्दू नेताओं ने मुलसमानों के साथ राजनीतिक समझौता कर डाला और यह सोचा कि इस प्रकार समझौता कर लेने से स्वराज्य जल्दी मिल जायगा। मिसेज़ बीसेण्ट की अध्यक्षता में और लोकमान्य जी के सहयोग से स्वराज्य प्राप्ति की नई प्रगति शुरू हुई और देश में .खूब आन्दोलन आरम्भ हुआ।

योरुप का महायुद्ध इन दिनों चल रहा था। ब्रिटिश सरकार घोर संकट में फँसी हुई थी। भारत के राजनीतिज्ञों ने यह समझा, कि संकट में फँसी हुई सरकार की सहायता करना सच्ची राज-भक्ति है, और इसका फलस्वरूप अधिकारों की प्राप्ति

होगा। सब जी जान से गवर्नमेंट की सहायता करने में लगे। सबने अपनी अपनी शक्ति अनुसार सरकार की मदद की। मौलवी-मुल्लाओं, पंडित और पुरोहितों ने अपनी अपनी मसजिदों और मन्दिरों में नौकरशाही की विजय के लिए प्रार्थनायें कीं। ईश्वर ने सन्तुष्ट होकर वर दिया और ब्रिटिश जाति विजय पताका उड़ाती हुई मैदान से निकली।

दैव की विचित्र गति है। मनुष्य सोचता कुछ है और होता कुछ है। नौकरशाही की मदद करने का पुरस्कार हिन्दुओं को पंजाब का हत्याकांड मिला और मुसलमानों को ख़िलाफ़त की झंझट। बेचारे ग़रीब मुसलमानों के अस्सी लाख रुपये उस झंझट में पट हो गए। अब लगा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य होने। लोकमान्य तिलक अपना कर्तव्य-पालन कर स्वर्ग सिधार गये और पुरुष-श्रेष्ठ महात्मा गांधी जी ने देश का नेतृत्व अपने हाथ में लिया। भारतवर्ष के आधुनिक इतिहास में पहिली बार जन साधारण को अपने मन का नेता मिला, और ऐसा नेता जो ज़नता की नब्ज़ पहिचानने वाला हो। महात्मा गाँधी जी ने अनुभव किया कि देश में क्रान्ति का समय आ गया है। उन्होंने स्वराज्य-प्राप्ति के लिए नौकरशाही से युद्ध करने की ठानी। अंग्रेज़ी-शासन काल में यह पहिला अवसर था, कि जब देश की सारी जनता ने, सभी सम्प्रदायों के लोगों ने, एक नेता के अधीन होकर एक मन से स्वराज्य-प्राप्ति के लिये यत्न किया। शान्तिमय असहयोग की ध्वनि भारतवर्ष के एक कोने से दूसरे कोने तक गूँज उठी। ख़िलाफत के दुःख के कारण मुसलमान महात्मा जी के साथ हो गये और उसी के सहारे बड़े-बड़े कट्टर मौलवी-मुल्ला महात्मा गांधी जी के साथ घूम घूम कर मुसलमान जानता को नौकरशाही के विरुद्ध उभारने लगे। सन् १९२१

का वर्ष भारतवर्ष के इतिहास में सोने के अक्षरों में लिखा जाएगा और उसकी कथा महात्मा गांधी जी की दिग्विजय की कथा होगी। धन्य हैं वे लोग जिन्होंने वह वर्ष देखा, और अपनी शक्ति भर स्वार्थ त्याग कर देश के लिये उस समय कुछ काम किया। आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित, वैज्ञानिक साधन से सुसंगठित, अंग्रेज़ जाति शान्तिमय असहयोग के विलक्षण चमत्कार को देख कर काँप उठी। महात्मा गांधी जी का नाम सारे सभ्य संसार में प्रख्यात हो गया।

शान्तिमय असहयोग की यह लड़ाई, भारतवर्ष के इतिहास में बड़ा ऊँचा दर्जा पाएगी, हमें इस में रत्ती भर भी सन्देह नहीं। यदि महात्मा गांधी जी अहमदाबाद कांग्रेस के बाद अपना पैर बढ़ाये चले जाते, और बारडोली में आकर न झिझकते, तो भारतवर्ष का राजनीतिक इतिहास आज दूसरा ही हो जाता। बारडोली में की गई महात्मा गांधी जी की इस गलती को हम उनके जीवन की सब से बड़ी गलती मानते हैं। देश में इतनी प्रचण्ड अग्नि प्रज्वलित कर, हिन्दू मुसलमानों को दीवानेपन के दर्जे तक पहुँचा, नौकरशाही को युद्ध की घोषणा दे, फिर पीछे हट जाना, यह ऐसा अपराध है कि जिसे इतिहासकार कभी भी क्षमा नहीं करेंगे। स्वराज्य की इस लड़ाई में हिंसा और अहिंसा की बारीकियों में फँस कर, सेनापति का शस्त्र डाल देना, ऐसी दर्दनाक घटना है कि जिसे स्मरण करते ही हाथ मलते रह जाना पड़ता है।

लोग हम से पूछेंगे कि क्या बारडोली की लड़ाई चला देने से भारतवर्ष को स्वराज्य मिल जाता? इस प्रश्न का उत्तर देना आवश्यक है। हमने यह कभी नहीं माना कि भारतवर्ष को एक वर्ष में स्वराज्य मिल सकता था, या बारडोली की लड़ाई

जारी करने से भारतवर्ष को स्वराज्य मिल जाता, पर हमारा कथन केवल यह है कि जिन ढंगों से हिन्दू मुस्लिम जनता का स्वराज्य के लिये जोश दिलाया गया था, जिन मिथ्या विश्वासों के सहारे जनता में क्रान्ति की आग फूँकी गई थी, जिन मौलवी-मुल्लाओं की सहायता से मुसलमानों को मज़हबी दीवाना बना दिया गया था—उन सब उद्योगों का परिणाम केवल क्रान्ति हो सकता था, और उस क्रान्ति से हिन्दू मुसलमानों के साझे ज़ख्म हो सकते थे, और वे साझे घाव हिन्दू मुस्लिम ऐक्य की सीमेंट बन जाते उस हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य की नींव पर राष्ट्र-धर्म का उत्थान हो सकता था, और तब देश में स्वराज्य प्राप्ति के लिये युद्ध का बिगुल बजता। शान्तिमय असहयोग द्वारा पैदा की हुई शक्ति का, इसके सिवाय दूसरा कोई भी उपयोग हो नहीं सकता था; क्योंकि हिन्दू-मुसलमानों का वह ऐक्य सच्चा नहीं था, और न हिन्दू जनता में स्वराज्य प्राप्ति के लिये सच्चा संगठन ही हुआ था। यदि महात्मा गांधी जी राजनीतिक क्षेत्र में लोकमान्य तिलक जी की तरह, स्वाभाविक चाल से चलते और मौलवी-मुल्लाओं को राजनीतिक क्षेत्र में न लाते तो देश को स्वराज्य प्राप्ति का सीधा सरल मार्ग मिलता, और जो नई समस्यायें हिन्दू और मुसलमानों के बीच में अब खड़ी हो गई हैं, वे कदापि न होतीं।

ख़ैर, जो हुआ सो हुआ। महात्मा गांधी वर्तमान काल में संसार के एक विख्यात महापुरुष हैं। उन्होंने हमें यह सिखला दिया है, कि यदि राजनीतिक क्षेत्र में सच्चे, सच्चरित्र, स्वार्थत्यागी और विरक्त नेता खड़े हो जाँय, तो भारतवर्ष की जनता स्वराज्यप्राप्ति की कठिन कामना को सिद्ध करके दिखला सकती है। स्वराज्य की इस लड़ाई से हमें यह शिक्षा मिलती है कि

देश में सामग्री की कमी नहीं, केवल देश की आत्मा को समझने वाले निर्भीक नेता चाहियें।

सातवीं आवाज़

स्वराज्य की समस्या

पंजाब के हत्याकाण्ड को लोग भूल गये; ख़िलाफ़त का प्रश्न मिट गया; बारडोली की लड़ाई का स्वप्न पुराना हो गया; महात्मा गांधी जी राजनीतिक क्षेत्र से हट गये। आइये, अब हम बैठ कर गम्भीरता से स्वराज्य की समस्या पर विचार करें, और पिछले शान्तिमय असहयोग की लड़ाई में की गई भूलों की पड़ताल करें। अब अपना पिछला बही खाता मिलाने की ज़रूरत है ताकि भविष्य में दुबारा ग़लतियाँ न हों।

अब यह बात स्पष्ट है कि सन् १९२१ में हिन्दू मुसलमानों का ऐक्य केवल नशे का ऐक्य था। हिन्दू नौकरशाही से पंजाब-हत्याकाण्ड के कारण अत्यन्त रुष्ट थे, और मुसलमान ख़िलाफ़त के कारण मौलवी-मुल्लाओं के बहकाने से भारत सरकार के बर्ख़िलाफ़ बना दिये गये थे। ऐसे ऐक्य से कभी किसी देश में स्वराज्य की लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती; हाँ, केवल थोड़े समय की क्रान्ति की जा सकती है। स्वराज्य की लड़ाई मानवी अधिकारों की रक्षा की लड़ाई है; यह राष्ट्र के स्वाभाविक जीवन बनाने का संकल्प है; यह देश की सभ्यता और उसके आदर्शों की रक्षा का युद्ध है, ऐसा युद्ध स्वाधीनता के लिये ठोस संगठन के बिना नहीं किया जा

सकता। मुसलमानों में स्वतंत्रता के लिये प्रेम पैदा ही नहीं किया गया और न वे भारतवर्ष को अपनी मातृभूमि ही समझते हैं। वे अब तक अरब की भाषा में नमाज़ पढ़ते और कलमा बोलते हैं। उनके लीडर उनको सदा अन्तोलिया, स्मरना, मक्का, मदीना और कुस्तुन्तुनियाँ की बातें सुनाते रहते हैं। मुसलमानों के सभी त्योहार विदेशी रंग से रंगे हुए हैं और उन्होंने अब तक हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय त्योहारों को मनाना नहीं सीखा। ऐसी दशा में स्वराज्य के लिये हिन्दू मुस्लिम ऐक्य का ख़याल मृगतृष्णावत् है। साझी घृणा के आधार पर स्वराज्य की लड़ाई लड़ने की कोशिश कभी सफल नहीं हो सकती और न अङ्गरेज़ी सरकार के ख़िलाफ़ झूठी बातें उड़ाने से हमारा कोई अर्थ सिद्ध हो सकता है। हम इन सब बातों को अधिक स्पष्ट करते हैं।

ईसा की सत्रहवीं और अठारहवीं सदी के अन्त तक, संसार की राजनीतिक दशा, एक प्रकार का जुआ था। बादशाहों के मरने पर राज्य क्रान्तियाँ हो जाया करती थीं, राज्य घरानों के आपस के विवाह बड़े बड़े युद्ध करा देते थे; साहसी और पराक्रमी पुरुष, सेना को वश में कर, राज्य के मालिक बन बैठते थे, ऐसा समय अब दूर चला गया। जिस समय फ्रांस में भीषण राज्यक्रान्ति हुई, तो संसार में एक नये धर्म का प्रादुर्भाव हुआ, और वह है राष्ट्रधर्म। यूरुप में शासन इसी धर्म के अनुसार होता है, अर्थात् प्रजा बहुत दर्जे तक राज्य की मालिक बन गई है। यदि आज हम अपने देश की स्वाधीनता के लिये यत्न करना चाहते हैं, तो हमें यह याद रखना चाहिये, कि हमारे देश पर ब्रिटिश राष्ट्र शासन कर रहा है। यह मुट्ठी भर जो अङ्गरेज़ भारतवर्ष में दिखाई देते हैं वे केवल ब्रिटिश राष्ट्र की

मशीन के अङ्ग हैं। आज इङ्गलिस्तान के बादशाहों के मरने पर या वहाँ के किसी बड़े सेनापति की हत्या से, देश में विप्लव नहीं हो सकता, क्योंकि राजनीति ने संगठन का रूप धारण कर लिया है। यदि हम किसी प्रकार भारत में शासन करने वाले मुट्ठी भर अङ्गरेज़ों को दूर कर दें, तो भी यह देश स्वाधीन नहीं हो सकता क्योंकि ब्रिटिश राष्ट्र इससे अधिक और आद-मियों को शासन करने के लिये यहाँ भेज सकता है अतएव हमें आधुनिक राजनीतिक समस्याओं को भली प्रकार समझ लेना चाहिए, शेख़चिल्ली की तरह बातें फ़र्ज़ कर लेने से काम नहीं चलेगा। अपने देश के तीस करोड़ लोगों की प्रारब्ध के साथ, हम फ़र्ज़ी बातों के सहारे जुआ नहीं खेल सकते। राजनीति ठोस चीज़ है। यह इल्हाम या फ़िलासफ़ी नहीं कि जिसका अर्थ रबर की तरह खींचा जा सके। योरुप में राष्ट्रीयता के अनुसार संगठन है। उस संगठन का मुक़ाबिला संगठन से ही किया जा सकेगा। क्या मुसलमान और हिन्दू मिलकर राष्ट्र संगठन कर सकते हैं? थोड़ा इस पर भी सुनिये।

पिछले शान्तिमय असहयोग के युद्ध में हमने मौलवी मुल्लाओं को अपने साथ ले लिया था, यह हमारी बड़ी भारी भूल थी क्योंकि इस्लामी मज़हब के ये पण्डित, आज़ादी किस चिड़िया का नाम है, नहीं जानते। इनके ख़्याल के मुताबिक़ यदि कोई मुसलमान इस्लाम को छोड़ कर दूसरा मज़हब अख़्ति-यार कर ले, तो वह क़तल के योग्य हो जाता है। भूपाल की मुसलमानी रियासत में इसी सिद्धान्त के अनुसार अपना मज़-हब छोड़ने वाले मुसलमान को तीन वर्ष की कड़ी क़ैद का हुक्म है; चूंकि मुसलमानी रियासतें ब्रिटिश शासन के अधीन होने के कारण मुतिद (जो इस्लाम मज़हब से इनकारी हो)

को फाँसी पर नहीं लटका सकतीं, इसलिए उन्होंने क़ैद की सज़ा रक्खी है, लेकिन अफ़ग़ानिस्तान में, जहाँ मुसलमानों का स्वतन्त्र राज्य है, मुर्तिद को बीच शहर में सब जनता के सामने, पत्थरों से मार दिया जाता है। भारतीय मुसलमानों में क़ौमी आज़ादी का स्पर्श भी नहीं हुआ। अफ़ग़ानिस्तान में मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी के चेलों को, थोड़े से मज़हबी मतभेद के कारण, पत्थरों से मार दिया गया, और हिन्दुस्तान के बड़े बड़े मौलवी-मुल्लाओं ने अमीर क़ाबुल को इस पैशाचिक कर्म के लिए बधाई के तार भेजे। भला ऐसे लोगों के साथ मिल कर आज़ादी की लड़ाई लड़ी जा सकती है?

और सुनिए। स्वराज्य की समस्या पर विचार करते समय हमें सब बातें साफ़ साफ़ देख लेनी चाहिएँ। पहिली बात तो यह है, कि भारतवर्ष में जो इस्लाम का स्वरूप जनता को बतलाया जाता है, वह बड़ा संकुचित और भयङ्कर है। उसमें आज़ादी हासिल करने के सामान नहीं हैं। उसमें से स्वतन्त्र विचार-वाले महापुरुष पैदा नहीं हो सकते; किसी प्रकार की वैज्ञानिक उन्नति उससे हो नहीं सकती। इस्लाम हिन्दुस्तान में आज़ादी की लड़ाई तभी लड़ सकता है, जब वह अपने मज़हबी दीवानापन को छोड़ कर, अपनी संकुचित बातों पर हड़ताल लगा, बुद्धिवाद के स्वरूप को ग्रहण कर ले। क्योंकि इस्लामी मज़हब में मुसलमान के सिवाय दूसरे किसी के लिये बराबरी का स्थान नहीं, और इस्लाम के फैलाने में सब प्रकार के सम्भव उपायों का अवलम्बन करना मुसलमानों में बुरा नहीं समझा जाता, अतएव हिन्दुस्तानी मुसलमानों में क़ौमी आज़ादी के अर्थ ईसाई, पारसी, सिक्ख और हिन्दुओं को मिटा देना है, क्योंकि इस्लामी मज़हब के अनुसार मुसलमानों पर

.कुरान के क़ानून के अनुसार ही हुकूमत हो सकती है और दूसरे मज़हब वाले केवल मुसलमानों के आधीन होकर रह सकते हैं—उन्हें बराबर का दर्जा नहीं मिल सकता। पर्दे के कारण इस्लाम में औरतों को भी बराबर के अधिकार नहीं दिए जाते। धार्मिक सहनशीलता के बिना किसी समाज में समता (Equality) के भाव नहीं आ सकते, और मुसलमानों में धार्मिक सहनशीलता आ नहीं सकती, जब तक कि उनमें मज़हबी क्रान्ति न हो जाय, और .कुरान की व्याख्या, बुद्धिवाद (Rationalism) और राष्ट्रवाद (Nationalism) के अनुकूल न की जाय। काम कठिन है, पर इसे करना ही पड़ेगा। भारतीय मुसलमानों को बुद्धिवाद के रास्ते पर लाये बिना, हिन्दुस्तान को शान्ति नहीं मिल सकती। मुसलमानी मज़हब की भित्ति अन्ध विश्वास (Blind faith) पर अवलम्बित है। जो मुसलमान है, उसके लिये सब कुछ है; और जो मुसलमान नहीं है उसके लिये दोज़ख़ है; वह काफ़िर है; दण्ड देने लायक़ है; उसे किसी न किसी उपाय से—ज़ोर, धोखे, लोभ,—सभी उपायों से मुसलमान बनाना चाहिए। यह सिद्धान्त जो हिन्दुस्तानी मुसलमान मानते रहेंगे उनके साथ कभी भी किसी स्वतन्त्रता-प्रिय मनुष्य की एकता नहीं हो सकेगी। मुसलमानों को साथ लेकर केवल वैध आन्दोलन से थोड़े वहुत अधिकार नौकरशाही से लिये जा सकते हैं, किन्तु एक राष्ट्र वनाने का मार्ग दूसरा ही होगा।

वह मार्ग कौन सा है? इसकी विवेचना विस्तार पूर्वक हम इस पुस्तक के अगले खण्डों में करेंगे। पाठक दत्तचित्त होकर विगुल की आवाज़ों को प्रेम पूर्वक सुनते जाइए।

आठवीं आवाज़

बीसवीं सदी में हिन्दू संगठन

ईसा की बीसवीं सदी के २६ वर्ष वीत गये। संसार की सभ्य जातियाँ राष्ट्र-धर्म के पवित्र आदर्श को समझने की चेष्टा कर रही हैं और उसके अनुसार जन साधारण को शिक्षा देने की आयोजना हो रही है। ऐसे युग में हिन्दू सङ्गठन की प्रगति भारतवर्ष में क्यों उठ रही है? भारतवर्ष को तो फिरकेदारान झगड़े मिटा कर एक क़ौम बनाने की आवश्यकता है, उसके विपरीत हिन्दू सङ्गठन का आन्दोलन क्यों उठाया जा रहा है? क्या हिन्दू सङ्गठन का आन्दोलन राष्ट्रीयता के मार्ग में बाधक न बनेगा?

इन प्रश्नों का उत्तर ध्यान से सुनिये।

अंग्रेज़ों के भारतवर्ष में साम्राज्य स्थापित करने से पहिले इस देश में हिन्दुओं की प्रभुता थी। एक तरफ़ महाराष्ट्र फ़ौजें विजय पताका उड़ाती हुई अपना साम्राज्य बढ़ा रही थीं और दूसरी ओर दुर्दमनीय पंजाबी हिन्दू अफ़गानिस्तान के दाँत खट्टे कर रहे थे। यदि इन वीर हिन्दुओं को एक शताब्दी का समय और मिल जाता तो हिन्दू मुसलमानों का झगड़ा सदा के लिये तै हो जाता और कोई भी विदेशी राष्ट्र भारतवर्ष पर हमला करने का साहस न कर सकता, भारतवर्ष के हिन्दुओं को अपना सम्मिलित संगठन करने का अवसर नहीं मिला और न वे मुसलमानों को को क़ौम परस्त बना सके। मुसलमान और हिन्दुओं का आपस में आख़िरी युद्ध न हो सका, इसी कारण भारतवर्ष के मुसलमान अधकचरे रह गये; न वे पूरे हिन्दु-

स्तानी ही बन सके और न विदेशी ही। जब अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार भारत में हुआ तो पढ़े लिखे मुसलमान क़ौम परस्त बनने की बजाय विदेशी मुग़ल और पठानों के साथ अपना नाता जोड़ने लगे और झूठा गर्व दिखला कर यह कहने लगे कि उनके बुज़ुर्गों का राज्य हिन्दुस्तान में सदियों तक रहा है। जिन तुर्की आक्रमण कारियों ने हिन्दुस्तान को पद दलित किया था, उन्हीं की प्रशंसा के गीत गाकर मुसलमान नेता अपना दिल ख़ुश करने लगे। उन्होंने यह कभी न सोचा कि हिन्दुस्तानी मुसलमानों ने कभी भी अपना राज्य भारत में किया या नहीं किया। जिन मुग़लों और पठानों ने भारत के भिन्न भिन्न प्रान्तों पर शासन किया था, वे यहाँ के निवासी नहीं थे और उनके वंशजों का नामोनिशान भी बाकी नहीं रहा। यदि कुछ वर्षों बाद अंग्रेज़ यहाँ से चले जायं तो क्या हमारे कालेकलूटे भङ्गी और चमार, जो आज हज़ारों की संख्या में ईसाई बन गये हैं, यह बात गर्व से कह सकेंगे कि उनके मुट्ठीभर बुज़ुर्गों ने हिन्दू मुसलमानों पर शासन किया था। क्या उनका इङ्गलिस्तान के अंग्रेज़ों के साथ नाता जोड़ना उनके लिये शोभा देगा? क्या वे लार्ड क्लाईव और वार्न हेस्टिंग्स के गीत गाकर अपने आपको अंग्रेज बना सकेंगे? हिन्दुस्तान के मुसलमानों को यह बात भली प्रकार जान लेनी चाहिये कि उनके बुज़ुर्ग मुग़ल और पठान नहीं थे, बल्कि वही हिन्दू थे कि जिन्होंने विदेशियों के अत्याचार के समय अपनी जान बचाने के लिये विदेशी धर्म स्वीकार कर लिया था। क्या इटलीवाले नेपोलियन की विजयों के गीत गाकर अपनी इज़्ज़त बढ़ा सकते हैं? या जर्मन लोग अंग्रेज़ों की विजयों पर अभिमान कर सकते हैं? फ्रांस और इटली का मज़हब एक

है; जर्मनी और इंगलैण्ड का भी मज़हब एक ही है, लेकिन ये जातियाँ कभी भी अपने बच्चों को दूसरी हम मज़हब क़ौमों के गीत नहीं सुनातीं। वे जानतीं हैं कि मज़हब का सम्बन्ध मनुष्य के अपने हृदय के साथ है, क़ौम का हित व्यक्ति के हित से बहुत ऊँचा है, इसलिए अंग्रेज़ इंगलिस्तान के हित के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर देते हैं।

अच्छा तो इस बीसवीं सदी में हिन्दू सङ्गठन की प्रगति क्यों चली? इसका उत्तर यही है कि भारत के मुसलमान मूर्खता वश विदेशी मुसलमानों से नाता जोड़ रहे हैं, और हिन्दुओं के विरुद्ध देश द्रोही आन्दोलन खड़े कर रहें हैं। अंतर्राष्ट्रीय-राज नैतिक परिस्थिति दिन प्रतिदिन विकट रूप धारण कर रही है। इंगिलस्तान की समस्यायें योरुप की प्रारब्ध के साथ बँधी हुई हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि राजनीतिज्ञ अंग्रेज़ अधिकारी संसार की गति को समझ कर अपना उचित प्रबंध कर रहें हैं, लेकिन हमें भी तो अपना कुछ फिकर करना चाहिये। हमारा भी तो कुछ उत्तरदायित्व भावी सन्तान के सामने है। हमें भी तो यह सोच लेना चाहिये कि यदि आशा विरुद्ध घटना घट जाय और इंगलिस्तान के जंगी जहाज़ों और आकाश विमानों को क्षति पहुंच जाय तो ऐसी अवस्था में हमारे देश की क्या दशा होगी। मुसलमान नेता तो अफ़गानिस्तान की ओर देख रहे हैं और अफ़गानिस्तान को सरहद्दी सूबे और सिन्ध की अत्यन्त आवश्यकता है, इस कारण वह औसर पाते ही भारतवर्ष पर आक्रमण करेगा। रूस की बोल्शेविक सेना इंगलिस्तान के विरुद्ध सब प्रकार के मनसूबे लड़ा रही है और इस बात की ताक में है कि मौक़ा मिलते ही हिन्दुस्तान पर चढ़ दौड़े, ता कि इंगलिस्तान का साम्राज्य नष्ट

भ्रष्ट होजाय यदि ऐसा विकट समय उपस्थित हो गया तो उस समय हिन्दुस्तान के हिन्दुओं की क्या दशा होगी ? आज प्रारब्ध के भरोसे बैठे रहने का समय नहीं। हमारा एक एक क्षण अत्यन्त मूल्यवान है। हमें चाहिये कि जितनी जल्दी हो सके हिन्दुओं का संगठन करें। मुसलमान नेता बड़े अदूरदर्शी हैं, ये थोड़ी सी उथल पथल होते ही मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध भड़काने की चेष्टा करेंगे, और उपस्थित आँधी से लाभ उठाने का उद्योग करेंगे।

तो फिर करना क्या चाहिये ? बीसवीं सदी का हिन्दू सङ्गठन दो महत्व पूर्ण काम करना चाहता है—एक तो वह हिन्दुओं में ज़बर्दस्त सामाजिक क्रान्ति करेगा और दूसरे मुसलमानों में बुद्धिवाद फैला कर मज़हबी क्रान्ति लाएगा। इन दो क्रान्तियों के बिना भारत का भविष्य सुधर नहीं सकता। अब हम अगली आवाज़ में हिन्दू सङ्गठन का उद्देश्य विस्तार से बतलाते हैं, तत्पश्चात् क्रान्ति का बिगुल बजाएँगे।

नवीं आवाज़

हिन्दू संगठन का उद्देश्य

४० वर्ष हुए कि हिन्दुस्तान के हिन्दू नेताओं ने अपने देश की राजनीतिक परिस्थिति को सुधारने तथा अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए अखिल भारतवर्षीय राष्ट्रीय महासभा की बुनियाद डाली थी। देश के बड़े बड़े समझदार नेताओं ने हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई आदि सभी सम्प्रदायों के लोगों को एक कर ब्रिटिश गवर्नमेंट से देश की जनता के हक़ लेने

की आयोजना की थी। वे समझते थे कि सब मज़हबों के शिक्षित लोगों को एक कर वे धीरे धीरे अंग्रेज़ी पार्लीमेंट से भारतवर्ष के लिए स्वराज्य की प्राप्ति कर सकेंगे। बीस वर्ष तक नेताओं ने हिन्दू मुसलमानों को आपस में मिलाने का बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु कृतकार्य्य न हुए। स्वर्गीय दादा भाई नौरोजी, माननीय गोखले, तथा सर फीरोज़शाह मेहता जैसे कुशल राजनीतिज्ञ भी मुसलमानों को ख़ुश न कर सके, परन्तु हिन्दू मुसलिम ऐक्य का उद्योग बराबर जारी रहा। सन् १९१६ की लखनऊ कांग्रेस में पहली बार हिन्दू मुसलमानों का आपस में समझौता हुआ और लोकमान्य तिलक जी ने मुसलमानों को राज़ी करने के लिए फिरक़ों के जुदागाना प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया। तब से शिक्षित मुसलमान कांग्रेस में भाग लेने लगे। जब असहयोग का आन्दोलन आरम्भ हुआ तो महात्मा गान्धीजी ने हिन्दू मुस्लिम ऐक्य की ख़ातिर अपना सर्वस्व होम कर दिया। पर जब महात्माजी सन १९२२ में जेल चले गये तो हिन्दू मुसलमान आपस में बुरी तरह लड़ने लगे; एकता के लिए किया हुआ सारा पुरुषार्थ नष्ट हो गया और मुसलमान, हिन्दू नेताओं को बुरी तरह कोसने लगे और यह कहने लगे कि इण्डियन नेशनल कांग्रेस केवल हिन्दुओं की सभा है।

अब यहाँ पर यह विचारणीय प्रश्न है कि क्यों हमारे देश के बड़े बड़े बुद्धिमान राजनीतिज्ञ हिन्दू मुसलमानों की एकता स्थापित करने में कामयाब नहीं हुए? इसका उत्तर स्पष्ट है। हिन्दुस्तान में रहने वाले हिन्दू और मुसलमान अलग अलग कैम्पों में रहते हैं। उनका आपस में कोई सामाजिक सम्बन्ध नहीं और न उनके जीवनोद्देश्य आपस में मिलते हैं। मुसल-

मान एक ऐसी सभ्यता के मानने वाले हैं कि जिसका उद्गम भारतवर्ष से बाहर हुआ है और वे निरन्तर अपने बच्चों को हिन्दुस्तान से बाहर की बातों की गाथा सुनाते रहते हैं। उत्तर हिन्दुस्तान के मुसलमान नेताओं का सदा यह प्रयत्न रहा है कि मुसलमान जनता हिन्दू आदर्शों की विरोधी रहे और वे उन्हें हिन्दुओं से अलग रखने की यथासाध्य चेष्टा करते रहते हैं। यही कारण है कि हमारे बड़े बड़े नेता हिन्दू मुसलमानों को मिलाने में सफलता प्राप्त नहीं कर सके। दूसरी बात यह है कि यद्यपि हिन्दुओं की संख्या सर्व प्रधान तेईस करोड़ है, पर तो भी हिन्दुओं ने अपना संगठन कर राष्ट्रीयता की बातों का निश्चय नहीं किया। जब तक तेइस करोड़ हिन्दुओं का व्यक्तित्व निश्चित होकर हिन्दूपन के चमकते हुये चिन्ह राष्ट्रीयता का रूप धारण न कर लें, तब तक भारतवर्ष में एक जाति नहीं बन सकती। भारतवर्ष के हिन्दुओं ने अभी तक अपने स्वरूप को नहीं पहिचाना। जब तक वे घर के मालिक की तरह हिन्दुस्तान को अपना देश नहीं समझ लेते, जब तक अपनी सभ्यता का ज़बर्दस्त अभिमान उनमें नहीं आ जाता, जब तक वे विश्व बन्धुता के माया जाल से निकल कर अपने व्यक्तित्व को नहीं पहचान लेते तब तक भारतवर्ष में राष्ट्र-धर्म्म के लिए कोई स्थान नहीं है। मुसलमान तो विदेशी मज़हब, विदेशी सभ्यता और विदेशी देशों के गीत गावें, और हिन्दू जगत को मिथ्या मान कर विश्व-बन्धुता के राग अलापें, तो फिर देश में एक राष्ट्र का व्यक्तित्व कौन निश्चित करेगा? अपनत्व के बिना प्रेम उत्पन्न नहीं होता और प्रेम के बिना उच्च कोटि का बलिदान नहीं किया जा सकता, संगठन करने के लिये अपनत्व का ज़बर्दस्त

सीमेन्ट होना ही चाहिए, उसके बिना हिन्दुस्तान में एक जाति नहीं बन सकती। इसलिए यह स्पष्ट है कि हिन्दू मुस्लिम एकता का उद्योग करने से पहले हिन्दुओं में हिन्दूपन की ज्वाला प्रज्वलित कर उनका संगठन करना अत्यावश्यक है। जब तक हिन्दू जनता के अन्दर अपनी सभ्यता और आदर्शों की रक्षा की प्रबल इच्छा उत्पन्न नहीं होती, तब तक वे अपना संगठन नहीं कर सकते।

अतएव हिन्दू संगठन का मुख्य उद्देश्य हिन्दुओं को आत्म स्वरूप की पहिचान कराना है। जिस हिन्दूपन की ख़ातिर विक्रमादित्य के पौत्र ललितादित्य ने वर्बर जातियों के साथ घमासान युद्ध किया था, जिस हिन्दूपन के लिए बौद्धकाल के हिन्दुओं को बौद्धों के विरुद्ध आवाज़ उठानी पड़ी थी, जिस हिन्दूपन की ख़ातिर सिन्ध उत्तर पश्चिमीय सीमा के हिन्दू चार सौ बरस तक मुसलमानों के साथ युद्ध करते रहे, जिस हिन्दूपन के नशे ने दक्षिण भारत के विजय नगर के वीर हिन्दुओं को मुसलमानों के विरुद्ध ढाई सौ वर्ष तक खड़ा रक्खा था, जिस हिन्दूपन के अमृत ने सती साध्वी पद्मावती को आग में जलने के लिये वाध्य किया था, और जिस हिन्दूपन की दुर्दशा देख कर क्षत्रपति शिवाजी महाराज तथा वीर केशरी बुन्देले-छत्रशाल की आँखों में क्रोध की चिनगारियाँ उठी थीं वही हिन्दूपन जब तक भारतवर्ष के तेइस करोड़ हिन्दुओं में जागृत होकर एक व्यक्ति का रूप धारण नहीं कर लेता तब तक हिन्दू मुस्लिम एकता केवल मृग तृष्णावत है। यह हिन्दूपन अंग्रेज़ी अथवा मुसलमानी काल की चीज़ नहीं, इसकी उत्पत्ति उस समय हुई थी जब कि संसार की बाक़ी जातियाँ बिलकुल जंगली अवस्था में थीं। धीरे धीरे धैर्य्य और सन्तोष

से हमारे बुजुर्गों ने इस हिन्दूपन के व्यक्तित्व की नींव डाली थी और शताब्दियों, तक बड़े बड़े बलिदान इसको सुदृढ़ करने के लिए होते रहे। वही हिन्दूपन जब तक इस हिन्दुस्तान में जागृत नहीं होता तब तक राष्ट्रीयता के कुछ भी अर्थ हम लोग नहीं समझ सकते। "हम हिन्दू हैं, और हिन्दुस्तान हमारा देश है" इन शब्दों की दिव्य मूर्ति हमारे हृदय मन्दिर में जब तक विराजमान नहीं हो जाती तब तक हिन्दू संगठन कदापि नहीं हो सकता।

हिन्दू संगठन का उद्देश्य सब से पहिले भारत के तेइस करोड़ हिन्दुओं की सोई हुई आत्मा को चैतन्य करना है। आपस में एक दूसरे से छूत छात रखने वाले, वर्णों, उपवर्णों में बँटे हुए हिन्दू आपस में कभी संगठित नहीं हो सकते, जब तक कि उनके अन्दर हिन्दू संगठन की आवश्यकता का भार सिर से पैर तक न समा जाय। यह हमारा देश और हमारी जाति दुनिया में अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व रखती है जैसे प्रकृति में एक वृक्ष दूसरे वृक्ष से नहीं मिलता, वृक्ष के पत्ते आपस में एक दूसरे से नहीं मिलते, जैसे करोड़ों मनुष्य अपने शक्ल और स्वभाव से एक दूसरे से जुदा जुदा हैं इसी प्रकार क़ौमें एक दूसरे से अलग अलग हैं; और जैसे हर एक वृक्ष अलग अलग फल देता है, इसी प्रकार हर एक जाति के अलग अलग फल हैं; जैसे प्रत्येक मनुष्य और स्त्री के जीवन का मिशन उसकी योग्यता के अनुसार भिन्न है, उसी प्रकार हर एक क़ौम की ज़िन्दगी का मिशन जुदा जुदा है। लेकिन जैसे जुदा जुदा मिशन रखते हुए एक दूसरे के अधिकारों की रक्षा करते हुए समाज में सुख और शान्ति पूर्वक रहना, प्रत्येक सदस्य का धर्म है इसी प्रकार क़ौम को

दूसरी क़ौम के व्यक्तित्व का सन्मान करते हुए—उसके अधिकारों का आदर करते हुए—संसार में फूलना फलना उचित है। संक्षेप में कहने का अभिप्राय यह है कि जैसे प्रकृति में विभिन्नता होते हुए भी एक लक्ष्य की पूर्ति की जाती है इसी प्रकार संसार की क़ौमों को भी विभिन्नता में एकता स्थापित करनी चाहिए ताकि दुनिया में सुख और शान्ति फैले। प्राचीन काल के हिन्दुओं ने इसी आधार पर हिन्दूपन का व्यक्तित्व निश्चित किया था। वे विभिन्नता से एकता मानते थे। इसी सिद्धान्त को उन्होंने अपने अध्यात्म वाद में स्थान दिया और इसीके अनुसार उन्होंने जगन्नियन्ता के स्वरूप की विवेचना की। वे "जीओ और जीने दो" के सिद्धान्त को मानते थे इसीलिए उन्होंने सात्विक बातों की ओर अधिक ध्यान दिया।

उन्हीं सात्विक विचारों और संस्कारों के आधार पर इस देश में हिन्दू सभ्यता का विस्तार हुआ और उसी का वातावरण सारे देश में फैला। यदि हम आज अपने देश को स्वतन्त्र करना चाहते हैं तो हमारा यह कर्तव्य है कि हम अपने उस व्यक्तित्व को पहिचान कर अपने राष्ट्र-धर्म्म की बुनियाद डालें ताकि मुसलमान और ईसाई हमारे पीछे चल सकें। यह काम केवल हिन्दू ही कर सकते हैं। क्योंकि उन्हींके पास इस देश का पिछला हिन्दूपन का ख़ज़ाना है। जब तेइस करोड़ हिन्दू संगठित होकर एक हो जाएँगे, जब वे अपना छूत छात और जातपाँत की दीवारों को तोड़ कर एक जाति में बद्ध होंगे, जब वे खुला सामाजिक जीवन धारण कर हिन्दू मात्र को अपनाने लगेंगे तो इस देश में हिन्दू सभ्यता के सद्गुणों का चमत्कार दिखलाई देने लगेगा। जब प्रत्येक

हिन्दू बालक बालिका हिन्दुस्तान को अपना देश समझ कर उसके मान की रक्षा के हेतु अपना बल बढ़ाएगा, जब देश के चारों तरफ़ स्वतन्त्र हिन्दू जाति की ज़बर्दस्त इच्छा उत्पन्न होगी, जब क्षात्र-धर्म्म के तेज से हिन्दू नवयुवकों के चेहरे चमकने लगेंगे, जब हिन्दू स्त्रियाँ निर्भय होकर गुण्डों को दण्ड दे सकेंगी, तभी हिन्दू संगठन का आन्दोलन सफल समझा जाएगा। हिन्दू संगठन यह चाहता है कि सब से पहले इस देश के हिन्दुओं को हिन्दूपन का नशा चढ़े, ताकि वे संगठन की महिमा भली प्रकार समझ जाएँ। जब हिन्दू संगठित हो जाएँगे, जब उनमें दूसरों को हज़म करने की शक्ति आ जाएगी तो फिर हिन्दू मुस्लिम एकता आप ही आप हो सकेगी। अंग्रेज़ी राज्य की सवा सौ वर्ष की गुलामी से हम अपने हिन्दूपन के व्यक्तित्व को भूल गये हैं। अंग्रेज़ों ने हिन्दुओं के साथ लड़कर ही इस देश पर अपना प्रभुत्व जमाया है। अंग्रेज़ों से पहले इस देश में हिन्दू साम्राज्य की ध्वजा फहराती थी। महाराज पृथ्वीराज के समय से लेकर सन् १८४२ तक हिन्दू अपने हिन्दूपन की रक्षा के लिए बराबर लड़ते रहे। यदि वे एकबार भी संगठित होकर देश के शत्रुओं का मुक़ाबिला करते तो हिन्दुस्तान सदा के लिए स्वतन्त्र हो जाता। बस हिन्दुओं की भूल यही है कि उन्होंने कभी भी अपनी सारी शक्तियाँ संगठित करने की आवश्यकता का अनुभव नहीं किया। यह देश बहुत बड़ा है, इसीलिए अलग अलग प्रान्तों के हिन्दू राजा अपने आप को इतना काफ़ी बलशाली समझते थे। यही उनकी भूल थी। वही भूल अब तक हिन्दुओं में मौजूद है। हिन्दू संगठन उस भयङ्कर भूल को निकालने के लिए खड़ा हुआ और वह बड़े ज़ोर से इस बात की घोषणा करता है कि जब

तक तेईस करोड़ हिन्दू आपस में संगठित हो कर एक न हो जाएँगे तब तक हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता तथा हिन्दुओं का अस्तित्व सदा ख़तरे में रहेगा। अतएव प्रत्येक हिन्दू का यह कर्तव्य है कि इस संकट के समय हर सम्भव उपाय से हिन्दुओं के संगठन की चेष्टा करें और संगठन की विघातक सभी बातों को नष्ट भ्रष्ट कर दे।

यहाँ पर हम एक बात स्पष्ट रूप से कह देना चाहते हैं। हमारे कुछ बड़े बड़े हिन्दू नेता हिन्दू संगठन और हिन्दू महासभा के नाम का अनुचित लाभ लेकर म्युनिसिपलटी, डिस्ट्रिक्टबोर्ड, कौन्सिल और एसेम्बली में जाने के लिए हिन्दुओं की वोट लेना चाहते हैं और इसीलिये वे दिन रात दौड़ धूप कर हिन्दू सभाओं को अपने क़ब्ज़े में रखना चाहते हैं। हम ऐसे स्वार्थी और बेअसूले हिन्दू नेताओं के घोर विरोधी हैं। हिन्दू संगठन सरकार के इन जूठे टुकड़ों के लिये लड़ने के वास्ते नहीं किया जा रहा है। जो हिन्दूनेता हिन्दू हितों की रक्षा के लिए कौंसिलों में जाना चाहते हैं वे चुनाव के कुछ पहले हिन्दू वोटरों की कमेटियाँ बनाकर हिन्दू वोटरों को वोट की महिमा समझा सकते हैं। पर हिन्दू संगठन का लक्ष्य बड़ा ऊँचा और श्रेष्ठ है। यदि अदूरदर्शी हिन्दू नेता स्वार्थ के वशीभूत होकर हिन्दू महासभा को चुनाव की दलदल में डाल देंगे तो हिन्दू संगठन के आन्दोलन की हत्या हो जायगी। इसलिए हम अपने देश बन्धुओं को इस विषय में अत्यन्त सावधान करते हैं और उन्हें कहते हैं कि हिन्दू महासभा को हिन्दू समाज में क्रान्ति करने का साधन बनावें ताकि हमारी सामाजिक बुराइयाँ शीघ्र दूर हों और हम अपना संगठन जल्द कर सकें। हिन्दू संगठन का उद्देश्य कौन्सिलों और एसेम्बली में हिन्दुओं को बिठलाना

नहीं। इसका उद्देश्य हिन्दूपन की अग्नि प्रज्वलित करने का है ताकि राष्ट्र-धर्म का शुद्ध स्वरूप हिन्दू जनता के सामने आ जाए और हिन्दू इस देश को अपना मान कर इसकी स्वतन्त्रता के लिए अपना ज़बर्दस्त संघ स्थापित करें। हिन्दू संगठन हिन्दू सभ्यता के आधार पर स्वराज्य की स्थापना करना चाहता है और हिन्दू शब्द को इसके संकुचित दायरे से निकाल कर क़ौमियत के रंग में रंग देना चाहता है। ताकि मुसलमान और ईसाई अपना अपना मज़हब रखते हुए भी हिन्दू कहलाने में अपना गौरव समझें और देश की सारी आबादी हिन्दूपन से दीक्षित हो जाय। जैसे श्री गंगा जी की पवित्र धारा हिमालय से निकल कर मैदान में आती है और अपना बड़ा स्वरूप धारण कर गंगा सागर की ओर चल देती है, इसी प्रकार हिन्दू संगठन हिन्दुओं की मुख्यधारा बनाएगा। जैसे यमुना, सरयू और गंडक नदियाँ गंगा जी में मिलकर गंगावत हो जाती हैं इसी प्रकार इस देश में रहने वाले मुसलमान और ईसाई अपने मज़हबों को रखते हुए हिन्दू सभ्यता की गंगा जी में ऐसे मिल जाएँगे कि कोई बाहर का आदमी उन्हें हिन्दुओं से पृथक नहीं कह सकेगा। जैसे हिन्दुस्थान का वाईसराय—लार्ड रीडिङ्ग—यहूदी मज़हब रखता हुआ भी ब्रिटिश क़ौम की धारा में मिलकर ब्रिटिश कहलाता है इसी प्रकार ईसाई और मुसलमान अपना, भिन्न भिन्न मज़हब रखते हुए भी हिन्दू कहलायेंगे। हिन्दू संगठन का यही लक्ष्य है।

अच्छा अब हम सब से पहले हिन्दू समाज में क्रान्ति का बिगुल बजाते हैं, होशियार हो जाइए।

द्वितीय खण्ड

हिन्दू समाज में क्रान्ति

विषय सूची

दसवीं आवाज़

क्रान्ति

मेरा नाम क्रान्ति है। मैं पुरानी जर्जर, सड़ी गली और दक़ियानूसी बातों को जला कर भस्म कर देती हूँ, और नव जीवन का संचार करती हूँ। मैं अविरत यौवन का मूल कारण हूँ और बुढ़ापे का नाश करती हूँ, जहाँ मैं हूँ, वहीं ज़िन्दगी है; जहाँ मैं नहीं हूँ, वहीं मौत है। समाज के अत्याचारों से पीड़ित दुखी लोगों के लिये मैं आशा का पुञ्ज हूँ; मैं उनके अभ्युत्थान का सुखद स्वप्न हूँ। बुड्ढे मेरे डर से थर थर काँपते हैं, और जवान मेरा सहर्ष स्वागत करते हैं। जहाँ मेरी सवारी जाती है, वहाँ का कूड़ा करकट सब साफ़ हो जाता है, और दैवी प्रकाश की ज्योति जगमगाने लगती है। मैं समाज की ज़ंजीरों को तोड़ कर फेंक देती हूँ, और सताई हुई आत्माओं को सान्त्वना प्रदान करती हूँ। मैं दलितों की ज़ंजीरों को तोड़ कर, उन्हें उनके अधिकार दिलानेवाली हूँ; और उन्हें अमृतसुधा पान कराती हूँ।

मेरा नाम चण्डीभवानी है। मैं वर्तमान को मिटा कर भव्य भाग्यशाली भविष्य की रचना करती हूँ। यही जीवन का अनादि सिद्धान्त है और मैं उस अनादि नियम का पालन करती हूँ, ताकि समाज में ताज़गी और नवीन स्फूर्ति आवे।

मैं बसन्ती देवी हूँ। आँधी और तूफ़ानों द्वारा पुरानी चीज़ों को जड़ से हिला कर मैं नये युग के रंग विरंगे फूलों से संसार रूपी उद्यान को सुशोभित करती हूँ।

मेरा नाम पापनाशिनी दुर्गा है। मैं समाज की सभी कुरीतियों को मिटाने वाली हूँ, क्योंकि वे स्वार्थी और पापी लोगों

की चलाई हुई हैं। इन कुरीतियों का मूल पाप है, और इनके फल भी पापों की वृद्धि करने वाले हैं। इन कुरीतियों से समाज में घोर अत्याचार होता है, और बड़े बड़े अनर्थ इनके द्वारा हो रहे हैं।

सावधान हो जाओ! तुम्हारे पापों का घड़ा भर गया है। मैं पापियों को दण्ड देने वाली विकराल क्रान्ति हूँ। पापों की फ़सल काटने का समय आ गया; ऊँच नीच के भावों को मिटा देने का समय आ गया; अस्पृश्यता के नाश करने का समय आ गया; जात-पाँत के तोड़ने का समय आ गया; मेरा क्रान्ति का बिगुल है; मेरा सङ्गठन का शंख है। मैं सब प्रकार के पाखण्डों का नाश करने वाली हूँ; सब प्रकार के मिथ्या विश्वासों को मिटा देने वाली हूँ।

याद रखो मैं गुरुडम की घोर शत्रु हूँ। पाखण्डी मौलवी मुल्लाओं और धूर्त पण्डितों और पुरोहितों के लिये तो मैं भीषण काल हूं। मैं इल्हाम के प्रभुत्व को छिन्न भिन्न कर, बुद्धिवाद का साम्राज्य स्थापित करती हूं। मैं, एक के बहुतों पर शासन करने के अधिकार को, समूल नष्ट कर दूँगी; मैं निकम्मे, पेटू और मज़हब के ठेकेदारों की हकूमत को मिट्टी में मिला दूँगी; मैं पाशविक शक्ति के घमंड को चूर चूर कर, सदाचार और सच्चरित्रता का राज्य स्थापित करती हूँ, और प्रकृति को आत्मा का दास बनाती हूँ। बड़ी बड़ी तोंद वाले, घमंडी और मुफ़्तख़ोर "बड़े आदमियों" के ज़ुल्मों का मैं अन्त कर दूँगी, और मिहनती ईमानदार मज़दूरों को बड़ा बनाऊँगी। शास्त्र का नाम लेकर लूटने वाले ब्राह्मणों के प्रभाव को मिटा देना मेरा काम है। प्रत्येक स्त्री और पुरुष को मैं स्वाधीन बनाती हूँ। सब कोई अपने लिये स्वयं सोचना सीखें और अपने पाँव के बल खड़ा होने की आदत डालें। मैं स्वावलम्बन की शिक्षा देती हूँ और

प्रत्येक व्यक्ति को अपना आप स्वामी बनाती हूँ, क्योंकि स्वावलम्बन ही स्वाधीनता है।

मैं स्वतन्त्रता की देवी हूँ। सब प्रकार की ग़ुलामी की बेड़ियों को मैं काटनेवाली हूँ। मैं सब को स्वाधीन बनाती हूँ। क्योंकि स्वाधीनता ही पवित्रता है, और स्वाधीनता से बढ़ कर कोई श्रेष्ठतम पदार्थ नहीं। मैं जातपाँत के बन्धनों को तोड़ कर समाज को स्वाधीनता का अमृत पान कराऊँगी; छोटे छोटे भेदों को मिटा कर एक दूसरे को आपस में मिलाऊँगी; सदियों से सड़े हुए रुधिर को दूर कर समाज की नाड़ियों में शुद्ध रक्त का संचार करूँगी, और सब को मिला कर एक राष्ट्र का संगठन करूँगी।

मैं कर्मयोग की प्रवर्त्तिका हूँ, जन्म के ढकोसले का सत्यानाश करती हूँ। गुण और कर्म से समाज को चलाती हूँ। योग्य को सिंहासन पर बैठाती हूँ, और आलसी अयोग्य को नीचे गिरा देती हूँ। मैं कर्मों का फल देने वाली प्रारब्ध हूँ। पुरुषार्थी और उद्योगी मनुष्य मुझ से आशीर्वाद पाते हैं; अकर्मण्य और हाथ पर हाथ धर कर बैठनेवाले मेरे चाँटे खाते हैं। मैं जन्म के आधार पर स्थापित वर्णाश्रम धर्म का नाश कर दूँगी, और इसके स्थान पर, कर्मयोग की कसौटी द्वारा वर्णाश्रम धर्म की स्थापना करूँगी। मैं पापों के बहानेवाली श्री गंगाजी की भयंकर बाढ़ हूँ। जो पापी पुजारी, पुरोहित और पण्डित मेरे मार्ग में खड़ा होगा, उसे मैं गंगासागर में ले जा कर सदा के लिये लोप कर दूँगी।

मेरा नाम सामाजिक क्रान्ति है। मैं सैकड़ों वर्षों के रिवाजों को हटाने आई हूँ; मैं जन साधारण में लकीर के फ़क़ीर रहने की आदत को मिटाने आई हूँ; मैं मुट्ठी भर आदमियों के

बहुतों पर शासन करने के अधिकार को हटाने आई हूँ; मैं ईश्वर के प्रतिनिधि बनने वाले पण्डों का रुतबा घटाने आई हूँ; मैं जन साधारण में धर्म का सच्चा सरल मार्ग बताने आई हूँ। समाज में सब के साथ न्याय और किसी की खास रियायत न हो, यह मेरी घोषणा है। मैं साम्यवाद की प्रचण्ड प्रचारिका हूँ। मेरा, समता, स्वतन्त्रता और भ्रातृभाव का झण्डा है। मैं उस व्यवस्था का नाश कर दूँगी, जिसके अनुसार करोड़ों आदमी मुट्ठी भर आदमियों के दास बने हुए हैं, और वे मुट्ठी भर आदमी धन के ग़ुलाम बन कर समाज में व्यभिचार फैलाते हैं। मैं समाज को, ऐसी सब बुराइयों से साफ़ कर देना चाहती हूँ, जो एकता की बाधक हैं; और सत्य एवं न्याय का राज्य क़ायम नहीं होने देतीं। मैं विधवाओं के आँसुओं को पोंछने आई हूँ और उनको हर्ष सम्बाद सुनाने आई हूँ। अबलाओं को सताने वाले आततायी, अब ख़बरदार हो जाएँ; मेरा डंडा बड़ा भयंकर है। मैं अनाथ दुखियों की रक्षा करूँगी और दुष्टों को कठोर दंड दूँगी।

अत्याचार से पीड़ित लोगो, उठो! अछूत बच्चो उठो! विधवाओ चैतन्य हो जाओ! मेरे आनन्द-संदेश को सुनो। मैं अब पुरानी सामाजिक मशीन को तोड़ फोड़ कर नया संगठन करूँगी, और सब के लिये उन्नति का द्वार खोलूँगी। जो मेरी सेना में भर्ती होकर मेरे सिपाही बनेंगे, उन्हें स्वर्गीय सुख की प्राप्ति होगी। इसलिये हर्ष-नाद करते हुए सब प्रकार की शंकाओं को छोड़ कर, मेरे अनुगामी बनो। मेरे नज़दीक कोई बड़ा छोटा नहीं, मैं सब को बराबर का दर्जा देती हूँ। जो मेरे साथ चल कर, मेरी फ़ौज के सिपाही बन कर, मनुष्य समाज की उन्नति और उसके अभ्युत्थान में मेरी मदद करेंगे, वे ही अपने जीवन

को सार्थक कर स्वर्गीय आनन्द की प्राप्ति करेंगे। और जो मेरा विरोध कर मेरे रास्ते में रोड़े अटकाएँगे, उन्हें मैं निर्दयता से कुचल डालूँगी। क्योंकि मैं पापों का संहार करने वाली, दुष्टों का दलन करने वाली, पुरानी जर्जरित पद्धतियों को मिटा देने वाली क्रान्ति हूँ। मैं जीवन-स्फूर्ति और उन्नति का स्रोत हूँ। मैं पहिले प्रलय मचाकर पीछे नई सृष्टि की रचना करती हूँ।

ग्यारहवीं आवाज़

क्रान्ति की भर्ती

हिन्दू समाज में संगठन की परमावश्यकता है। हिन्दू-संगठन के बिना स्वराज्य नहीं मिल सकता। उस संगठन के लिये समाज में ज़बर्दस्त क्रान्ति होनी चाहिए, क्योंकि सड़े गले रिवाजों को रखकर, झूठ और मक्कारी से भरी हुई कुप्रथाओं की रक्षा करते हुए, अस्वभाविक वर्णाश्रम के सहारे, और सामाजिक विरोधों का भय रख कर हम कभी भी अपनी बीमारी का इलाज नहीं कर सकते। भिन्न भिन्न सम्प्रदायों को रखते हुए, सैकड़ों प्रकार के उपवर्णों में बटे हुए हिन्दू समाज का संगठन, हम बिना किसी लहर को पैदा किये, बिना किसी आन्दोलन को लाये—बिना किसी मतभेद के, बिना कोई विरोध खड़ा किये, करना चाहते हैं! ऐसा ख्याल सिवाय पागलपन के और कुछ नहीं। हिन्दू समाज में घोर आन्दोलन, बड़ी हलचल के बिना, किसी प्रकार के संगठन का ख्याल स्वप्नवत है। इसलिए हम समाज में क्रान्ति करना चाहते हैं। जो लोग यह समझते हैं कि

इससे घरेलू युद्ध होगा, उनसे हम निवेदन करेंगे कि ऐसा युद्ध करने योग्य है और उसी के अन्दर हिन्दू-संगठन का रहस्य छिपा हुआ है। समाज के निकम्मे, जर्जरित और बोदे अंगों को साथ लेकर जो जीना चाहते हैं, उन्हें हम दूर से नमस्कार करते हैं, और अपने इस दुखी देश की ग़ुलामी को दूर करने के लिये, सब से पहिले अपने समाज के मिथ्या विश्वासों और कुप्रथाओं की ग़ुलामी को दूर करने का आन्दोलन उठाते हैं। हिन्दू समाज में क्रान्ति करने का समय आ गया है, और वह क्रान्ति शास्त्र के नाम पर नहीं बल्कि देश की स्वाधीनता के नाम पर की जाएगी; वह क्रान्ति बुद्धिवाद का साम्राज्य स्थापित करने के लिये की जाएगी। वह क्रान्ति साम्यवाद के आदर्शों के लिये की जाएगी; वह क्रान्ति साम्प्रदायिकता के भेदों को मिटाकर राष्ट्र-धर्म के प्रचारार्थ की जाएगी; इसलिये हम क्रान्ति का बिगुल बजाते हैं और इस फ़ौज में भर्ती होनेवालों को दावत देते हैं।

क्रान्ति की फ़ौज में कौन भर्ती हो सकता है? क्या इस में उम्र की शर्त है? क्या इसमें चौड़ी छाती की ज़रूरत है? क्या इसके लिये लम्बा क़द चाहिये? क्या इसमें जवान ही भर्ती हो सकते हैं? क्या क्रान्ति की फ़ौज में स्त्रियों के लिये स्थान नहीं है? हम इन सब प्रश्नों के उत्तर में बड़ी बुलन्द आवाज़ से घोषणा करते हैं कि क्रान्ति की फ़ौज में सब के लिये स्थान है। क्या बच्चा, क्या बुड्ढा, क्या स्त्री, क्या पुरुष सभी इस फ़ौज के सैनिक हो सकते हैं। इसमें भर्ती होने के लिये किसी कालेज या स्कूल की परीक्षा पास करने की आवश्यकता नहीं। क्रान्ति-देवी अपने सैनिकों से सच्चा हृदय माँगती है। शुद्ध हृदय वाले निर्भय और विरोधों का मुक़ाबिला

करनेवाले, सैनिक चाहिए। जैसे लड़ाई की फ़ौज में भर्ती होनेवाले सिपाहियों से, उनकी योग्यता, रुचि और हालात के मुताबिक़ काम लिया जाता है, इसी प्रकार हिन्दू समाज में क्रान्ति करनेवाले सैनिकों से भी काम लिया जाएगा। सब एक ही प्रकार का काम नहीं कर सकते। क्रान्ति करने वाले सैनिकों को तीन महामंत्र अपने हृदय-पट पर लिख लेने होंगे और जो काम वे करेंगे उसे उन तीन महामंत्रों को लक्ष्य में रखकर करेंगे। वे मंत्र ये हैं—

१—भारतवर्ष के गौरव, उसकी सभ्यता और उसके साहित्य की रक्षा करना प्रत्येक हिन्दू का परम धर्म है।

२—भारतवर्ष को स्वाधीन किये बिना उसकी सभ्यता, उसके साहित्य और उसके गौरव की रक्षा नहीं हो सकती। इसलिये भारतवर्ष को स्वाधीन करना प्रत्येक हिन्दू का परमधर्म है।

३—स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए हिन्दू संगठन ही सब से मुख्य साधन है, और उस संगठन के लिये हिन्दू समाज में क्रान्ति की परमावश्यकता है। अतएव प्रत्येक सच्चे हिन्दू का कर्त्तव्य है कि वह हिन्दू समाज में क्रान्ति करे।

बस, इन तीन बातों को अपने लक्ष्य के सामने रखने वाला कोई भी हिन्दू, क्रान्ति की फौज में भर्ती हो सकता है, और हिन्दू-संगठन का सच्चा सेवक बन सकता है।

उपरोक्त तीन महामंत्रों में से पिछले दो का आशय तो आसानी से समझ में आ सकता है, पर पहिले के विषय में स्पष्टीकरण की आवश्यकता है; क्योंकि वही सर्वप्रधान उद्देश्य

है। अतएव उसके सम्बन्ध में हमें अपने विचार स्पष्ट रूप से बतलाने चाहिएँ। अगली आवाज़ में हम इसी की विवेचना करेंगे।

बारहवीं आवाज़

सैनिक का स्वीकृत-मत

हिन्दू समाज में क्रान्ति करनेवाले हिन्दू संगठन के सिपाही को, अपने साम्प्रदायिकता के सिद्धान्तों को गौण रखकर, क्रान्ति के महामंत्रों को अपना स्वीकृत-मत (Creed) बनाना आवश्यक है। साम्प्रदायिकता यदि इस स्वीकृत-मत के विरोध में पड़े, तो, उसे छोड़ देना सैनिक का परम कर्त्तव्य होगा; क्योंकि परस्पर विरोधात्मक साम्प्रदायिक सिद्धान्त रखते हुये—देश को हानि पहुँचानेवाले, संगठन के शत्रु सिद्धान्तों को रखते हुए—कोई भी सैनिक हिन्दू संगठन की पुनीत प्रगति को सफल नहीं बना सकता; इसीलिए सबसे पहिला महामंत्र यह है कि भारतवर्ष के गौरव, उसकी सभ्यता और उसके साहित्य की रक्षा का भाव, हिन्दुस्तान के प्रत्येक निवासी के हृदय में सर्वोच्च स्थान पावे। हम भारतवर्ष की प्रतिमा को अपने हृदयमन्दिर में स्थान देकर उसकी पूजा करें, और उसको अपना आराध्यदेव मानें; उसके हित में अपना हित समझें और जिन कारणों से—साम्प्रदायिक सिद्धान्तों से—उसका अहित होता है, उसके गौरव की क्षति होती है, उन्हें, उनका सर्वथा त्याग कर देना चाहिये। भारतवर्ष के गौरव की रक्षा से तात्पर्य क्या?

जैसे एक व्यक्ति का स्वत्वाभिमान (Self-respect) होता

है, जैसे व्यक्ति में आत्मसम्मान उसके लिये बड़े गौरव की चीज़ है, इसी प्रकार देश या राष्ट्र का अपना आत्मसम्मान होता है। ग़ुलाम जाति के लोगों में, देश अथवा समाज को एक व्यक्ति के रूप में देखने की आदत नहीं होती, क्योंकि समष्टी के स्वार्थों की रक्षा का उत्तरदायित्व, उनके सिर पर नहा होता—वे केवल अपने अपने स्वार्थ के लिये जिया करते हैं—उनमें अपने गौरव का रक्षा का भाव नष्ट हो जाता है, और दूसरों की लातें, गालियाँ, वे सिर झुका कर सहन कर लेते हैं; अतएव, ग़ुलाम लोगों के लिये देश के गौरव की रक्षा की भावना, बिलकुल नई चीज़ होती है। भारतवर्ष के गौरव की रक्षा के अर्थ यह हैं, कि हम अपने इस प्यारे देश को संसार में आदरणीय स्थान दिलावें। जब विदेशी इस देश का नाम उच्चारण करें तो उच्चारण के साथ ही इसकी महत्ता और इसके आदर के भावों से उनका मस्तक झुक जाय। यह हमारा परम सौभाग्य है कि हमारे पूर्वजों ने अपने देश को संसार में गौरव दिलाने की सब सामग्री एकत्रित कर रक्खी है, और हम केवल अपने संगठन से अपने देश का मस्तक ऊँचा कर सकते हैं। यह भी हमारे लिये बड़े पुण्य की बात है कि प्रकृति ने हमारे देश को इस कौशल से बनाया है, कि इसमें हमारे लिये सब प्रकार के सुखों का समावेश कर दिया है। ऐसे देश को पाकर, यदि हम उसके गौरव की रक्षा की भावना को न समझें, तो इसका कारण केवल हमारी सदियों की दासता का मैल है। भारतवर्ष के गौरव से सैनिक के हृदय में तत्काल यह भाव उदय होना चाहिये कि उसका प्राचीन सभ्यता का देश, जिसने संसार को सभ्यता सिखलाई है, फिर नये सिरे से वैसा ही ऊँचा स्थान, संसार की सभ्य जातियों में पावे; और वह अपनी सारी शक्तियों को

लगाकर, उसको उस ऊँचे सिंहासन पर बैठाने का यत्न करेगा। मेरे देश को बदनाम करनेवाला, उसकी इज़्ज़त को घटानेवाला, उसको पद-दलित करने वाला, मेरा शत्रु है, और मैं, जी जान होमकर, इस प्रकार के शत्रुओं से, अपने देश की रक्षा करूंगा। इस प्रकार के भाव और ऐसा पवित्र उत्साह संगठन के सैनिक में पैदा होना चाहिये कि वह उठते बैठते, चलते फिरते, यही कहे—"जब तक मेरा देश सम्मान के उच्च शिखर पर नहीं पहुँचेगा, जब तक यह संसार की स्वतंत्र जातियों में गौरवान्वित नहीं होगा, तब तक मेरा जीवन सार्थक नहीं हो सकता।"

दूसरी बात, सभ्यता की रक्षा की है। हिन्दू-संगठन के सैनिक को यह समझ लेना चाहिये कि उसकी सभ्यता, मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र, भगवान बुद्ध, विरक्त महावीर और वीर शिरोमणि गुरू गोविन्दसिंह के बतलाये हुए, परम पवित्र सिद्धान्त त्याग (Renunciation) के आधार पर खड़ी है, और वह यह मानती है कि त्याग ही स्वतंत्रता है, और संयम ही स्वाधीनता है। वह अपने अनुगामी भक्त को यह उपदेश देती है—

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं न पुनर्भवम्।
कामये दुःख तप्तानाम् प्राणिनामार्त्त नाशनम्॥

अर्थात् मुझे राज्य नहीं चाहिए, मुझे स्वर्ग दर्कार नहीं, मुझे दूसरे जन्म की ज़रूरत नहीं, मेरे अन्तःकरण की अभिलाषा यह है कि दुखी, सन्तप्त, और पीड़ित प्राणियों के कष्टों की निवृत्ति हो। हिन्दू सभ्यता, सेवा और बलिदान के धर्म को मानती है; केवल हिन्दुओं के लिये ही नहीं, बल्कि सब के लिये।

लेकिन वह सभ्यता दुष्टों को दण्ड देना भी सिखलाती है। वह यह कहती है, "जो तुम्हारे शान्तिमय ढङ्गों से न्याय की बात को नहीं माने, उसे तुम द्वेष छोड़ कर उचित दण्ड दो ताकि उसका सुधार हो जाय।" यह क्षात्रधर्म का संदेश हिन्दू सभ्यता का है, और वह सभ्यता अपने भक्तों से आशा करती है कि समाज की न्यायोचित मर्यादा को कायम रखने के लिये, समाज में शान्ति रखने के लिये, समाज के सब लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिये, धर्मात्मा और न्यायपरायण सदस्यों का परम कर्तव्य है कि वे क्षात्रधर्म का अभ्यास करें, और समाज में आतंक पैदा करने वाले दुर्व्यसनी खलों की कुवासनाओं को रोकने का यथोचित प्रबन्ध करें। हिन्दू सभ्यता का विशेष संदेश यह है कि "धन कमाओ पर उसे समाज में गौरव का स्थान मत दो"। वह यह मानती है कि राष्ट्र की शक्ति प्रचुर धन से नहीं बढ़ती, बल्कि सच्चरित्रता और सेवा धर्म के मानने वाले क्षत्रियों से बढ़ती है। इसलिये वह त्याग के आदर्श को समाज में सुख और शान्ति लाने की सर्वोत्तम कसौटी मानती है।

तीसरी बात साहित्य की रक्षा का है। किसी देश का साहित्य, उस राष्ट्र की सम्पत्ति होती है। साहित्य जाति का मस्तिष्क है; वह जाति की अमूल्य जायदाद है; वह जाति के प्रत्येक काल की सभ्यता का इतिहास है। साम्राज्य आते हैं चले जाते हैं, विजेता अपने नाशकारी काम कर मिट्टी में मिल जाते हैं; मुसलमानों की ज़बर्दस्त सल्तनत ख़ाक में मिल गई, अंग्रेज़ भी इसी प्रकार यहां पर सदा नहीं रह सकते, पर देश की सभ्यता और साहित्य स्थायी वस्तुएं हैं। इन्हें हम अमानत के तौर पर पिछले बुज़ुर्गों से लेते हैं और उसमें वृद्धि कर

अपनी सन्तान को दे जाते हैं। यह सिलसिला बराबर क़ायम रहता है। इतिहास में पुस्तकालयों और साहित्य को जलाने-वाले मज़हबी दीवाने, सबसे निकृष्ट और पतित कहे जाते हैं; वे ही म्लेच्छ और काफ़िर हैं; क्योंकि जली हुई किताबें करोड़ों रुपये के मोती देने पर भी फिर हाथ नहीं आ सकतीं। भारत-वर्ष की सभ्यता जैसी पुरानी है, वैसे ही इस का साहित्य भी प्राचीन है। हिन्दुस्तान में रहने वाले प्रत्येक निवासी का यह कर्तव्य है, कि वह वैदिक काल से लेकर अब तक के साहित्य को अपने बुज़ुर्गों की जायदाद समझे; उसमें से श्रेष्ठ ग्रन्थों को पढ़े, अपनी सन्तान को पढ़ावे और उसकी इस प्रकार रक्षा करे, कि जैसे ख़ज़ाने का सिपाही बन्दूक ताने हुए मुस्तैदी से ख़ज़ाने की रक्षा करता है।

लेकिन, हिन्दू संगठन के उद्देश्य से समाज में क्रान्ति करनेवाले सैनिक को उस साहित्य में से, ऐसे ग्रन्थों, वाक्यों और श्लोकों को निकालकर, गंगा जी में बहा देना होगा, जो हिन्दू संगठन के विघातक हैं; जो भारतवर्ष का अनादर कराने वाले हैं; जो हिन्दुओं को सदा के लिये गुलामी में रखने वाले हैं। सैकड़ों वर्षों से हिन्दू जाति का जीवन, अस्वाभाविक हो जाने के कारण—गुलामी में फँसा रहने के कारण—बहुत सा कूड़ाकचरा पुस्तकों के आकार में हमारे साहित्य में मिल गया है; गेहूं की फ़सल को हानि पहुँचाने वाले ऐसे घास फूस को दूर किए बिना हिन्दू संगठन नहीं हो सकता। भारतवर्ष के गौरव, उसकी स्वाधीनता, और उसके बच्चों के संगठन में बाधा देनेवाली सभी बातों—पुस्तकों, सम्प्रदायों और सिद्धान्तों—के त्याग करने का समय अब आगया है। संग-ठन के सिपाही को चैतन्य हो कर अपना कर्तव्य निश्चित कर

लेना चाहिए।

क्रान्ति के महामंत्र की इतनी व्याख्या करने के बाद अब हम संगठन के साधनों का स्वरूप क्रमशः दिखलाते हैं।

तेरहवीं आवाज़

सैनिक का स्वरूप

स्वाधीनता देवी के—क्रान्ति माता के—उपासक संगठन के सिपाही का स्वरूप क्या होना चाहिए? सबसे पहली वस्तु जिसे आँख देखती है, वह है सैनिक का वेष। सैनिक का वेष ही उसके कर्तव्य का द्योतक है! इसलिए संगठन के सिपाही को स्वदेशी वस्त्र पहिनने चाहिएँ। अपने देश का धन अपने देश में रहना उचित है, यह मोटी बात जो नहीं जानता, वह भला क्रान्ति का उपासक कैसे हो सकता है। उससे हिन्दू-संगठन का क्या काम हो सकता है। विदेशी वस्त्रों से सुसज्जित लोग यदि हिन्दू-संगठन का दावा करें तो उन्हें केवल पूरे पाखंडी समझना चाहिए। संगठन का सिपाही यदि शुद्ध खादी के वस्त्र पहिनता है, तो उसका तो कहना ही क्या; परन्तु जो देश के धन से स्थापित कल कारख़ानों के बने हुए कपड़ों का उपयोग करता है, वह भी क्रान्ति की सेना में भरती हो सकता है। हम देश के कला-कौशल की उन्नति के पक्षपाती हैं, अतएव सैनिक को सबसे पहिले अपना वेष स्वदेशी बनाना आवश्यक है।

दूसरी बात है भाषा की। इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत के भिन्न भिन्न प्रांतों के लोग अपनी अपनी प्रांतीय

भाषा द्वारा बहुत शीघ्र अपनी जनता में सामाजिक क्रान्ति के भावों को फैला सकते हैं, और उन्हें ऐसा करना ही होगा; पर भारत के तेईस करोड़ हिन्दुओं को सुसंगठित कर स्वराज्य की लड़ाई के लिये तैयार करने के उद्देश्य से, जो लोग सामाजिक क्रान्ति करना चाहते हैं, उन्हें राष्ट्र-भाषा हिन्दी सीखना आवश्यक होगा ताकि सब सैनिक मिलकर काम कर सकें। इसलिए हिन्दी भाषा संगठन के सिपाही की राष्ट्र-भाषा होगी और इसका प्रचार करनेवाला भी संगठन की सेवा करेगा। ईश्वर की कृपा से भारतवर्ष के सभी प्रांतों में हिन्दी का प्रचार होता चला जा रहा है, और हम बिना कठिनाई के इस भाषा को सीख सकते हैं।

तीसरी बात है शारीरिक स्वतन्त्रता की। जो सैनिक—चाहे वह स्त्री हो या पुरुष—संगठन की सेवा करना चाहता है उसके लिये क्षात्र-धर्म मुख्य चीज़ है। क्षात्र-धर्म के व्रत से दीक्षित हुए बिना, कोई सैनिक नहीं हो सकता; इसलिए क्रान्ति के सैनिकों का क़वायद के तौर पर नित्यप्रति व्यायाम करना आवश्यक है। क्रान्ति की फ़ौज में भरती होनेवाली प्रत्येक बहिन को अपने पास एक ऐसा चाक़ू रखना पड़ेगा, जिसे वह अवसर पड़ने पर काम में ला सके। उस चाक़ू की बनावट खुखरी के ढंग की होनी चाहिये, जिसे फ़ौरन उसके घर से निकाल कर उपयोग में लाया जा सके, और उस बहिन को १५-२० मिनट रोज़ उस चाक़ू को चलाने का अभ्यास करना होगा, और वह सहज में ही लौकी, काशीफल और तरबूज़ आदि फलों में भोंकने के अभ्यास से हो सकता है। हिन्दू औरतें प्रायः बदमाशों का सामना पड़ने पर रोने, हाथ जोड़ने और ईश्वर की दुहाई

देने लग जाती हैं। यह उनकी बड़ी भारी भूल है। जो नरपिशाच ऐसे घृणित कुकर्मों के करने पर उद्यत हो जाते हैं, उनमें दयामया और ईश्वर की भावना का लेशमात्र भी नहीं रह जाता, वे तो साक्षात शैतान होते हैं। ऐसे शैतानों का सामना करने के लिए वीरता और साहस की अवश्यकता है। अच्छा तेज़ चाकू हाथ में लेकर जिस समय कोई देवी ऐसे अधम पर हमला करेगी, तो उस पापी के छक्के छूट जायँगे। ऐसे दुष्ट लोग केवल गुण्डे होते हैं, उनमें बहादुरी बिलकुल नहीं होती, थोड़े से मुक़ाबले में उनके हाथ पाँव फूल जाते हैं; अतएव संगठन में भर्ती होने वाली देवियों का यह परम धर्म है कि वे सतीत्व-रक्षा के लिए शस्त्र धारण करें; वे इसी रूप में संगठन की बड़ी सहायता कर सकती हैं, और अपने पुरुषों का उत्साह बढ़ा सकती हैं।

पुरुषों को क्षात्र-धर्म की पूरी दीक्षा लेनी चाहिये, और प्रत्येक उपयुक्त उपाय से अपनी शारीरिक स्वतन्त्रता बढ़ानी चाहिये। दस बरस के लड़के से लेकर सत्तर वर्ष के बूढ़े तक संगठन की फ़ौज में भर्ती हो सकते हैं, और वे क्षात्र-धर्म का प्रचार कर हिन्दू समाज को शक्तिशाली बना सकते हैं। हिन्दू समाज को क्षात्र-धर्म से दीक्षित करना है, उसका बनियाँपन निकाल कर उसे वीर स्वत्वाभिमानी बनाना है। तेईस करोड़ की संख्या में से कम से कम, पाँच करोड़, जान को हथेली पर रखने वाले हिन्दू सैनिकों की आज हमें ज़रूरत है। वे सैनिक किधर कूच करेंगे? उनका धावा किस पर होगा? वे कौन सी लड़ाइयाँ लड़ेंगे? अब हम क्रान्ति के कर्म-क्षेत्र में अपने सैनिकों को लेजा कर युद्ध का बिगुल बजाते हैं।

चौदहवीं आवाज़

छुआछूत का भूत

क्रान्ति के सैनिकों का सब से पहिला धावा, छुआछूत के भूत की गढ़ी पर होगा। शौच (पवित्रता) के उच्च सिद्धान्त को सामने रख कर, हिन्दू समाज के व्यवस्थापकों ने आचार-धर्म की मर्यादा समाज में स्थापित की थी ताकि लोग प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेना सीखें, और हृदय का शुद्धि सद्गुणों के द्वारा करें। वे—"Cleanliness is godliness"—इस सुन्दर सिद्धान्त को मानते थे। आचार की शुद्धि परमात्मा के पास पहुँचाती है, इस नियम के अनुसार वे चलते थे। मुसलमानों के भयंकर अनाचार के समय, हिन्दू समाज के आचार धर्म ने छुआछत का रूप धारण कर लिया। उस छुआछूत का प्रभाव जनता पर इतना अधिक पड़ा, कि वे उसे ही हिन्दू धर्म का स्वरूप मानने लगे, और सामाजिक उत्थान के धार्मिक सिद्धान्तों को उन्होंने बिलकुल भुला दिया। हिन्दू समाज में पूर्ण निरंकुशता पाकर, छुआछूत के भूत ने बड़ी निर्दयता से समाज का शासन आरम्भ किया। लाखों रोती विलखती आत्माओं को थोड़े से अपराध पर इसने विधर्मिया के हाथ सौंप दिया। राज्य की सत्ता विधर्मियों के हाथ में होने से छुआ छूत के भूत के शासन की कड़ाई और भी बढ़ती गई। विधर्मियों ने सैकड़ों प्रकार के प्रलोभनों द्वारा हिन्दू बच्चों को हथिया लिया। परिणाम यह हुआ कि सुन्दर सरल सिद्धान्तों द्वारा सुसंगठित हिन्दू समाज, धीरे धीरे अपने ही कड़े बन्धनों द्वारा, कमज़ोर और टुकड़े टुकड़े हो गया; उसमें

सैकड़ों प्रकार के उपवर्ण खड़े हो गये ; हज़ार क़िस्म के भेद भावों ने हिन्दू समाज को ग्रस लिया ; अस्पृश्यता की विषम व्याधि से समाज पीड़ित हो उठा, इस प्रकार छुआछूत का भूत हिन्दू समाज का भयंकर द्रोही सिद्ध हुआ।

इतिहास हिन्दुओं की ग़ुलामी का मुख्य कारण आपस की फूट बतलाता है। भला उस समाज में फूट क्यों न घर कर लेगी, जिसमें छुआछूत के अस्वाभाविक भेद हों। जो समाज, वर्णों, उप-वर्णों, जातियों, और उप-जातियों में इस प्रकार बटा हुआ हो, कि लोग एक दूसरे के हाथ का पानी भी न पी सकें ऐसे समाज के लोगों में साधारण से साधारण कारण पर फूट का हो जाना स्वाभाविक है। जा समाज जितना बटा हुआ है, जितने अधिक उसमें एक दूसरे को अलग करने के सामान हैं, ऐसे समाज का संगठन साक्षात् ब्रह्मा भी नहीं कर सकता। इसलिए सब से पहला धावा क्रान्ति की सेना का छुआछूत के क़िले पर है। साफ़ सुथरा खाना, किसी हिन्दू के घर का बना हुआ क्यों न हो, उसे सहर्ष स्वीकार करना धर्म है। अन्न जल का तिरस्कार करने वाला समाज, ईश्वर के निकट अपराधी है। हिन्दू समाज में, छुआ छूत के कारण से ही आपस का स्वाभाविक जीवन तथा आपस की स्वाभाविक सहानुभूति नहीं है। सात करोड़ हिन्दू बच्चे अछूत क़रार दिये गये हैं ; उनका उच्चवर्णाभिमानी छूते तक नहीं ; उनके हाथ का पानी तक नहीं पीते ; उनको मन्दिरों में दर्शन करने जाने नहीं देते ; उनको समाज में बराबर के अधिकार नहीं देते ; ऐसा अनर्थ, ऐसा अत्याचार इस छुआछूत के भूत ने समाज में कर रक्खा है। ऐसे निरंकुश समाजद्रोही भूत की हत्या करना प्रत्येक हिन्दू सैनिक का मुख्य कर्तव्य है। इसलिए आइए छुआछूत की गढ़ी

पर धावा करें; और संगठन के जय जयकार से दिशाओं को प्रतिध्वनित कर दें।

अच्छा, अब धावे का आरम्भ कैसे हो? प्रत्येक ग्राम और नगर में क्रान्ति के हिन्दू सैनिकों को, अपनी मण्डलियाँ बनानी चाहियें। मण्डली में हर वर्ण या पेशे का पुरुष शामिल हो और वे सप्ताह में एक बार मिल कर सहभोज करें। मण्डली का प्रत्येक सदस्य चन्दा दे, जिससे सहभोज का खर्च चल सके। यह मण्डली एक प्रकार की "हिन्दू-सोशल-क्लब" की तरह हो; इसके मेम्बर हमारे बतलाए हुए स्वीकृत मत को स्वीकार करें, और आम जनता में छुआछूत के दूर करने वाली बातों का प्रचार करें। विद्यार्थी अपने स्कूल, कालेजों में ऐसी मंडलियाँ बनावें, दुकानदार अपनी क्लबें स्थापित करें और ब्राह्मण से लेकर भङ्गी तक सबको अपनी मंडली में शामिल कर, हिन्दू-संगठन की बुनियाद डालें। सफ़ाई के जो नियम हैं, उनकी व्याख्या अपने अनपढ़ लोगों को सुनावें ताकि जनता साफ़ सुथरा रहना सीखे। साबुन का उपयोग बढ़ाने की चेष्टा खूब होनी चाहिये, और इसे भेंट के तौर पर एक दूसरे को देना चाहिए।

क्रान्ति करनेवाली मंडली के सदस्यों का एक काम यह भी है कि अपने साप्ताहिक अधिवेशनों में मज़दूरी की महत्ता (Dignity of labour) का अमली प्रचार करें, क्योंकि इसके द्वारा छुआछूत दूर करने में बड़ी मदद मिलेगी, और देश में कलाकौशल की उन्नति के सामान पैदा होंगे। कोई धन्धा किसी को छोटा नहीं बनाता, और ईमान्दारी की मज़दूरी करनेवाला कोई भी पुरुष आदरणीय है। उसके हाथ का अन्न जल ग्रहण करना हमारा सामाजिक कर्तव्य है। इस प्रकार जिस रूप से,

जिस उपाय से, छुआछूत के भूत की हत्या हो सके, करनी चाहिए। छोटे छोटे लड़के भी इस काम को कर सकते हैं। मातायें और बहन, अपनी मंडलियाँ पुरुषों से पृथक बनाकर, स्त्रियों में क्रान्ति का प्रचार शीघ्र कर सकती हैं। सब को क्रान्ति की धुन लग जानी चाहिये।

देखिये कितना विस्तृत कर्मक्षेत्र हमारे सामने है। इस क्षेत्र में प्रवेश करने के लिये, किसी शास्त्र, किसी इल्हाम की मदद की आवश्यकता नहीं। साधारण बुद्धि रखनेवाला पुरुष भी, छुआछूत की बीमारी से उत्पन्न हुए भयङ्कर परिणामों को, हिन्दू समाज में स्पष्ट रूप से देख सकता है। इससे घूमने, फिरने, व्यापार आदि करने की सुविधायें नहीं रहतीं। छुआछूत रखने वाला पुरुष, अपने समय और शक्ति का यथार्थ उपयोग, नहीं कर सकता; उसमें व्यवहारिक बुद्धि नहीं आ सकती; वह कूपमण्डूक बना रहता है; उसमें झूठा अभिमान भर जाता है; और, मक्कारी तो उसके चरित्र का अङ्ग बन जाती है। छुआछूत का स्वरूप, इतना अस्वाभाविक है, कि उसे सहन करने वाले समाज की बुद्धि पर, आश्चर्य होता है। ब्राह्मण ब्राह्मण के हाथ का नहीं खाता; क्षत्रियों में भी उसी प्रकार छुआछूत है। इनकी देखा-देखी श्रमजीवी लोगों ने भी आपस में एक दूसरे के बख़िलाफ़ छुआछूत के नियम गढ़ लिए, और समाज को टुकड़े टुकड़े कर डाला। हिन्दू समाज को यदि सचमुच स्वराज्य की लड़ाई लड़ना है, तो सफ़ाई–पवित्रता–के प्राकृतिक नियम को आचार-धर्म का स्तम्भ बनाना चाहिये, ताकि, समाज के सभी लोग, आपस में खुले तौर से मिलजुल सकें, और लोगों में समष्टि-धर्म को समझने की बुद्धि आवे। प्रत्येक सैनिक चैतन्य होकर अपने कर्तव्य पर लग जाय, और अस्पृश्यता के भूत की शीघ्र दाह-

क्रिया कर, हिन्दू-समाज के माथे पर लगे हुए इस कलंक के टीके को धो डाले।

पन्द्रहवीं-आवाज़

जात पाँत का क़िला

फ्राँस की राज्य क्रांति के इतिहास में, बैस्टिल (Bastille) का नाम अमर हो गया है। उसी क़िले में राज्य के अत्याचारों से पीड़ित क़ैदी सड़ा करते थे। जिस समय फ्राँस की प्रजा, शताब्दियों से किए गये, अत्याचारों का, बदला लेने के लिये, खड़ी हुई, तो उसने सब से पहले उस क़िले की ईंट से ईंट बजा दी।

हिन्दू समाज में वैसा ही बैस्टिल 'जात पाँत का क़िला" मौजूद है; जिसमें लाखों क़ैदी समाज के अत्याचारों से पीड़ित, हाहाकार करते हुए मर गये, और आज भी करोड़ों आत्मायें दुःख की आहें भर भर कर अपनी ज़िन्दगी के दिन काट रहे हैं। यह जात पाँत का क़िला, बैस्टिल से भी ज़्यादा सुदृढ़ है। हिन्दू नवयुवक, आज गवर्नमेण्ट का मुक़ाबिला करने के लिये ख़ुशी से जेल में जा सकता है, पर अपनी जात बिरादरी के अत्याचारों का सामना करते समय वह कायर बन जाता है; समाज के निरंकुश नियमों के सामने उसकी कुछ भी पेश नहीं जाती। माँ बाप, अपनी लाडली लड़कियों को बेचते हुए ज़रा नहीं शर्माते; लड़के वाले लड़कों को बेचते हुए ज़रा भी ईश्वर का भय मन में नहीं लाते। जात पाँत के नियमों में बँधे हुए हिन्दू, अपनी छोटी छोटी लड़कियों का विवाह कर देते हैं, और जब वे विधवा हो जाती हैं, तो सारे घर को श्मशान-गृह बना कर बैठ जाते हैं

उनमें इतना भी आत्मिकबल नहीं है कि वे, अपनी विधवा कन्या का पुनर्विवाह कर अपने घर को सुखी कर सकें। जात पाँत का भूत उनको भयभीत कर देता है। ब्राह्मणों में सैकड़ों प्रकार के ब्राह्मण, क्षत्रियों में सैकड़ों प्रकार के क्षत्रिय, वैश्यों में सैकड़ों प्रकार के वैश्य, बन गये, और बेचारे शूद्रों की तो बात ही क्या। इस प्रकार हिन्दू समाज इस राक्षसी जात पाँत के वंशजों में बट गया है। हर एक छोटी से छोटी बिरादरी ने अपने अलग नियम बना लिये हैं, और अपनी अपनी खिचड़ी पका रहे हैं। छोटे दायरे में विवाह शादी के लिये, योग्य लड़के लड़कियों का मिलना नामुमकिन था, परिणाम में लड़के लड़कियां बिकने लगीं, और हिन्दू समाज स्वार्थी बनियाँ-समाज बन गया। लोग क़र्ज़ निकाल कर बिरादरियों की ग़ुलामी करने लगे; और धनवान, अनपढ़ और ज़िद्दी लोग, कुलीनता के ठेकेदार बन गये। ब्राह्मणों में भी ऊँचे और नीचे दर्जे की सीढ़ियाँ बन गईं, और एक ऊँची सीढ़ी—बीस बिस्वे—का ब्राह्मण, नीची सीढ़ी—पाँच बिस्वे—के ब्राह्मण का तिरस्कार करने लगा। हिन्दू समाज अजीब गोरख धन्धे में उलझ गया। एक को दूसरे के साथ सहानुभूति न रही। एक वर्ण की बिरादरी के मुर्दे को दूसरी बिरादरी के लोगों ने उठाना पाप समझा; समाज से बन्धुत्व का सीमेन्ट उड़ गया, और वर्णाश्रम धर्म की मर्य्यादा खोखली और बोदी हो गई।

हिन्दू समाज में यदि नवीन चैतन्य शक्ति का संचार करना चाहते हो, तो जात पाँत के अत्याचारी क़िले की ईंट से ईंट बजा दो; बिरादरियों की दीवारों को गिराकर, विस्तृत मैदान में आओ, ताकि शुद्ध पवन समाज के फेफड़ों में प्रवेश करे। आज हिन्दू समाज का रुधिर तंग दायरों में विवाह करने से,

गन्दा हो गया है; आज हिन्दू समाज, छोटी छोटी बिरादरियों की गुलामी से कायर हो गया है। गीता के दूसरे अध्याय की करोड़ों कापियाँ बाँटने से हिन्दू समाज बहादुर नहीं बन सकता। यदि हिन्दुओं को निर्भय, वीर और मौत का मुक़ाबिला करनेवाले बनाना चाहते हो, तो जात पाँत के क़िले को तहस-नहस कर दो, और सब हिन्दुओं के लिये हिन्दूराष्ट्र की बुनियाद डालो।

यह क्रान्ति किस प्रकार हो सकती है? क्रान्ति के सैनिको! भारत का भविष्य तुम्हारे हाथ में है। भारत की देवियो! देश के जीवन और मरण के प्रश्न का हल तुम्हारी मुट्ठी में है; वीरता से आगे बढ़ो; और "भारतमाता की जय" कहकर, हिन्दू समाज के इस अत्याचारी दुर्ग पर हमला करो। प्रण करो, कि तुम अपना विवाह जाति के बन्धनों को तोड़कर करोगे; अपने आराध्यदेव को साक्षी कर प्रतिज्ञा करो, कि तुम विरादरी की कुछ परवाह न कर अपनी शादी करोगे। कम से कम, भारत के सब ब्राह्मण, एक सूत्र में बँध जाएँ; सब क्षत्रिय अपनी छोटी छोटी बिरादरियों को तोड़कर, एक हो जाएँ; इसी प्रकार वैश्य और श्रमजीवी भी बिरादरी की दीवारों को तोड़कर, एकता का अमृतरस पान कर लें, ताकि उपवर्णों के हज़ारों भेद मिटकर, केवल चार मुख्य भेद रह जाएँ। इतना होने पर सामाजिक क्रान्ति का कार्य बहुत आसान हो जायगा। भारत के तरुणों की परीक्षा का समय आगया है, देश की स्वाधीनता के सूर्य की लालिमा दिखाई देने लगी है। हम हिन्दू हैं, और हिन्दू-सभ्यता की रक्षा की ज़िम्मेदारी हमारे सिरों पर है। आज हम स्वाधीनता की शत्रु सब दीवारों को गिराकर अपने आपको स्वतन्त्र करने के लिये खड़े

हुए हैं। लड़के और लड़कियों को बेचनेवाला हिन्दू समाज कभी स्वतन्त्र नहीं हो सकता, और न ऐसे हिन्दू समाज के नेता, हिन्दू सभ्यता के प्रतिनिधि बन सकते हैं। समाज में सैकड़ों प्रकार की जात बिरादरियों की दीवारों को तोड़कर, हम सदियों के कूड़े-कचरे को निकाल बाहर करेंगे, और अपनी प्यारी हिन्दू जाति को नीरोग और बलिष्ट बनावेंगे। हमारा झंडा भगवाँ है, और क्रान्ति हमारी देवी है। ग्राम ग्राम, नगर नगर में युवकों और युवतियों की मण्डलियाँ बनाकर, हम जात पाँत के तोड़ने का व्रत लेंगे, और खोखले वर्णाश्रम-धर्म के ठेकेदारों को अपने पीछे चलायेंगे। हिन्दू संगठन का यही सीधा सच्चा मार्ग है; देश की स्वाधीनता की यही कुंजी है; राष्ट्र-धर्म का यही मिशन है। हम जात पाँत को तोड़कर भारत के तेईस करोड़ हिन्दुओं की एक हिन्दू जाति स्थापित करेंगे, और मुसलमान, ईसाई और पारसी सभी भारतियों को हिन्दूपन का आदर करना सिखायेंगे; तभी "हिन्दुस्थान" यह नाम सार्थक होगा। ईश्वर की यही इच्छा है।

सोलहवीं आवाज़

क्षात्र-धर्म

समाज का सारा संगठन और उसके प्रत्येक पुरज़े का ठीक तरह से काम देना, क्षात्र-धर्म चैतन्य शक्ति तथा उसकी विवेकबुद्धि पर निर्भर है। मानवी इतिहास का पाठ करने से, यह बात भली प्रकार स्पष्ट हो जाती है कि, क्षात्र-धर्म को विवेक के साथ जाग्रत रखनेवाली जाति, सदा स्वतन्त्र और

स्वाधीन रही है। आर्यलोग इस सत्य सिद्धान्त की महत्ता को ख़ूब समझते थे। इसलिये वे अपनी सन्तान को शस्त्र और शास्त्र दोनों विद्याओं में निपुण किया करते थे। अपने उसी क्षात्र-धर्म के प्रताप से, उन्होंने अपना चक्रवर्ती राज्य, संसार में फलाया, और मानवी सभ्यता के अमूल्य रत्नों की जायदाद, अपनी सन्तान के लिये छोड़ गये।

क्षात्र-धर्म व्यक्ति और समष्टी अधिकारों की रक्षा का धर्म है; यह समाज के बनाये हुए न्यायोचित क़ानूनों के अनुसार, जनता को चलाने की व्यवस्था है; यह दुष्ट, दुर्व्यसनी, और मदान्ध नागरिकों को, उनके बुरे मार्ग से हटा कर, मर्यादा में रखने का विधान है; यह देश और राष्ट्र के गौरव, उसकी सभ्यता, और उसके साहित्य की रक्षा करने वाला ब्रह्मास्त्र है। इसमें ज़ुल्म को कोई स्थान नहीं, यह हिंसा को आरम्भ नहीं करता, बल्कि उसका प्रतिकार कर, हिंसा-वृत्ति को नाश करता है; यह हृदय में द्वेष न रख सत्य और न्याय के अनुसार दण्ड देनेवाला धर्मराज है। यह अहिंसा के लक्ष्य को सामने रखकर, समाज में गड़बड़ मचाने वाले—समाज की शान्ति भङ्ग करने-वाले—लोगों को, उचित दंड देकर, उनका सुधार करता है। यदि समाज शरीर है, तो क्षात्र-धर्म उसके प्राण; यदि समाज घड़ी है, तो क्षात्र-धर्म उसका चक्र (स्प्रिंग)। बिना क्षात्र-धर्म के समाज की गति अस्वाभाविक हो जाती है; उसमें नाना प्रकार की बुराइयाँ उपस्थित हो जाती हैं; श्रेष्ठ गुणों का विकास बन्द हो जाता है और नीच वृत्तियाँ वृद्धि पा जाती हैं। अतएव समाज को नीरोग रखने के लिये, उसे बलशाली बनाने के हेतु, उसका जीवन स्वाभाविक बनाने के लिये यह परमाश्यक है, कि क्षात्र-धर्म का प्रचार समाज के सदस्यों में किया जाय।

क्षात्र-धर्म, वर्ण-भेद और पेशा-भेद नहीं मानता; प्रत्येक पेशे, प्रत्येक स्थिति, और प्रत्येक अवस्था के नागरिकों का क्षात्र-धर्म की शिक्षा पाना एक मुख्य कर्तव्य है; यह समाज का साझा धर्म है, और इसी के आधार पर समाज की सारी शक्ति निर्भर है। इसी के सहारे देश का व्यापार बढ़ सकता है; इसी के आधार पर धर्म की मर्यादा क़ायम रह सकती है; इसी के बल पर ज्ञान ध्यान, पूजा पाठ, हो सकता है। जिस जाति में क्षात्र-धर्म का लोप हो जाता है, वह जाति दूसरों का पानी भरने और लकड़ियाँ चीरने लायक़ रह जाती है—उसके बच्चे, स्थान स्थान पर ठोकरें खाते हैं, और उन्हें सब जगह अपमानित होना पड़ता है।

हर्ष है कि नवीन वेदान्त की गहरी नींद में सोनेवाली हिन्दू-जाति आज चैतन्य हुई है। छत्रपति शिवाजी महाराज और पुरुष-सिंह गुरु गोविन्दसिंह जी के हिन्दू-संगठन के पुनीत प्रयत्नों का इतिहास हिन्दू बच्चे पढ़ने लगे हैं; हिन्दुओं के संगठित हुए बिना स्वराज्य असम्भव है, इसकी सत्यता भी हिन्दू नेता अनुभव करने लगे हैं; लेकिन, वह संगठन क्षात्र-धर्म के प्रचार के बिना नहीं हो सकता। हिन्दू, आज पैसे के ग़ुलाम यहूदी बन गये हैं। बनियाँपन की बीमारी इनकी हड्डियों में घर कर गई है। पैसा जमा करने का भूत, इनके सिरों पर सवार हो गया है। पैसे के लोभ में आकर काशी के दिग्गज पंडित झूठी सच्चा व्यवस्था दे देते हैं; पैसे के लोभी साधु सन्यासी नये नये पाखंडों का आविष्कार करते हैं; पैसे के ग़ुलाम पंडित पुरोहित, घृणित से घृणित काम भी करने को तय्यार हैं; पैसे के मोह में पड़ी हुई हिन्दू-जाति का उद्धार, केवल क्षात्र-धर्म ही कर सकता है। क्षत्रिय निर्भय होकर जब मौत का सामना करता है, तो

उसे संसार की तुच्छता का सच्चा ज्ञान होता है। दूकानों पर बैठनेवाले और भोजन भट्ट ज्ञानी, भला गीता के मर्म को क्या समझ सकते हैं। आज हमें ज़बर्दस्त आन्दोलन कर देश में क्षात्र-धर्म का प्रचार करना पड़ेगा। अपने घरों से गड़ा हुआ धन निकाल कर हिन्दू नवयुवकों को खिलाना पड़ेगा ताकि वे बलशाली होकर देश के गौरव की रक्षा करें। मुहल्ले मुहल्ले में व्यायामशालायें खोलकर राष्ट्रीय त्योहारों के अवसरों पर दंगल मचा, वीरों को पुरस्कार दे, हमें अपने समाज में अद्भुत जागृति पैदा करनी होगी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि विदेशी गवर्नमेंट होने के कारण, हम अपनी इच्छानुसार पाश्चात्य ढंगों के अनुकूल कार्य नहीं कर सकते, पर जितना हम कर सकते हैं उतना भी तो हम नहीं करते, ख़ाली गवर्नमेंट को दोष देना केवल अपने कर्तव्य की अवहेलना करना है। हमें निम्नलिखित उपायों द्वारा, क्षात्र-धर्म का प्रचार ग्रामों, क़स्बों और नगरों में करना चाहिये—

१—नगर के प्रत्येक मुहल्ले में व्यायामशालायें हों, और महीने में एक बार, सारे नगर की टूर्नामेंट (दंगल) हो। उस दंगल में शहर के सब अखाड़ों के प्रतिनिधि सम्मिलित हों, और राष्ट्रीय त्योहारों के अवसर पर दङ्गल जीतने वालों को पुरस्कार दिये जाँय।

२—राष्ट्रीय त्योहारों पर ख़ास तौर से, ज़िले भर के दंगल हों, और जनता में उत्साह बढ़ाने के लिये, स्थानीय रुचि के अनुसार खेलें खेली जाँय।

३—शारीरिक व्यायाम के नये विदेशी ढंग, जैसे मुक्के-बाज़ी, जिजित्सू आदि का प्रचार भी जनता में किया जाय,

ताकि बलशाली सभ्य जातियों में हम पीछे न रहें।

४—फ़ौज़ी क़वायद सीखे हुए अनुभवी सिपाहियों को शिक्षक रख कर, इक्कीस वर्ष की उम्र से लेकर पचास बरस तक के प्रत्येक हिन्दू को, क़वायद सीखने का अभ्यास करना चाहिए, और वे लोग ऐसा व्रत कर लें कि वे हिन्दू स्त्रियों पर अत्याचार करने वाले दुष्टों को यथोचित दण्ड देंगे।

५—प्रान्त भर के हिन्दुओं का दंगल विजय-दशमी के अवसर पर होना उचित है। उसमें प्रान्त के सब हिन्दू लीडर सम्मिलित होकर जनता को उत्साहित करें।

६—अखिल भारतवर्षीय राष्ट्रीय महासभा जहाँ पर हो, वहाँ सारे देश के हिन्दू खिलाड़ियों का दंगल करना चाहिए, और उसी अवसर पर क्षात्र-धर्म की महत्ता पर जनता को उपदेश होना चाहिए।

इस प्रकार, जन साधारण में क्षात्र-धर्म का ज़बर्दस्त आन्दोलन चलाकर देश का बनियाँपन श्री गङ्गा जी में बहा देना उचित है। अब समय आ गया है, कि हम अपनी कायरता और नपुंसकता को दूर करें; सीधे खड़े हों, और अपनी रुचि के अनुसार, हिन्दू-संगठन के काम को उठा लें। काम बहुत है, करने वाले चाहिये। क्षात्र-धर्म के प्रचार के लिये हज़ारों प्रचारक दरकार हैं। अनपढ़ सिपाही, हिन्दू बालकों को सिपाहियाना जौहर सिखा, हिन्दू संगठन की, सेवा कर सकता है; लाठी चलाने वाला, हिन्दू बच्चों को लाठी का कर्तव्य सिखला कर हिन्दू जाति का सेवक बन सकता है; कुश्ती लड़ने वाला, जगह जगह अखाड़े खुलवा कर, शारीरिक कर्तव्य सिखला कर, भारत जननी का सच्चा पुत्र बन सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि हम स्वार्थ त्याग कर अपना हुनर अपने लोगों को

सिखलावें, साथ लेकर न मर जाँय। स्वार्थ के कारण ही हिन्दुओं का सारा काम बिगड़ रहा है, और उनके गुणी आदमी गुणों को साथ लेकर मर जाते हैं। जो कुछ आता है, जो विद्या जानते हो, जो गुण तुम्हारे पास है, उसे दूसरे हिन्दुओं को सिखलाइए, गुणियों की तादाद बढ़ाइए, तभी तुम्हारे गुणों का ज्ञान सार्थक होगा। क्षत्रियों को उदार होना चाहिये; अखाड़े वालों को आपस में एक दूसरे के साथ कभी द्वेष नहीं करना चाहिए; हार-जीत के समय में बड़ी उदारता से एक दूसरे के साथ हाथ मिलाना चाहिए; जीतने वाला, हारनेवाले का हर्गिज़ तिरस्कार न करे, और हारनेवाला, जीतनेवाले की बहादुरी की, सदा इज़्ज़त करे। हम सब हिन्दू जाति के अंग हैं, उसके सेवक हैं, हमारा सारा बल वीर्य्य इसी जाति के अर्पण है, और हम अपनी हिन्दू जाति को गौरवान्वित करने के लिये क्षात्र-धर्म की दीक्षा लेते हैं।

सत्रहवीं आवाज़

मन्दिर और साधु सुधार

भगवान बुद्ध के समय जब भिक्षु-संघ का संगठन हुआ, तो हिन्दू धर्म ने अपने इतिहास में पहिली बार मिशनरी रूप धारण किया। इससे पहिले हिन्दुओं में धर्म प्रचार की परिपाटी नहीं थी, वर्णाश्रम-धर्म के अनुसार ब्राह्मण और संन्यासी, शिक्षा तथा प्रचार का काम करते थे। भगवान बुद्ध ने पहिली बार हिन्दू समाज को धर्म-प्रचार के लिए तय्यार किया, और हिन्दू-धर्म प्रचार की एक संगठित सुन्दर

मशीन निर्माण की। बौद्ध-धर्म भिक्षु-धर्म है, और प्रत्येक बौद्ध गृहस्थ को कुछ समय के लिए भिक्षु-धर्म ग्रहण करना आवश्यक है। जैसे योरुप की युद्धप्रिय जातियों में युद्ध-विद्या का सीखना प्रत्येक नागरिक के लिए अनिवार्य है, वैसे ही बौद्ध राष्ट्र में प्रत्येक नागरिक के लिए भिक्षु-धर्म ग्रहण करना अनिवार्य था ; जैसे आज युद्ध-कला सीखकर नागरिक फिर अपने धन्धे में लग जाता है, इसी प्रकार भिक्षु-धर्म सीखकर बौद्ध नागरिक अपने अपने धन्धे को करने लगते थे; अर्थात् जंगी राष्ट्रों ने जो नियम अपने नागरिकों को युद्ध के लिये सदा तय्यार रखने के हेतु बनाये हैं, वैसे ही नियम भगवान बुद्ध ने बौद्ध समाज को धर्म-विजय के लिये तय्यार रखने के हेतु बनाये थे। जैसे जंगी राष्ट्र अपना सारा धन सैनिकों के सुख के लिये ख़र्च करता है, वैसे ही बौद्ध समाज अपना सर्वस्व भिक्षुओं के लिये दे देता था। बौद्ध काल में बड़े बड़े विहारों का निर्माण हुआ, जिनमें हज़ारों भिक्षु निवास करते थे। जैसे ब्रिटिश सरकार की फ़ौजी छावनियाँ आजकल जगह जगह पर हैं, और उनको क़ायम रखने के लिये विपुल धन ख़र्च होता है, इसी प्रकार बौद्ध-विहार भारतवर्ष में फैले हुए थे, जिनका ख़र्च चलाने के लिये राजा महाराजा और श्रीमन्त लोग जागीरें और गाँव विहार के साथ दान रूप में लगा देते थे; और उन विहारों से भिक्षु लोग तय्यार होकर सारे संसार में बौद्ध-धर्म का प्रचार करते थे। बौद्धकाल के बलशाली राजाओं ने भगवान बुद्ध की मूर्तियाँ मन्दिरों में स्थापित कीं; त्यागी और चरित्रवान भिक्षुओं के स्वर्गारोहण होने पर उनकी समाधियों की पूजा का प्रचार जनता में हुआ ; प्रान्तों के बौद्ध संतों की समाधियों पर मेले लगने लगे, और इस प्रकार देश में हिन्दू समाज की सम्पत्ति

मन्दिरों और परिव्राजकों के हाथों में चली गई।

जब स्वामी शंकराचार्य जी के आने पर ब्राह्मणों ने फिर ज़ोर पकड़ा और स्थान स्थान पर बौद्धों को परास्त कर ब्राह्मण-धर्म की स्थापना की तो उन्होंने अपने मत का प्रचार करने के लिये बौद्ध साधनों का प्रयोग किया। भगवान बुद्ध की मूर्ति के स्थान पर उन्होंने ब्रह्मा, विष्णु, और महेश आदि की मूर्तियां स्थापित कीं; बौद्ध सन्त, महात्माओं के नाम पर जहाँ मेले होते थे, वहाँ ब्राह्मणों ने दूसरे देवी देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित कीं; बौद्ध-भिक्षु-सङ्घ के स्थान पर दशनामी-साधु-सङ्घ का संगठन हुआ; इस प्रकार बौद्धों का अनुकरण कर हिन्दू समाज के नेताओं ने अपने समाज की सारी शक्ति और सम्पत्ति को हिन्दू मन्दिरों और साधुओं के मठों की सेवा में लगा दिया। मन्दिरों और मठों में लक्ष्मी की इतनी वृद्धि हुई कि हिन्दुस्तान से बाहर दूर देशों की भुक्खड़ जातियों के मुँह में पानी भर आया, और वे भारतवर्ष पर चढ़ दौड़ीं। ब्राह्मणों ने बौद्धों के प्रचार के ढंग और साधनों का तो अनुकरण किया, पर जिस कर्मयोग की भित्ति पर भगवान बुद्ध ने अपने भिक्षु-संघ की बुनियाद डाली थी उसकी वे उपेक्षा कर गये। परिणाम यह हुआ कि वे मन्दिर और मठ, धर्म-विजय करने के बजाय, पाप संचय करने लगे।

वही सिलसिला अब तक चला जाता है। हिन्दू समाज की सम्पत्ति खिंच खिंच कर मन्दिरों, पुजारियों, पंडों, महन्तों, और साधु संन्यासियों के पास जाती है, और वहाँ से व्यभि-चार, दुर्व्यसन, और अकर्मण्यता के फल तय्यार होकर हिन्दू जनता में बँटते हैं, और हिन्दू जनता दिन प्रति दिन दुर्बल, कायर

और निराशावादी होती जाती है। भगवान बुद्ध का आदर्श बड़ा ऊँचा था और सम्राट अशोक ने उस आदर्श पर चलकर भारतवर्ष की कीर्ति को संसार में अमर कर दिया, पर हम लोगों ने बौद्ध-धर्म के साथ द्वेष रखने के कारण उस महान आदर्श के प्रचण्ड साधन "भिक्षु-संघ" का उपयोग करना नहीं सीखा। हमारे अयोग्य और अनपढ़ साधु हमारे लिये भार रूप हैं; वे समाज का धन वर्बाद कर समाज में बुराइयाँ फैलाते हैं; मन्दिरों और मठों में पापों के क्रीड़ालय स्थापित हैं और वे हिन्दू जाति को ग्रस रहे हैं।

अतएव, संगठन के सैनिकों को बहुत शीघ्र मन्दिरों और साधुओं के सुधार की ओर लगना होगा। मन्दिरों के बदमाश महन्तों को निकाल कर उनके स्थान पर सच्चरित्र और योग्य पुरुषों को बैठाना होगा; मन्दिरों की सम्पत्ति शिक्षा-प्रचार में ख़र्च हो, ऐसा प्रवन्ध करना होगा। निकम्मे, अनपढ़, चरसी, गंजेड़ी, और हट्टे कट्टे साधुओं और भिक्षुकों को भोजन और पैसा देना तुरंत वन्द कर देना चाहिए। कपड़ा रङ्ग लेने से कोई साधु नहीं बन जाता; भेष की पूजा का लचर ख्याल जनता के दिल से उठा देना चाहिए। आज कल इस गिरे हुए ज़माने में चोर, डाकू, गुण्डे मुसलमान, सभी कपड़ा रंग कर जटा बढ़ा, भस्म रमा लेते हैं, और साधु बन बैठते हैं। क्रान्ति की मंडली के सैनिकों को घूम घूम कर लोगों से प्रतिज्ञा लेनी होगी कि वे खाली भगवा कपड़ा देख कर किसी भी साधु को भोजन वस्त्र न देंगे। आज चैतन्य होने का ज़माना है, काम बाँट लेना चाहिये। मन्दिरों का सुधार करने वाले सैनिकों की मण्डली अलग तय्यार हो; पाखण्डा साधुओं का खाना पीना बन्द करने वाली मण्डली दूसरी हो; जिसको जिस काम की

योग्यता हो उसे वह काम उठा लेना उचित है; दीर्घ सूत्री बनना अच्छा नहीं, काम पर लग जाना चाहिए। यदि मन्दिरों का रुपया कांग्रेस के देशभक्तों के हाथ में हो, यदि उस धन से राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार हो, तो कितनी जल्दी देश का उत्थान हो जाय। पण्डों, महन्तों और मठाधीशों के हाथों में करोड़ों रुपये की आमदनी है, इतने प्रचुर धन से क्या नहीं हो सकता। इसलिये हिन्दू संगठन के प्रेमियों को अपने इस बड़े ख़ज़ाने पर क़ब्ज़ा करने की बहुत जल्द फ़िक्र करनी चाहिए। हिन्दू समाज में आज चारों तरफ़ से क्रान्ति करने की ज़रूरत है। सब गन्दा, सड़ा, बोदा हिस्सा, काट कर फेंक देना चाहिए। जाति के बच्चों में कर्मयोग की शिक्षा फैलाने की अत्यन्त आवश्यकता है।

कितना महान काम हमारे सामने है। क्रान्ति का फ़ौज में लाखों सैनिकों की भर्ती जब तक नहीं होगी, तब तक हिन्दू-संगठन कैसे हो सकेगा। काम करने का समय आ गया है; हिन्दू संगठन के लिये समय उपयुक्त है, उचित अवसर का लाभ लेने वाले, क्रान्ति का झण्डा उठाने वाले दृढ़ प्रतिज्ञ सैनिकों की आवश्यकता है।

अठारहवीं आवाज़

हिन्दू संगठन के प्रति साधुओं का कर्तव्य

हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज की सेवा के व्रती लाखों साधु संन्यासी, भारतवर्ष के, ग्रामों, क़स्बों और नगरों में स्वतन्त्रता से विचरते हैं। हिन्दू जाति के इस घोर संकट के समय उनका क्या कर्तव्य है? इस विषय पर कुछ लिखना अनुचित न होगा।

क्योंकि जो प्रभाव हिन्दू जनता पर इन विरक्तों का पड़ता है, वह और किसी का नहीं पड़ सकता। अविद्या अन्धकार में सोई हुई हिन्दू जनता को यह महात्मा लोग बहुत शीघ्र जगा सकते हैं। उनका सिंहनाद हिन्दू सन्तान में नई जान फूँक सकता है। छोटे से छोटे क़स्बे में सन्त महात्माओं के मठ बने हुये हैं, जहाँ से हिन्दू-संगठन का काम बड़ी आसानी से हो सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि साधु सन्त हिन्दू संगठन के उद्देश्य को भली प्रकार जानें। जब से हिन्दू-संगठन की पुनीत प्रगति का आरम्भ हुआ है, जब से देश हितैषी हिन्दू नेता हिन्दुओं की सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिये उद्यत हुये हैं, तब से कई स्वार्थी लोग हिन्दू-संगठन के सम्बन्ध में ग़लत बातें लोगों में फैला रहे हैं। सनातनधर्म के नाम पर लोगों को ठगने वाले कुछ स्वार्थी पण्डित, हिन्दू-संगठन के लिये काम करने वालों को हिन्दू-धर्म का दुश्मन बतला कर, जनता में मिथ्या बातें फैलाने की चेष्टा कर रहे हैं। कई वर्णाश्रम-धर्म की दुहाई देकर, हिन्दू संगठन को बदनाम करने की घृणित कोशिश में है; ऐसे लोग हिन्दू-संगठन नहीं चाहते; क्योंकि इससे उनकी ख़ुदग़र्ज़ी में बाधा पड़ती है। ऐसे लोग अछूतोंद्धार के विरुद्ध जनता को भड़काते हैं, तथा आर्य समाज को गालियाँ देकर हिन्दू संगठन को बदनाम करते हैं। देश-द्रोही और समाज-द्रोही ऐसे लोगों के ज़हरीले असर से जनसाधारण को कैसे बचाया जाय, यही प्रश्न है।

इसी प्रश्न को हल करने के लिये हम अपने देश के साधु महात्माओं से विनीतभाव से प्रार्थना करते हैं, कि वे बहुत शीघ्र हिन्दू संगठन के यथार्थ स्वरूप को जनता के सामने रख, उन्हें शास्त्र का नाम लेकर लूटने वाले पण्डितों के जाल से बचावें।

हिन्दू जनता आज कैसी दीनावस्था में है, उस पर विधर्मी गुण्डे कैसा संगठित प्रहार कर रहे हैं, यह सब देख कर कौन ऐसा साधु संन्यासी होगा, जिसका हृदय न फटता हो। हिन्दू गृहस्थ सदा श्रद्धा और प्रेम से साधुओं की सेवा करते हैं, रमणियाँ बड़ी भक्ति भाव से विरक्तों की पूजा करती हैं; आज उन विरक्तों को हिन्दू गृहस्थों के प्रति अपना अपना कर्तव्य पालने का समय आ गया है। प्रत्येक साधु को दण्ड और कमण्डलु उठा कर, हिन्दू संगठन के काम में लग जाना चाहिये। ग्राम ग्राम और क़स्बे क़स्बे में घूम कर अज्ञानी जनता को चैतन्य करना चाहिये; और उसे स्वार्थी लोगों के हथकंडों से बचाना चाहिये। कोई नगर, कोई क़स्बा, हिन्दू संगठन संघ से खाली न रहे। सब जगह प्रत्येक वर्ण के हिन्दुओं को आपस में एक दूसरे के साथ प्रेम, और सहानुभूति से रहना उचित है। जहाँ पर अछूतों को पानी का कष्ट हो. वहाँ उच्च वर्णों के लोगों को समझा बुझाकर अछूतों को कुओं पर चढ़ने का अधिकार दिलाना चाहिये। मंदिरों तथा पाठशालाओं और स्कूलों में भङ्गी और चमारों को एक जैसा हक़ दिलाने का उद्योग करें। बड़ी शान्ति से गृहस्थों को समझा बुझाकर ऐसे विचार फैलावें, कि जिससे हिन्दू फ़ौलादी दीवार की तरह संगठित हो जावें, और कोई उन्हें सता न सके।

शोक है कि कई लोग साधुओं में यह बात फैला रहे हैं कि हिन्दू संगठन साधुओं और मठाधीशों का दुश्मन है। यह बात बिलकुल मिथ्या है। हिन्दू संगठन सुयोग्य और सच्चरित्र साधुओं को समाज में सब से ऊँचा स्थान देता है, और निकम्मे निखट्टू चरसी लोगों को कर्मयोग की शिक्षा देता है। हिन्दू

संगठन यह चाहता है कि मठ हिन्दू सभ्यता सिखलाने के केन्द्र बन जायँ, और वहाँ हिन्दू आदर्शों के पुजारी सन्यासी बैठें। हिन्दू संगठन मठों को मिटाना नहीं चाहता, वह तो केवल सुधार चाहता है। यह साधु के नाम को बदनाम करने वाले लोगों का दुश्मन है, और व्यभिचारी महन्तों तथा पुजारियों को पब्लिक-धन बरबाद करने से रोकता है। सदाचारी पुजारी और महन्त, आनन्द से विचरें, उनसे कोई नहीं बोलता। हिन्दू संगठन तो केवल सुधार और सामाजिक क्रान्ति का आन्दोलन है।

अतएव, जो साधु महात्मा क्रान्ति की फ़ौज में भर्ती होकर हिन्दू संगठन के सैनिक बनना चाहते हैं, जो नेता बन कर गृहस्थों के उद्धार करने की इच्छा करते हैं, जो लोभी शास्त्रियों और देश द्रोही पण्डितों के जाल से हिन्दू जनता को बचाना चाहते हैं, वे अब कमर कस कर तैयार हो जाँय और संगठन के बिगुल को हाथ में लेकर नगर नगर में इसे बजाते हुये घूमें। आज बैठने का समय नहीं, जिससे जो कुछ हो सकता है उसे उतना ही काम करना चाहिये। हिन्दू संगठन की इस जागृति के काल में जो साधु महात्मा इस महाप्रतापी हिन्दू जाति की सेवा करेगा, उसका नाम भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा।

अतएव, यदि हम अपने भँगवे कपड़े को सार्थक करना चाहते हैं, तो हमें हिन्दू संगठन का कठिन व्रत लेना होगा। स्थान स्थान पर व्यायाम शालायें खुलवा कर, हिन्दू बच्चों में क्षात्र-धर्म का तेज भरना होगा। दुखी किसानों के दुःखों का पड़ताल कर, उनको उन्नत-मार्ग दिखलाना होगा, और अपनी जाति के बच्चों को क़ब्रों और मज़ारों के नाशक असर से

बचाना होगा। हिन्दू जनता मुहर्रम के अराष्ट्रीय त्योहार में अपना हजारों रुपया बरबाद करती है, उसे इस जहालत के रास्ते से हटाना होगा। लाखों साधु आज इस कर्मक्षेत्र में आकर अपने जीवन को पवित्र बना सकते हैं। क्रान्ति की सेना में आज ऐसे लाखों विरक्तों की आवश्यकता है इसलिये आइए हम साधुओं का ज़बर्दस्त संगठन कर हिन्दू जाति की सेवा में लग जायें और तेईस करोड़ हिन्दुओं को एक सूत्र में पिरो कर उनका बलशाली संगठन कर दें। इसी में हमारा कल्याण है।

उन्नीसवीं आवाज़

विधवा विवाह

भारतवर्ष की सभ्यता में सतीत्व धर्म का दर्जा बड़ा ऊँचा है। संस्कृत साहित्य में सैकड़ों इस प्रकार के दृष्टान्त आते हैं, जहाँ पति और पत्नी के उत्कृष्ट-प्रेम के उदाहरण दिखलाये गये हैं; खास कर स्त्रियों की पति के प्रति शुद्ध भक्ति के बड़े निर्मल नमूने हमारे यहाँ मिलते हैं। शास्त्रों के रचयिता महात्माओं ने विषय वासना को संयमित रखने के लिए, स्त्रियों को स्थान स्थान पर पातिव्रत धर्म का उपदेश दिया है। महारानी सीता का नाम तो सतीत्व धर्म के लिये एक उच्चतम आदर्श है, और हिन्दुओं में रामायण का ऐसे ही श्रेष्ठ उपदेशों के कारण इतना प्रचार है कि ऐसा किसी ग्रन्थ का किसी भी देश में नहीं होगा। यही कारण है कि एक पति के मर जाने पर किसी युवा स्त्री के दूसरे विवाह की बात की थोड़ी भी चर्चा जब समाज में

होती है तो सच्चे सनातन धर्मी हिन्दुओं के हृदयों को बड़ी ठेस लगती है, और वे अत्यन्त दुखी होकर विधवा विवाह का विरोध करते हैं। हम ऐसे भावुक आदर्शवादी लोगों का आदर करते हैं और उनके हृदय की व्यथा को अनुभव कर सकते हैं ; पर उनसे हमारा सप्रेम निवेदन है, कि वे अपने समाज की वर्तमान अवस्था को आँखें खोल कर देखें और देश-काल के अनुसार हिन्दू समाज की जटिल समस्या—"विधवा विवाह" के प्रश्न—पर विचार करें।

निसन्देह यह बात सर्वमान्य है कि यदि हिन्दू समाज में लड़कों का विवाह जवानी में किया जाय, और वे विवाह बिरादरियों के छोटे छोटे दायरों को तोड़ कर हों, तो विधवाविवाह का प्रश्न आप ही आप हल हो जाय। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता, जब तक हिन्दू जनता में दस दस बारह बारह वर्ष के लड़कों के विवाह का रिवाज मौजूद है, जब तक छोटी छोटी बिराद-रियों के अन्दर विवाह करने की प्रथा जारी है, तब तक क्या किया जाय? जो लाखों विधवायें कठोर यातनायें सहती हुई मुसीबत के दिन काट रही हैं, उनकी क्या व्यवस्था हो? अनपढ़, मूर्खा और भीरु हिन्दू विधवाओं पर आज विधर्मी लोग किस बेरहमी से हमला कर रहे हैं, उनको बचाने का उपाय क्या है? हिन्दू समाज के सच्चे सेवकों की तरह हमें इन प्रश्नों पर विचार करना चाहिए ; हमें शेखचिल्लियों की तरह बातें करना छोड़ व्यवहार-कुशल बनना चाहिए ; समय की यथार्थ दशा का वीर बन कर सामना करना उचित है। जिन बातों का प्रबन्ध तत्काल करना आवश्यक है, जिनके किए बिना समाज का गौरव मिट्टी में मिल रहा है, उन्हें फ़ौरन अपने हाथ में लेना चाहिए। खाली आदर्श वाद के बहाने हम आज अपनी ज़िम्मे-

दारी से नहीं छूट सकते। जिन महात्माओं ने हिन्दू समाज के आदर्शों की स्थापना की थी, वे अपने युग में अपना कर्तव्य पालन कर गये। यदि वे आज मौजूद होते तो वे भी वर्तमान युग के धर्म के अनुसार नये शास्त्र और स्मृतियाँ वनाते। सतीत्व-धर्म का आदर्श कभी नष्ट नहीं हो सकता; वह एक सत्य सिद्धान्त है; पर उसका पालन सामाजिक अत्याचार से नहीं कराया जा सकता; वह आदर्श समाज का आदर्श-सिद्धान्त है। जिस समाज के पुरुष निर्लज्ज हो कर साठ वर्ष की अवस्था में दस वर्ष की कन्या से विवाह कर सकते हैं, जिस समाज में दुधमुँही बच्चियों का विवाह धर्म ध्वजाधारी पंडित करा सकते हैं, वह हिन्दू समाज विधवा विवाह की वात आते ही हिन्दू आदर्शों की दुहाई दे, यह सिवाय मूर्खता के और कुछ नहीं। विधवा विवाह समाज की अस्वाभाविक प्रथाओं का स्वाभाविक परिणाम है, जिसे हमें स्वीकार करना ही होगा, और जो हमारी स्वीकृति की परवाह न कर अपना मार्ग स्वयं बना लेगा।

इसलिये देश की वर्तमान अवस्था में क्या हम विधवाओं से सारी आयु भर के लिये ब्रह्मचर्य पालने की आशा करें? ज़रा अपनी छाती पर हाथ रखकर, प्रभु को साक्षी कर, बेचारी अनाथ विधवाओं की दशा पर विचार कीजिये। जो अन्याय हम उनके साथ करते हैं, सचमुच उसे लेखनी लिख नहीं सकती। हम स्वयं अपने अनुभव से कामदेव के प्रचण्ड हमलों की शक्ति को जानते हैं, और जब बेचारे ज्ञानी और अनुभवी उन थपेड़ों का मुकाबिला करने में असमर्थ हैं, तो इन दीन अबलाओं की बात कौन कहे। आज हमें बिरादरियों के झूठे भय को त्याग कर, विधवा विवाह को सामाजिक प्रथा बना देनी चाहिये। इसके

विषय में भी हमें पूरी क्रान्ति करनी पड़ेगी।

प्यारी विधवा बहिनो! उठो, चैतन्य हो जाओ, और अपनी ज़बान खोलो। यह भारतवर्ष तुम्हारी भी जननी है। तुम्हें इसकी गोद में सब प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं। तुम भेड़ बकरी नहीं हो, जो मनमाने अत्याचारों को सहन करो। तुम निर्भय और निर्द्वन्द्व होकर, अपने अपने अधिकरों की प्राप्ति के लिए खड़ी हो जाओ। तुम्हें भी पुरुषों की तरह पूरे अधिकार प्राप्त हैं। तुम्हें तुम्हारी इच्छानुसार पुनर्विवाह करने का अधिकार है। डरो मत, हिन्दू समाज में आज लाखों आत्माएँ हैं, जो तुम्हारी सहायता करने को तैय्यार हैं। विधवा विवाह सहायक सभायें खुल गई हैं। तुम विधर्मियों के जाल में मत फँसो; वे केवल तुम्हारा धन और तुम्हारा धर्म हरने की चेष्टा में हैं। हिन्दू धर्म के सामने उनका मज़हव दो कौड़ी काम का भी नहीं; उनका मज़हव केवल विषय भोग की मशीन है; स्त्रियाँ उनके मज़हव में केवल खेतियाँ हैं; जिन को वे भोग विलास की वस्तु समझते हैं। स्वराज्य के न होने से हिन्दू धर्म की मर्यादा नष्ट हो गई; इसी कारण ये कुप्रथायें फैल गई हैं; तुम भी समाज-सुधारकों के साथ मिलकर देश के उत्थान की चेष्टा करो। तुम्हारे ग्राम और नगर के निकट जहाँ-जहाँ आर्यसमाजें, कांग्रेसें और हिन्दू संघ हैं, उनके कार्यकर्त्ताओं के पास एक पोस्टकार्ड भेज कर सहायता माँगो। वे तुम्हारी हर प्रकार से मदद करेंगे। किसी अनजान, अपरिचित पुरुष अथवा कुटनी की बातों में आकर उसके साथ मत चल दो; अधम विधर्मियों ने आज तुम्हारा सर्वस्व नाश करने के लिये कमर कसी है। वे तीर्थों, स्टेशनों, रेलगाड़ियों और गली कूचों में नाना रूप धरकर,

तुम्हारा धर्म नष्ट करने के लिये डोल रहे हैं। उनसे बचने के लिये अपने पास एक छुरी रक्खो, जो अवसर पर तुम्हारे काम आवे।

क्रान्ति के सैनिको! संगठन के प्रेमियो! विधवाओं की सहायता के लिये अपने हृदयों को उदार और विशाल बनाइए। वर्तमान युग के धर्म के अनुसार विधवा विवाह एक बड़ा पुण्य कार्य है। अच्छे योग्य वर तलाश कर अपनी इन दुखी बहिनों को सुखी बनाइए। विधवा विवाह सभायें तथा विधवा आश्रम स्थापित कीजिए; जहाँ इन अबलाओं को आश्रय मिले; और वे बिरादरियों के अत्याचारों से बच कर शांति से अपना जीवन बिता सकें, तथा देश और समाज के लिये उपयोगी हो सकें। बड़े बड़े नगरों में विधवा सहायक सभाओं के केन्द्र बना कर, इस समस्या को हल कर देना चाहिये, यह काम तत्काल करने का है। जहाँ कोई विधर्मी किसी विधवा बहिन को बहकाता हुआ दिखलाई दे, फ़ौरन निर्भय होकर उस दुष्ट के पीछे पड़ जाना चाहिए, और उसे ऐसी सज़ा दी जाय, कि वह फिर दुबारा किसी अबला पर ज़ुल्म करने का साहस न कर सके। क्रान्ति के सैनिकों को, सड़क, बाज़ारों, स्टेशन और रेलगाड़ी में ख़ूब चैतन्य होकर चलना उचित है। आज निशाचर, घोर कुकर्म करने के लिए बाहर निकले हैं। हर पेशे के हिन्दू को आज हिन्दू संगठन में लग जाना चाहिए और अपनी शक्ति के अनुसार संगठन के किसी अंग को सम्भाल लेना चाहिए। विधवा विवाह के प्रेमी इसी में अपना समय दें, और अपनी शारीरिक शक्तियाँ विधवाओं की दशा सुधारने में लगा दें।

बीसवीं आवाज़

अछूतोद्धार

मानवी इतिहास का पाठ करने से यह बात भली प्रकार विदित होती है कि समाज की प्रारम्भावस्था से ही ऊँच नीच का भाव मनुष्यों में चला आता है। जब मनुष्य जङ्गली था, जब वह शारीरिक बल का उपासक था, जब उसे भलाई और बुराई का ज्ञान न था, तो वह अपने से कमज़ोर लोगों को समाज में नीचे दर्जे पर रखता था। बलवान और संगठित लोग उच्च-श्रेणी के माने जाते थे और उन्होंने अपना एक वर्ण क़ायम किया; जिसके हाथ में समाज की सारी शक्ति स्थिर रखने की व्यवस्था की गई। आपस की लड़ाइयों में, जो लोग बन्दी होते थे, वे दास या शूद्र बनाए गए और उन्हीं से कुल मेहनत मज़दूरी और सेवा का काम लिया गया। लड़ाई लड़ने वाले क्षत्री समाज में बड़ा आदर पाते थे और युद्ध-विद्या के सिवाय दूसरा काम नहीं जानते थे। अपनी भुजाओं के बल से समाज में अपना प्रभुत्व रखना यही उनका कर्तव्य था। जब मज़हब का भाव उदय हुआ तो कुछ लोगों ने जन साधारण के मिथ्या विश्वासों को नया स्वरूप देकर ईश्वर और परलोक की रचना की, ताकि इन अज्ञात बातों के द्वारा वे अधिक प्रभुत पा सकें। इस प्रकार क्षत्रियों ने इस लोक का राज्य सम्भाल लिया और ईश्वर के प्रतिनिधियों ने परलोक का—बाक़ी जनता केवल दास बन गई। जब व्यापार का समाज में प्रवेश हुआ और उसके ज़रिये से धन की प्राप्ति होने लगी, समाज कुछ अधिक सभ्य हुआ तो वैश्यों के लिए भी समाज में जगह

निकाली गई और एक नये शब्द "द्विज" का आविष्कार हुआ। क्षत्री राज्य करने वाले योद्धा, ब्राह्मण ईश्वर के प्रतिनिधि तथा परलोक के ठेकेदार और वैश्य शान्ति के समय व्यापार करने वाला समुदाय—बस ये तीन वर्ण ऊँचे दर्जे के बनकर बैठ गये; मेहनत मज़दूरी और सेवा का सारा काम करने वाले लोग शूद्र बने। इस प्रकार समाज में मज़दूरी के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न हुआ।

बस, वही शूद्र आज पतित कहलाते हैं। सदियों का अत्याचार इन्होंने सहन किया है और उस अत्याचार के बदले में इन्होंने हिन्दू-जाति का दुर्बल भी बना दिया है। मज़दूरी की महत्ता समाज में से लोप हो गई है और समाज का सारा चक्र जन्म के आधार पर चलता है। योरुप में भी इसी प्रकार सामाजिक भेदों का विकास हुआ था; वहाँ भी भूमिपति और पादरी, दोनों भद्र लोग माने जाते थे और उन्हीं के वंशज समाज में प्रभुता पाते थे। धीरे धीरे योरुप की जनता चैतन्य हुई और उसे अपने अधिकारों का ज्ञान हुआ। पहिले धामिक विप्लव हुआ, क्योंकि इसके बिना कोई भी दूसरा सुधार संभव नहीं हो सकता। धामिक बन्धन ढीले होने पर लोगों को स्वतन्त्र सोचने की आदत हुई; वे अपनी दशा पर विचार करने लगे; आँख कान खोलकर चलने लगे और उच्च जातियों के साथ अपना मुक़ाबिला करने लगे; समाज में संघर्ष शुरू हुआ; व्यापार की वृद्धि हुई; कल-कारख़ाने बनने लगे; मज़दूरों के संघ क़ायम हुए और समाज में साम्यवाद के युग का प्रादुर्भाव हुआ।

योरुप की उसी उन्नित के पुण्य प्रताप से भारतवर्ष में सामाजिक अशान्ति प्रारम्भ हुई। रेलों के द्वारा जन साधारण एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में जाने लगे, उन्हें मुक़ाबिले का मौक़ा

मिला; ईसाई मिशनरियों ने अपनी सभ्यता की अच्छा बातें ईसाई-धर्म की बरकतें बताकर हिन्दू समाज के मज़दूर पेशा लोगों को निगलना शुरू किया। हिन्दू समाज के अत्याचारों से पीड़ित लाखों हिन्दू ईसाई हो गये और हिन्दू समाज को छोड़कर एक अलग सम्प्रदाय बना बैठे। मुसलमानों ने पहिले से ही हिन्दू समाज की इस दुर्व्यवस्था का बहुत कुछ फ़ायदा उठा लिया था। दोनों विधर्मी ताक़तों के दबाव से हिन्दू समाज चैतन्य हो उठा और उसने अपनी भयंकर भूल पर विचार करना शुरू किया। प्रश्न यह उठा कि पतितों का उद्धार कैसे हो? पुराने ढर्रे के हिन्दू इन श्रमजीवियों के साथ खान पान और विवाह शादी नहीं करना चाहते; वे उनको अपने कुओं और देवालयों में भी ले जाने के विरोधी हैं; वे इन श्रमजीवीयों के लिए अलग कुएँ, मन्दिर, पाठशालायें बनवा देने को तय्यार हैं, पर क्या इससे काम चल जायगा?

सुनिये आज हमें नये युग के धर्म को स्वीकार करना है और सदियों के पुराने हानिकारक रिवाजों को दूर करना है। सब से पहिले तो अछूतों को अपना उद्धार करने के लिये स्वयं खड़े होना चाहिये। हिन्दू नेताओं को ईसाई और मुसलमान होने का "अल्टीमेटम" देकर जो अछूत बन्धु अपना उद्धार करने का इरादा रखते हैं वे बड़ी भूल करते हैं। भला ऐसी धमकियों से कभी कोई सुधार हुआ करता है? यह तरीक़ा "समाजद्रोह" सिखलाता है और ऐसे समाजद्रोही लोग कभी भा अपना उत्थान नहीं कर सकते। हमारे ऐसे बहुत से बन्धु सौ डेढ़ सौ बरस से इस्लाम मज़हब में चले गये हैं, पर उन्होंने आज तक कुछ भी उन्नति नहीं की, उल्टा अधिक भ्रष्ट और जंगली बन गए हैं। मनुष्य का उत्थान सत्य और न्याय के लिये युद्ध

करने से होता है, मज़हबी दीवानापन से नहीं। हमारे अछूत भाइयों का परम कर्तव्य यह है कि वे जबर्दस्त सङ्घ बना कर अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए खड़े हों। वे सदाचार और पवित्रता के नियमों का पालन करें; अपनी पाठशालायें स्थापित कर अपनी सन्तान में विद्या का प्रचार करें। उच्च वर्णाभिमानी यदि उन पर अत्याचार करें, तो वे संघ-बद्ध होकर उस अत्याचार का सामना करें। हम बहुधा गाँओं में बसे हुए भंगियों और चमारों के साथ किये हुए अन्याय के समाचार सुनते रहते हैं; आज हम अपने उन दलित भाइयों को अपना प्रेम संदेश सुनाते हैं। जो अपनी मदद आप नहीं करता, उस की सहायता ईश्वर भी नहीं करता। इसलिये हमारे अछूत भाइयों का यह परम धर्म है कि वे अन्याय और अत्याचार का विरोध करना सीखें। बीज जब तक स्वयम् मिट नहीं जाता तब तक वह दूसरे बीजों को पैदा नहीं कर सकता। प्राणों के मोह को त्याग कर जो लोग अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध खड़े होते हैं उन्हीं को अधिकारों की प्राप्ति होती है और उन्हीं का अभ्युत्थान होता है।

यहाँ पर लोग हम से कहेंगे कि क्या इस प्रकार हिन्दू समाज में घरेलू युद्ध नहीं होगा? हाँ होगा, पर इसकी ज़िम्मेदारी अत्याचार और अन्याय करने वालों के सिरों पर होगी। हिन्दू समाज के हितैषी उच्च वर्ण के लोगों को अब अपना कर्तव्य निश्चित कर लेना चाहिए। नये युग के धर्म के अनुसार समाज में अछूत पन एक कलङ्क है, जिसे कोई भी भला आदमी सहन नहीं कर सकता। समाज व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को मानता है, इसके अनुसार कोई भी मनुष्य किसी को दूसरे के साथ रोटी बेटी का व्यवहार करने के लिये मजबूर नहीं कर सकता, लेकिन

समष्टि के भी धर्म होते हैं, जिनके प्रति समाज के सदस्यों का कुछ कर्तव्य होता है। जब हम साफ़ देख रहे हैं कि दूसरे धर्म वाले हमारे भाइयों को सामाजिक सहूलियतें देकर हमारी हानि पर तुले हुये हैं तो हमें देश काल समझ कर अपनी रक्षा करनी ही होगी। राजनीतिक अधिकार समाज के सब सदस्यों को एक जैसे मिलने ज़रूरी हैं। पब्लिक कुएँ और मन्दिर, पब्लिक उद्यान और पाठशालायें, पब्लिक दफ़्तर और कौन्सिलें, सब में एक भङ्गी के लड़के का ऐसा ही अधिकार है जैसा कि एक ब्राह्मण के बालक का। हम यदि अपने अछूत भाइयों को यह पब्लिक अधिकार देते हुये घबराते हैं तो हम केवल अपनी समाज के साथ द्रोह करते हैं। सैकड़ों वर्षों की कुरीतियों से जर्जरित हिन्दू समाज को आज सङ्गठित करने का समय आ गया है। क्षात्रधर्म किसी एक समुदाय का धर्म नहीं बल्कि सब का साझा धर्म है। ईश्वर और परलोक के नाम पर हम अपनी दुकानदारी नहीं चला सकते। आज सेवा और बलिदान की कसौटी पर ब्राह्मण वर्ण तोला जाता है; आज मनुष्यों और स्त्रियों के लिये बराबर अधिकार का युग है, ऐसे युग में हिन्दुओं को अछूतपन का अन्त करना ही होगा, और अपनी प्राचीन सभ्यता की रक्षा तथा अपने प्यारे देश की स्वाधीनता प्राप्ति के हेतु हिन्दूसंगठन के सुदृढ़ क़िले की रचना करनी ही होगी। वह संगठन सात करोड़ अछूतों को बराबर के अधिकार दिये बिना नहीं हो सकता।

क्रान्ति के सैनिको! सुनो ग्राम ग्राम और नगर नगर में साम्यवाद के सन्देश को ले जाओ और अपने अछूत भाइयों को उठाओ। उन्हें शुद्धाचार की शिक्षा देकर भारतवर्ष की सभ्यता और उसके साहित्य की महिमा सुनाओ और उनसे कहो कि हिन्दु-

स्तान के गौरव के लिए जीना ही सच्ची ज़िन्दगी है। उन पर जो भूमिपति अत्याचार करते हैं उनसे मिल कर दलितों के दुःखों की निवृत्ति के उपाय करो; अछूतों में आत्म-विश्वास भरो और उच्च वर्ण के लोगों को शान्ति और प्रेम से समझा बुझाकर अछूतों के उद्धार-कार्य में लग जाओ। सात करोड़ अछूत, जब अन्याय और अत्याचार का मुक़ाबिला करना सीख जायँगे, तब हिन्दू संगठन की बड़ी सुन्दर मशीन तैयार हो जायगी।

इक्कीसवीं आवाज़

राष्ट्रीय त्योहार

जब से मनुष्य समाज का संगठन हुआ है, तभी से वीर पूजा का रिवाज चला आता है। वीर पूजा का भाव कृतज्ञता, आदर और प्रशंसा का द्योतक है। समाज में जो लोग बलवान, धीरमान और चरित्रवान होते हैं, उनके प्रति प्रेम और श्रद्धा का भाव दिखलाने के लिए जन साधारण उनके जन्म दिन का मनाते हैं। जब किसी महापुरुष के उद्योग से समाज के कष्टों की निवृत्ति होती है और उसकी निवृत्ति में यदि उसका बलिदान हो जाए, ता लोग अत्यन्त कृतज्ञतावश उसके शहादत के दिन को, बड़े चाव के साथ मनाते हैं। यदि जाति युद्ध क्षेत्र में लड़ने के लिये जाए और वहाँ पर उसका कोई योद्धा अलौकिक वीरता दिखाकर शत्रुओं के दाँत खट्टे करता है, तो लोग उस विजय-दिवस को अत्यन्त शुभ मानकर उसे अपना राष्ट्रीय त्योहार बनाते हैं। इस प्रकार हज़ारों वर्षों से वीर पूजा का

भाव सब देशों में चला आता है। जाति के इतिहास को स्वरक्षित रखने के लिए, आने वाली सन्तान के हृदय में अपने पूर्वजों की कीर्ति को ताज़ा रखने के लिए, और जन साधारण में जातीय उत्साह भरने के लिए वीरपूजा एक सञ्जीवनी शक्ति है।

परन्तु उस सञ्जीवनी शक्ति का उपयोग सफलता पूर्वक तभी हो सकता है, यदि वीर पूजा करने वाले सोच समझकर उसका उपयोग करें। साधारण काम करने वाले, मामूली बलिदान की भावना दिखाने वाले, और ख्याति की लालसा से दौड़ धूप करने वाले "वीरों" को जो लोग श्रद्धेय, महामना, महात्मा, देश भक्त, वाचस्पति आदि उपाधियाँ दे देते हैं, वे वीर पूजा का केवल निरादर करते हैं और उसकी सञ्जीवनी शक्ति को निर्बल बना देते हैं। वीर पूजा करने के लिए विवेक की बड़ी भारी आवश्यकता है। यदि ऐरा ग़ैरा और नत्थू ख़ैरा सभी को वीर बनाकर अनेक उपाधियों से विभूषित किया जायगा तो भला हमारे कोष में सच्चे वीरों के लिए शब्द कहाँ से आयेंगे और उनकी पूजा कौन करेगा? भारतवर्ष जैसे विशाल देश में इस बात का ख़ास तौर से ख़्याल रखना चाहिए कि हम किसी भी व्यक्ति को महापुरुष की पदवी न दें, जब तक कि उसका कोई ख़ास निश्चित ठोस काम सारे देश के लिए उपयोगी सिद्ध न हो जाए। अमरीका वाले अपने बड़े से बड़े हाकिम को "मिस्टर प्रेसिडेण्ट" कहते हैं। वे "मिस्टर" के सिवाय दूसरी उपाधि देते ही नहीं, ताकि उनके कोष के सुन्दर और वीरता सूचक शब्द सच्चे देश भक्तों के लिए बने रहें। हमारे देश में तो अभी तक पूरी जागृति भी नहीं हुई और जब जागृति होगी तो सैकड़ों नये से नये कर्मवीर, क्षेत्र में ख़म

ठोक कर निकलेंगे। उस समय हम किस किस के लिए क्या क्या मानसूचक शब्द तलाश करते फिरेंगे। अतएव आज हमें विवेक को हाथ से न देकर वीरपूजा के लिए क्षेत्र तैयार करना होगा। साल के तीन सौ पैंसठ दिन होते हैं। उन तीन सौ पैंसठ दिनों में हिन्दुओं के छोटे बड़े वहुत से त्योहार आते हैं, जिनके मारे हमारी जनता का नाक में दम रहता है। प्रत्येक प्रान्त के अपने देवी देवता, अपने अपने साधु-सन्तों और फ़क़ीरों की क़बरें, और अपने अपने प्रान्तीय वीरों के दिन, अलग अलग हैं, जिन पर प्रायः मेले भरते हैं, जिनके कारण हमारी जनता रेलों में पशुओं की तरह लदी हुई इधर से उधर मारी मारी फिरती है। आज इस राष्ट्र-युग में हमें सब प्रकार के कूड़े कचड़े को निकाल कर बाहर फेकना है ताकि हम राष्ट्र निर्माण कर सकें और देश को स्वतन्त्र करने वाले वीरों की पूजा के लिए स्थान बना सकें। आज ऐसी किच पिच हमारे त्योहारों में हो गई है, आज भाँति भाँति के वीरों का इतना भीड़ भड़का हमारे यहाँ पर है कि उन नाटकी वीर, पीर और फ़क़ीरों के मारे लोगों को तनिक भी फ़ुरसत नहीं, इसलिए क्रान्ति के सैनिकों को राष्ट्रीय त्याहारों की बड़ी छानबीन करनी होगी। जो निकम्मे, निरर्थक और पुराने अराष्ट्रीय त्योहार हैं उन्हें एक दम बन्द कर देना होगा, ताकि ग़रीबों का रुपया बचे और वे उसे दूसरे अच्छे कामों में लगा सकें। जिन मठाधारियों और धर्माचारियों के ग़रीब जनता पर टैक्स लगे हुए हैं, जिनके एजेन्ट हर साल गाँव गाँव और क़स्बे क़स्बे में जाकर जन साधारण से धर्म के नाम पर टका वसूल करते हैं, और जो संड मुस्टण्ड साधु, मण्डलियाँ बनाकर, अपने चेलों से रुपया वसूल करते हैं, उन सब का वहिष्कार करना उचित है, ताकि

लाग अपने धन को देश की स्वतन्त्रता और राष्ट्रीय शिक्षा के प्रचार में ख़र्च करें।

अच्छा, यहाँ पर यह प्रश्न होता है कि कौन से त्याहार क़ौमी कहे जा सकते हैं? कौन से ऐसे वीर हैं जिन की पूजा करने के लिए हमें त्योहार मनाने चाहिये, साथ ही भविष्य में किन गुणों के कारण हम वीर पूजा के योग्य व्यक्ति को पहचान सकेंगे? सचमुच इन प्रश्नों का उत्तर देना अत्यन्त आवश्यक है। हमारे यहाँ इतने निरर्थक त्योहार जैसे नागपंचमी, भद्रकाली, भैरों का दिन, कुआँ वाला, ख्वाजा पीर, सैय्यद सालार, अमावस, एकादशी, और पूर्णमाशी के कई त्योहार— इस प्रकार इतने हिन्दू और मुसलमानी त्यौहार हैं कि जनता की गाढ़ी कमाई का बहुत सा धन अनाचार, व्यभिचार और ठगी में चला जाता है। यद्यपि इसमें कोई सन्देह नहीं कि जन साधारण को सैर तमाशे के लिए इस देश में ऐसे साधन नहीं हैं, जैसे कि पाश्चात्य देशों में ग़रीब से ग़रीब आदमियों को मिल जाते हैं, और हमारे ग़रीब आदमी इन मेलों पर जाकर मन बहलाव कर लेते हैं, परन्तु त्योहारों का जो राष्ट्रीय अभिप्राय है वह उनसे पूरा नहीं होता, उलटा बुराइयों की बहुत अधिक वृद्धि मेलों पर हो गई है। अतएव अब हमें नए सिरे से इस राष्ट्र-युग में के धर्म के अनुसार अपने राष्ट्रीय त्योहारों तथा मेलों को ठीक करना पड़ेगा। छोटे बड़े शहरों में जन साधारण के लिए इस प्रकार के सस्ते खेल तमाशों का प्रबन्ध होना चाहिए कि जिन में शिक्षा और मन बहलाव दोनों हो सकें, और लाग नित्य प्रति फुरसत के समय में चार पैसे खरच कर दिल बहला सकें। असल में त्योहारों का राष्ट्रीय स्वरूप हम लोग जानते ही नहीं और न वे वीर पूजा के

त्योहार, और राष्ट्र-भाषा की आवश्यकता है। पैसा कमाने वाले भले ही मन माने कैलण्डर बना कर, सैकड़ों वीरों के चित्र छाप कर, जनता को भुलावा देने का यत्न करें, पर वह समय बहुत निकट है कि जब लोग सच्चे वीरों को स्वयं पहचान लेंगे और कूड़े कचरे को निकाल कर फेंक देंगे। अतएव हमारी सम्मति में केवल दस इस प्रकार के राष्ट्रीय त्योहार हैं, जिन्हें हमारे देश की जनता को मनाना चाहिए। मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी के उपलक्ष्य में तीन त्योहार—रामनवमी, विजय दशमी और दीपावली; गीतामृत का पान कराने वाले कृष्ण चन्द्र का जन्म दिन, भगवान बुद्ध की ज्ञान प्राप्ति का दिन, शिवभक्तों और आर्य समाजियों की प्यारी शिवरात्रि, छत्रपति शिवाजी महाराज के सिंहासनारूढ़ का दिन, गुरु गोविन्दसिंह जी के जन्म दिन की पुनीत तिथि, जैन धर्म के आदर्श यतिवर महावीर का जन्म दिन, तथा ग़रीब से अमीर हिन्दू के दिल को आह्लादित कर देने वाली होली का उत्सव—बस यह दस* राष्ट्रीय त्योहार सारे भारतवर्ष में मनाए जाने चाहिएँ। भविष्य में भारतवर्ष की आज़ादी के लिए जो लोग निश्चित लड़ाइयाँ लड़ेंगे वे ही हमारी वीर पूजा के अधिकारी बन सकेंगे। यदि इस प्रकार हम अपने सारे देश के अन्दर इन राष्ट्रीय त्योहारों का प्रचार करेंगे तो हिन्दुओं का संगठन बहुत शीघ्र हो सकेगा।

*यह पुस्तक हिन्दू संगठन के लिए लिखी गई है, इसलिए हमने राष्ट्रीय त्योहारों में हज़रत ईसा मसीह के स्वर्गारोहण का दिन तथा मुहम्मद साहब का जन्म दिन सम्मिलित नहीं किया। अपनी "राष्ट्र धर्म" की पुस्तक में हम इस विषय पर अधिक प्रकाश डालेंगे और राष्ट्रीयता के सिद्धान्तानुसार राष्ट्रीय त्योहारों की विवेचना करेंगे—लेखक।

हमें पूर्ण विश्वास है कि क्रान्ति के सैनिक इस हमार बिगुल को हाथ में लेकर जन साधारण को इन राष्ट्रीय त्योहारों का महत्व समझाएँगे और निरर्थक त्योहारों का वहिष्कार कर हिन्दू संगठन में सहायता देंगे।

पाठक! हिन्दू समाज में क्रान्ति करने वाले साधनों को आप ने जान लिया है अतएव अब हम आप को 'संगठन का इतिहास' सुनाते हैं ताकि आप आधुनिक युग के आदर्शानुसार हिन्दुओं का संगठन कर सकें।

पुराय संचय कीजिये,

स्वामी श्रद्धानन्द जी अपना कर्तव्य पालन कर वीर गति को प्राप्त हो गये। वे शुद्धी और संगठन का प्रचार करते थे। मज़हबी दीवाने मुसलमान मौलवी विचार स्वातन्त्र्य के विरोधी हैं। वे इस्लाम के सिवाय किसी दूसरे मज़हब को दुनिया में रहने देना नहीं चाहते। ऐसे लोगों के साथ मिलकर कोई भी सभ्य समाज सुख पूर्वक नहीं रह सकता। आज भारतवर्ष के ईसाई, पारसी और हिन्दुओं को यह बात पूर्णतया प्रगट होगई है कि इस्लाम का वह स्वरूप जिसका प्रचार मजहबी दीवाने मौलवी भारतवर्ष में कर रहे हैं, मानवी समाज के लिये बड़े खतरे की चीज़ है। इसलिये सबको मिल कर मुसलमानों की शुद्धी करनी चाहिये और मज़हबी दीवाने मौलवियों के प्रति जनता में तिरस्कार का भाव पैदा करना चाहिये मुसलमानों का हिन्दू या ईसाई हो जाना भारतवर्ष के लिये लाभकारी होगा, क्योंकि हिन्दू और ईसाई धार्मिक-सहन-शीलता के पक्षपाती हैं और आपस में मिल कर प्रेमपूर्वक रह सकते हैं। हिन्दुओं को चाहिये कि प्रत्येक नगर में शुद्धी सभायें खोल कर हज़ारों मुसलमानों को अपने समाज में मिलाने का प्रत्यत्न करें। मेरा यह बिगुल शुद्धो और संगठन की घोषणा करता है। इसका प्रचार अपने मित्रों में कीजिये। स्वयं पढ़िये और दूसरों को पढ़ाइये। कोई घर इस मेरे बिगुल से खाली न रहे। इसकी प्रतियाँ ख़रीद कर जनता में बांटिये और गो दान के तुल्य पुण्य संचय कीजिये।

तृतीय खण्ड

संगठन का विकसित स्वरूप

विषय सूची

बाइसवीं आवाज़

बौद्ध काल में हिन्दू-सङ्गठन

हमारे वेदों में "संगच्छध्वं सम्वदध्वं सम्वोमनांसि जानताम्" इस प्रकार का उपदेश आता है, जिससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वैदिक काल में संगठन के विचारों का विकास होना आरम्भ हो गया था और हमारे आर्य लोग अपने समाज का संगठन करने में समर्थ हुए थे। वर्णाश्रम की व्यवस्था इस बात को सिद्ध करती है कि सङ्गठन का प्रारम्भिक स्वरूप हिन्दुओं में वैदिक काल से प्रचलित हो चुका था, इसी कारण हमारे पूर्वजों ने अपने काल में बड़े बलशाली राज्यों की स्थापना की थी। बिना संगठन के समाज का कोई काम नहीं चल सकता। राज्य चाहे निरंकुश हो चाहे प्रजातंत्र—लेकिन बिना सङ्गठन के उस का बलवान होना असम्भव है। संगठन के दर्जे हैं। समाज जिस अवस्था में होता है, उसी के अनुसार उस के संगठन की आवश्यकता पड़ती है।

परन्तु आधुनिक काल में संगठन का जो स्वरूप हम, योरुप और अमरीका में, देखते हैं, उसके जन्मदाता भगवान बुद्ध थे। जब भगवान बुद्ध के हृदय में अपना संघ स्थापित करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई, जब उन्होंने देखा कि भिक्षु संघ के बिना उन के धर्म का प्रचार नहीं हो सकता तो उन्हों ने संघ को धर्म-प्रचार की मशीन बनाया। सैकड़ों वर्षों से संगठन के संस्कार तो उन्हें बपौती में मिले ही थे इसलिए उन्होंने बड़ी आसानी से प्राचीन संगठन के ढङ्गों का सुधार कर उसको अपने धर्म का मुख्य साधन बनाया। बौद्ध धर्म

के मानने वाले भिक्षुओं के लिए तीन महा मन्त्र, गायत्री मन्त्र की तरह, पवित्र बनाए गए। वे महा मन्त्र यह हैं—

बुद्धं शरणं गच्छामि।
धर्मं शरणं गच्छामि।
संघं शरणं गच्छामि।

जिनका अर्थ यह है—"मैं बुद्ध की शरण में जाता हूँ; मैं भगवान बुद्ध के बतलाए हुए धर्म की शरण में जाता हूँ; मैं भगवान बुद्ध के बनाए हुए संघ की शरण में जाता हूँ।" संसार के इतिहास में पहली बार संघ को धर्म में बड़ा ऊँचा स्थान मिला, और उसके नियमों का पालन करना बड़ा पुण्य माना गया। वैदिक काल में संगठन के सिद्धान्तों का उपदेश जन साधारण को धर्म के रूप में नहीं दिया गया था, परन्तु बौद्ध काल में संघ के विरुद्ध चलने वाला बड़ा गुनहगार और पतित समझा जाने लगा। जैसे आज कल फ़ौज के सिपाही को फ़ौज की आज्ञा भंग करने पर "कोर्ट मार्शल,, हो जाता है और फ़ौज के क़ायदों (discipline) को तोड़ना बड़ा अपराध माना जाता है, ठीक इसी प्रकार बौद्ध काल में संघ की महिमा बढ़ने लगी। बल्कि कहना यह चाहिए कि बौद्धों ने ही संघ की मशीन के नियम बना कर उन पर अमल करके, उनके द्वारा अद्भुत परिणाम पैदाकर, आने वाली जातिओं को यह सिखला दिया कि संसार में सब से बड़ी शक्ति संगठन के अन्दर है और जो जाति संगठन करना जानती है, जो संघ के नियमों पर अपने सदस्यों को चलाना सिखला देती है, संसार में कोई काम उस जाति के लिए असम्भव नहीं रह जाता। संघ के नियमों का धर्म समझ कर पालन करने की भावना जिस

समाज, जिस समुदाय और जिस दल में पैदा हो जाय, उस दल के लोग संसार-संग्राम में पूर्ण विजय प्राप्त करते हैं, और उन्हीं के हाथ में सफलता की कुञ्जी रहती है।

अच्छा, तो बौद्धों ने अपने संघ की मशीन से क्या अद्भुत काम कर डाला? सबसे पहली बात जो उस मशीन के द्वारा भारतवर्ष में हुई वह था पुरोहितों के प्रभुत्व का नाश। हज़ारों वर्षों से जिन ब्राह्मणों और पुरोहितों ने जनता पर निरंकुश राज्य किया था, उनके बल को बौद्ध भिक्षुओं ने चूर चूर कर डाला और जन साधारण के हृदय में अपने संघ की श्रद्धा स्थापित की। दूसरी बात उन्होंने यह की कि भारतवर्ष जैसे विशाल देश में जंगलों और पहाड़ों को लांघ कर—सब प्रकार के कष्ट सहन कर—उन्होंने बौद्ध धर्म के पवित्र संदेश का प्रचार इस देश में किया और अपने सङ्घ का बल यहाँ तक बढ़ाया कि सारे एशिया में उनके धर्म का प्रकाश फैल गया। आज भी सारे संसार में जितने बौद्ध धर्म के मानने वाले लोग हैं, उतने और किसी दूसरे मज़हब के नहीं। तीसरी अद्भुत बात जो बौद्ध संघ ने करके दिखलाई, वह था जन साधारण में शिक्षा का प्रचार। पहली बार संसार के इतिहास में बड़े २ विश्व विद्यालयों की स्थापना हुई, जहाँ दूर दूर देशों से हज़ारों विद्यार्थी विद्या पढ़ने के लिए भारतवर्ष में आने लगे। तक्षशिला और नालिन्दा के विश्व-विद्यालय संसार के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे। चौथी बात उस संघ ने यह करके दिखलाई कि अपने सारे समाज को धर्म प्रचार की मशीन बना दिया। जो सिद्धान्त भगवान बुद्ध के थे वे समाज के हृदय में प्रवेश कर गए और ऐसे ऊँचे दर्जे के चरित्र का विकास भारतवर्ष के लोगों में हुआ, जिसकी तुलना किसी सभ्य समाज में मिलनी कठिन है। जो त्याग, सेवा

और श्रद्धा हम आज ईसाई मिशनरियों में पाते हैं उनसे कहीं बढ़कर बौद्ध काल में हमारे बौद्ध भिक्षुओं ने दिखलाई थी। आज तो रेल तार का ज़माना है, सब प्रकार के वैज्ञानिक साधन ईसाई मिशनरियों को मिल सकते हैं, किन्तु बौद्ध भिक्षुओं ने ऐसे काल में अपने संघ की आज्ञापालन कर संसार को सभ्य बनाया था कि जब पदार्थ विज्ञान की कुछ भी उन्नति न थी। सब से बढ़कर बात जो बौद्ध संघ ने दुनिया को दिखलाई वह यह कि वे अपने धर्म का प्रचार दूसरे देशों में केवल धर्म की ख़ातिर करते थे, और उनका आदर्श धर्म-विजय था, लेकिन इसके विपरीत ईसाई मिशनरियों ने दूसरे देशों पर राजनीतिक प्रभुत्व जमाने की भी कोशिश की है।

ख़ैर हमारे कहने का तात्पर्य्य यह है कि आधुनिक संगठन (Modern Organisation) का असली स्वरूप बौद्ध काल में खड़ा किया गया। संघ से कितना ज़बर्दस्त विकास समाज का होता है, इसका प्रमाण बौद्धों ने अपने जीवन से दिखला दिया। ऊँचे दर्जे के त्याग का आदर्श मानते हुए भी, उन्होंने समाज के सभी अंगों को विकसित किया, और मानवी इतिहास में सङ्गठन के युग की नींव डाली। योरूप में जो अद्भुत चमत्कार हम आज संगठन का देखते हैं, उसका सारा श्रेय बौद्ध-संगठन के सिर पर है।

अब यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि बौद्ध संगठन का प्रभाव योरूप में कैसे पहुंचा ? किन कारणों से बौद्ध संघ द्वारा किए गए सामाजिक उत्थान को योरूप के लोग अब तक नहीं पा सके ? बौद्ध संगठन में और ईसाई संगठन में क्या फ़र्क था ? अगली आवाज़ में हम इन प्रश्नों का उत्तर देंगे।

तेइसवीं आवाज़
योरुप में ईसाई-संगठन

जब बौद्ध भिक्षु मध्य एशिया में प्रचारार्थ पहुंचे तो उन्होंने वहाँ भी बौद्ध मठ और विहार क़ायम किये। उन विहारों से भिक्षु और भिक्षुणियाँ धर्म प्रचार करने के लिए इर्द गिर्द के देशों में जाया करती थीं। हम यदि यहाँ पर बौद्ध काल का इतिहास लिखने बैठते तो हम अपनी सारी बातों को सप्रमाण सिद्ध करते जाते, परन्तु इस समय तो हमारा अभिप्राय ही दूसरा है। हम इस आवाज़ में यह दिखलाना चाहते हैं कि मध्य एशिया की जातियों को बौद्ध-सङ्घ का भली प्रकार ज्ञान था और बौद्ध धर्म का प्रभाव यहूदियों और तुर्कों में फैल गया था। यद्यपि रूसी लेखक नाटोविच ने तो स्पष्ट तौर से इस बात को सिद्ध किया है कि हज़रत ईसा मसीह कुछ वर्षों तक एक बौद्ध मठ में रहे, जहाँ उन्होंने बौद्ध सङ्घ का ख़ूब अध्ययन किया, लेकिन हम केवल यह दिखलाना चाहते हैं कि हज़रत ईसा मसीह के स्वर्गारोहण के बाद रोमन कैथोलिक लोगों ने जो मशीन धर्म प्रचार की तैयार की वह ठीक बौद्ध संघ के अनुकूल थी। उनके मठ (monasteries) बौद्ध बिहारों की तरह थे, जहाँ सन्यासिनें (nuns) बौद्ध भिक्षुणियों की तरह धर्म प्रचार का काम सीखती थीं और भिक्षु (monks) बौद्ध भिक्षुओं की तरह धर्मोपदेश की तैयारी करते थे। जैसे बौद्धों में भिक्षु और भिक्षुणियों को विवाह करने की मनाही है और सारी आयु ब्रह्मचर्य्य रखना पड़ता है, उसी प्रकार रोमन कैथोलिक लोगों ने भी अपने बिहारों में कड़ा नियम किया और अंत में कई शताब्दियों के बाद जैसे बौद्ध बिहारों में इसी

लाचारी-ब्रह्मचर्य्य के कारण अनाचार और व्यभिचार फैल गया, उसी प्रकार रोमनकैथोलिक पादरियों के मठों की भी दुर्दशा हुई।

लेकिन हम यहाँ पर यह दिखलाना चाहते हैं कि बौद्ध संघ के बाद या यूं कहिए कि बौद्ध संघ की राख पर योरुप में ईसाई संघ खड़ा हुआ और जो प्रभुता बौद्ध भिक्षुओं को सारे भारत वर्ष में प्राप्त थी, उससे बहुत बढ़ चढ़ कर ऐश्वर्य्य के सामान "रोमन कैथोलिक" पादरियों को मिले। बौद्ध लोग ईश्वर को नहीं मानते थे। इसलिए उनके संघ में इल्हामी किताब के लिए कोई जगह न थी। बौद्ध-संघ केवल चरित्र का उपासक था, इसी कारण उसने भारतवर्ष में आदर्श समाज का विकास करके दिखला दिया। ईसाई संघ ने नई बात यह की कि ईश्वर और ईश्वर की किताब बाइबिल (Bible) को अपने यहाँ सब से ऊँचा स्थान दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि ईसाई संघ ने निरंकुशता का रूप धारण किया। बौद्ध-संघ तो प्रजातन्त्र वादी था और वह विचार-स्वातन्त्र्य का उपासक था, परन्तु ईसाई संघ ने ईश्वरीय पुस्तक को पवित्र मानकर पादरियों के हाथों में ईश्वर की आज्ञाओं की सारी सत्ता दे दी। उस काल में बाइबिल हिब्रू और लातीनी भाषाओं में पढ़ी जाती थी, जन साधारण उन भाषाओं को नहीं जानते थे, अतएव स्वाभाविक ही ईश्वर के हुक्मों का स्वरूप केवल पादरी ही बतला सकते थे। इसी वजह से रोमन कैथोलिक पादरियों का सरदार—पोप—योरुप में सब से बड़ा शक्तिशाला बादशाह बन गया। योरुप की रियासतों के सभी राजे महाराजे उस से थर थर काँपते थे, क्योंकि पोप परलोक का ठेकदार था। उसके हाथ में न केवल प्रजा ही थी बल्कि हाकिमों के भाग्य का निबटारा भी वही करता था।

किन्तु पोप की यह असह्य शक्ति बहुत दिन तक न रही। पहले राजा लोग विद्रोही बनने शुरू हुए। जब पोप ने राजाओं का विद्रोह देखा तो उनके साथ समझौता करने की ठानी। समझौता यह हुआ कि इस लोक के मालिक राजा लोग बनें और परलोक की प्रभुता पोप के हाथों में रहे। ग़रीब प्रजा पर दोनों ओर से कठिन शासन होने लगा। उसी का विरोध करने के लिये स्वनाम धन्य मार्टिन ल्यूथर खड़े हुए और उन्होंने पोप के ख़िलाफ़ बगावत का झण्डा खड़ा किया। उस समय से योरुप में ईसाई संघ के दो दल—रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट—बन गए। उन दो दलों के बीच में कैसा भयङ्कर खून खच्चर हुआ, कैसी रक्त की नदियाँ बहीं, उन सब का इतिहास साक्षी है। हम केवल यह बतलाना चाहते हैं कि उस समय दुनियाँ की सभ्य जातियाँ यह समझती थीं कि मज़हब के नाम पर ही समाज का सङ्गठन हो सकता है। इस प्रकार के सामाजिक सङ्गठन का भयङ्कर परिणाम जब योरुप के चिन्ताशील विद्वानों ने देखा तो उन्होंने अपनी बुद्धि लड़ानी शुरू की। उन्होंने स्पष्ट रूप से देख लिया कि धर्म के नाम पर किया हुआ सामाजिक संगठन निरंकुशता की जड़ है, विचार स्वातन्त्र्य का दुश्मन है, और मुफ़्तख़ोरे पादरियों का पैदा करने वाला है। इसका सुधार कैसे किया जाए? इस पर वे बड़ी गम्भीरता से विचार करने लगे।

गम्भीरता के उसी विचार के अन्दर धर्म और विज्ञान का युद्ध छिपा हुआ है। योरुप के वैज्ञानिक लोगों ने इस बात का निश्चय किया कि धर्म को राष्ट्र के संगठन में कोई स्थान न मिलना चाहिए। विचार स्वातन्त्र्य मनुष्य का ईश्वर दत्त अधिकार है। उसे छीनने की शक्ति किसी भी शासक को नहीं। अतएव

मज़हब व्यक्ति की निजी चीज़ है, राष्ट्र उसमें कोई दख़ल नहीं दे सकता। हर एक मनुष्य को विचारों की आज़ादी मिलनी चाहिए। वह जैसा चाहे ईश्वर को माने। जब तक वह किसी दूसरे के अधिकारों में दख़ल नहीं देता, तब तक बड़े पादरी का यह हक़ नहीं है कि वह उससे किसी भी प्रकार की छेड़खानी कर सके। पन्द्रहवीं सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में योरूप मज़हब की कशमकश में पड़ा रहा; अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दिओं में योरूप ने सामाजिक संगठन के लिए नए मार्ग का आविष्कार किया। पाठक ! उस नए मार्ग की चर्चा करने से पहले हम अगली आवाज़ में आप को मुसलमानी संगठन की एक झलक दिखलाते हैं ताकि मज़हबी संगठन के ये तीन पर्दे—बौद्ध, ईसाई और मुसलमानी—आप भली प्रकार देख लें। दो तो आप ने देख लिये हैं, तीसरा बाक़ी है। जब आप उसे भी देख लेंगे तो आप के लिए यह निर्णय करना आसान हो जाएगा कि आधुनिक युग मज़हबी संगठन का नहीं; मज़हबी संगठन के दिन ख़त्म हो गए।

अच्छा, अब मुसलमानी संगठन का शिक्षा-प्रद पर्दा उठता है। ध्यान से देखिए।

चौबीसवीं आवाज़

मुसलमानी संगठन

ईसा के लगभग छः सौ वर्षों के बाद हज़रत मुहम्मद साहब का जन्म अरब में हुआ। अपने देश की गिरी हुई अवस्था पर उन्होंने आँसू बहाए। अरब के लोग सैकड़ों प्रकार के देवी देवताओं को मानते थे। उनके मन्दिर मूर्तियों से भरे पड़े थे।

मुहम्मद साहब ने यह सोचा कि भिन्न भिन्न देवी देवताओं के मानने वाले लोग कभी एक सूत्र में बँध नहीं सकते, इसलिए उन्होंने एक ईश्वर की पूजा का भाव अपने देश के लोगों में फैलाया। ईसाई और यहूदी क़ौमें उस समय बड़ी अच्छी दशा में थीं। इसलिए उन्होंने अरब के लोगों को उनकी ज़रूरत के मुताबिक एक नया मज़हब देने का इरादा किया। यहूदी और ईसाई मज़हबों की भित्ति पर उन्होंने अपने मज़हबी सिद्धान्तों की बुनियाद रक्खी और स्वयं पैग़म्बरी का दावा पेश कर जनता को अपने वश में कर लिया। वह मोजज़ों का युग था, इसलिए उन्होंने अपने मज़हब में मोजज़ों को भी शामिल किया। जो दल उन्होंने तैयार किया था, उसने उनकी मृत्यु के बाद ईसाइयों की तरह अपना सङ्गठन प्रारम्भ किया। ईश्वर और ईश्वर की किताब, और ईश्वर के नबी को समाज में सब से ऊंचा स्थान मिला। ईसाइयों की तरह मुसलमानों का सङ्गठन भी शक्तिशाली हो गया।

. चूंकि ईसाइयों ने रोमन और ग्रीक सभ्यताओं को अपने अन्दर जज़्ब कर—उनके विशेष गुणों का अपने समाज में समावेश कर—अपने साम्राज्य की उन्नति करनी प्रारम्भ की थी इसलिये आगे चलकर उन के राष्ट्रों को अपनी मुक्ति का मार्ग मिल गया, अर्थात् विचार स्वातन्त्र्य के जो बीज यूनानी फ़िलासफ़रों ने बोए थे वे आगे चलकर ईसाई सभ्यता का सहारा पाकर वृक्ष रूप बन गये। परिणाम यह हुआ कि योरुप में धर्म और विज्ञान का भयङ्कर युद्ध छिड़ गया। जिस युद्ध में मज़हबी मिथ्या विश्वासों को बुरी तरह परास्त होना पड़ा और वैज्ञानिक युग के सूर्य्य की प्रचण्ड रश्मियाँ सारे संसार में फैलने लगीं।

दुर्भाग्यवश मुसलमानी सङ्गठन को उस प्रकार की सभ्यता और संस्कृति प्राप्त न हुई। अरब के लोग निरे जंगली थे। एक .खुदा, एक पैग़म्बर और एक खुदाई किताब को पाकर उन्होंने बलशाली सङ्गठन तो कर लिया लेकिन उत्थान और विकास के दरवाज़े भी बन्द कर लिये। उनके मज़हबी जोश ने इर्द गिर्द की सभ्यताओं को भस्म कर दिया और उनके सङ्गठन की प्रचण्ड शक्ति का प्रभाव एशिया और योरुप के दूर दूर देशों तक पहुँचा। सुन्दर और सुगठित तुर्क जाति की इस्लामी विजयों ने सारे संसार में अपनी धाक जमा दी और रोमन कैथोलिक पोप की तरह उनका ख़लीफ़ा .कुस्तुन्तुनिया में अत्यन्त समृद्धिशाली बनकर बैठ गया।

अब यहाँ से इस्लामी सङ्गठन के पतन का इतिहास आरम्भ होता है। एक .खुदा, एक पैग़म्बर, और एक इल्हामी क़िताब के सहारे जितना ज़बर्दस्त सङ्गठन कोई सामाज कर सकता था, उसकी चरम सीमा तक तुर्क लोग पहुँच गए थे, लेकिन चूँकि उसमें विचार-स्वातन्त्र्य की कमी थी—आज़ादी से सोचने की शक्ति प्रत्येक सदस्य को नहीं मिली थी—इसलिए उस सङ्गठन में कोई गुञ्जाइश आगे बढ़ने की न रही और वहीं से उसका पतन आरम्भ हुआ। मुसलमानों का ख़लीफा इस लोक और परलोक दोनों का मालिक बन बैठा। उसके हुक्म के बिना न तो सांसारिक सुख मिल सकता था और न बहिश्त में ही दाख़िल होने की उम्मीद थी। जन साधारण सब मौलवी मुल्लाओं के शिकंजे में आ गए। तुर्कों की बादशाहत नष्ट होनी शुरू हुई; ख़लीफ़ा भोग-विलास में डूब गया; मौलवी मुल्लाओं ने जनता का मिथ्या विश्वासों के सहारे लूटना शुरू किया; क़बर परस्ती बड़े ज़ोर से जारी हुई; एक .खुदा को मानने वाले सैकड़ों प्रकार

के झूठे विश्वासों में पड़कर और भी अधिक जहालत में डूब गये; तुर्की साम्राज्य के सूबे धीरे धीरे बागी होने लगे; भोग विलास में पड़कर बलवती तुर्क जाति बेमौत मरने लगी।

इस प्रकार की भयङ्कर दुरवस्था देश-हितैषी नौजवान तुर्कों से न देखी गई। बर्लिन, पैरिस और लन्दन में रह कर इन तुर्क नौजवानों ने आधुनिक वैज्ञानिक युग के सङ्गठन का रसास्वादन किया था। उन्होंने समझ लिया कि जैसे योरुप की जातियों ने मज़हब और राष्ट्र को अलग अलग कर अपना सङ्गठन किया है, ऐसा सङ्गठन जब तक तुर्कों में न होगा तब तक तुर्क जाति की कोई उन्नति नहीं हो सकती। दृढ़ प्रतिज्ञ इन नवयुवकों ने क़ुस्तुन्तुनिया में नौजवान तुर्कों की एक समिति स्थापित की और उसकी शाखायें सारे देश में फैला दीं। सचमुच नौजवान तुर्कों का वह बलिदान तुर्की के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा। देश की दुर्दशा पर आँसू बहाने वाले हज़ारों नवयुवक इस समिति में शामिल हुए। छोटे से छोटे धंधे को करने में वे ज़रा भी नहीं सकुचते थे। किसानों में जाकर शाक तरकारी बेचना, मज़दूरों में मिलकर मज़दूरी करना, दफ़्तरों में जाकर क्लर्क बनना और जुलाहों के साथ उनके घरों में रहना—यह सब बातें तो उनके लिए बहुत साधारण थीं। वे व्याख्यान नहीं देते थे, क्योंकि व्याख्यान देने वाला तो फौरन धर्म द्रोही कह कर पकड़ लिया जाता था; उन्होंने चुपचाप जाति के हृदयस्थल में प्रवेश किया और अपनी आत्मबलि से मुल्क में क्रान्ति कर दी। युद्ध प्रारम्भ हुआ। सैकड़ों नवयुवक जेलों में ठूँस दिये गये। भयङ्कर यातनायें इन देश भक्तों ने सहीं। उन सब का नतीजा निकला—आधुनिक तुर्की।

आज तुर्की ने योरुप के इस सत्य सिद्धान्त को स्वीकार कर

लिया है कि प्रजातन्त्र-वाद का मज़हबी सङ्गठन के साथ कभी मिलाप नहीं हो सकता। जैसे एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं, इसी प्रकार इल्हामी किताब के मुताबिक राष्ट्र को चलाने वाली जाति स्वतन्त्रता की उपासक नहीं बन सकती। जब से कमाल पाशा ने तुर्की की बागडोर संभाली है, जब से उन्होंने योरुप के सामाजिक सङ्गठन के नए ढंग को अपने देश में चलाना आरम्भ किया है, तभी से मज़हबी दीवाने मौलवी मुल्ला उनके ख़ून के प्यासे हो गये हैं। वे अब प्रजातन्त्र-वाद का नाश करने पर तुले हुए हैं। कमाल पाशा की हत्या के लिये उन्होंने बहुत सी साज़िशें कीं, परन्तु—"जिन्हाँ रक्खे साइयाँ मार न सक्के कोय" के अनुसार कमाल पाशा का वे बाल भी बांका न कर सके। सैकड़ों वर्षों के मिथ्या विश्वासों में पड़े हुए तुर्कों को इस समय कमाल पाशा वैज्ञानिक युग की ओर ले जा रहे हैं और नए सङ्गठन के साधनों से अपनी जाति को सुसज्जित कर रहे हैं।

आप पूछेंगे कि आधुनिक वैज्ञानिक युग में समाज-सङ्गठन का कौन सा ढंग है? योरुप की जातियाँ कौन से सङ्गठन को मानती हैं? आइए अब हम आप को उस नए सङ्गठन का चमत्कार दिखलावें और मज़हबी सङ्गठन के साथ उसका मुक़ाबला करें। भारतवर्ष में हम किस प्रकार अपना सङ्गठन करें? इस प्रश्न पर भी प्रकाश डालने की हम चेष्टा करते हैं।

पच्चीसवीं आवाज़

संगठन का नवीन राष्ट्रीय स्वरूप

ईसा की अठारहवीं सदी के मध्य तक संसार की जातियाँ

मज़हब को मुख्य रख कर अपना संगठन किया करती थीं, लेकिन इसी सदी के अन्तिम भाग में फ्रान्स में भयङ्कर सामाजिक विप्लव आरम्भ हुआ। यद्यपि यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लैटो ने अपनी अमर पुस्तक "रिपब्लिक" में प्रजातन्त्र-वाद के सिद्धान्तों का बड़ी सुन्दरता से वर्णन किया है, परन्तु वह केवल एक आदर्श मात्र है। प्रजातन्त्र-वाद के छोटे छोटे उदाहरण संसार की सभी जातियों के इतिहास में थोड़े बहुत मिलते हैं, किन्तु फ़्रांस जैसे बड़े देश को प्रजातन्त्र-वाद के अनुसार चलाने का प्रयत्न मानवी इतिहास में पहली बार हुआ था। नई दुनिया के देश "यूनाइटेड स्टेट्स आफ़ अमेरिका" ने भी इसी समय अपने प्रजातन्त्र-राज्य की घोषणा की थी, लेकिन वहाँ की आबादी बहुत कम थी और एक ही ख़ून के लोग वहाँ पर आबाद थे; जो हबशी लोग वहाँ पर थे भी, उनको उन्होंने अपने रिपब्लिकन सिद्धान्तों में शामिल नहीं किया था। फ़्रांस ने पहली बार रङ्ग का भेद छोड़ कर दासता का गला घोंट मनुष्य समाज को स्वतन्त्रता का अमृत पिलाने का उद्योग किया। मज़हब की छीछालेदर कर डाला; पूंजीपतियों के छक्के छुटा दिये; पादरियों और पुरोहितों की इज़्ज़त को धूल में मिला दिया; फ्रांस में बुद्धिवाद का युग आरम्भ हुआ।

हम कह चुके हैं कि भगवान बुद्ध ने अपने भिक्षु संघ में धर्म को स्थान तो दिया, लेकिन ईश्वर और ईश्वर की किताब को कोई स्थान न दिया। इसी कारण बौद्ध-धर्म-प्रचार में कोई ख़ून ख़राबी नहीं हुई; उसने सच्चरित्रता को समाज में सब से ऊँचा स्थान दिला दिया। बौद्ध धर्म के उसी नीरोग प्रभाव ने हिन्दुओं को धार्मिक सहनशीलता का दिव्य मन्त्र पढ़ा दिया और सच्चरित्रता की पूजा जन साधारण करने लगे। ईसाई

और मुसलमानी संगठन ने ईश्वर, ईश्वर की किताब और पैग़म्बर—इन तीन बातों को बढ़ा कर जो संगठन किया उसका भयंकर परिणाम भी हमने दिखला दिया। अब यहाँ पर हम यह समझाने की चेष्टा करेंगे कि क्यों मज़हबी सङ्गठन त्याग देने योग्य है? मज़हबी सङ्गठन का युग अब ख़त्म क्यों हो गया है? सुनिये।

भारतवर्ष में इस समय सङ्गठन की आवाज़ उठी है। हम इसे ईश्वरीय आवाज़ कहते हैं। जब हमारी जाति सङ्गठन करने के लिए उठी है तो उसे सङ्गठन के पिछले इतिहास पर सिंहावलोकन करना अत्यावश्यक है। तीस करोड़ जनता का सङ्गठन कोई हँसी मज़ाक़ की वस्तु नहीं।

यदि हम आज अपनी जाति का सङ्गठन वेदों और शास्त्रों के नाम पर करेंगे तो साक्षात् ब्रह्मा भी हमें सङ्गठित नहीं कर सकता। वेद, बाइबिल और क़ुरान के आधार पर समाज-सङ्गठन के दिन ख़त्म हो गए। हम आज अपनी जनता की क़िस्मत को पण्डितों, पादरियों और मुल्लाओं के हाथों में नहीं दे सकते। यह स्वतन्त्रता का युग है। प्रत्येक मनुष्य को विचारों की स्वतन्त्रता मिलनी ही चाहिए, इसके बिना समाज का विकास नहीं हो सकता। जब हम इल्हामी किताब के सहारे सङ्गठन करेंगे तो उस किताब की सभी बातों को मानना हमारे लिए मजबूरी हो जायगा। सब आदमी इल्हामी किताबों के पंडित नहीं बन सकते, अतएव स्वाभाविक ही लोगों को उन किताबों के पंडितों की शरण लेनी पड़ेगी। जब वे पंडित अथवा मौलवी मुल्ला आपस में मज़हबी मत भेद रक्खेंगे तो जनता बेचारी बेमौत मर जायगी। सङ्गठन का सारा उत्तरदायित्व इस लोक की विजय पर है। हम जनता को

यह सिखलाना चाहते हैं कि वह परलोक के झमेलों में न पड़े। परलोक की गुत्थियों को सुलझाने वाले बनावटी दार्शनिकों की कमी नहीं; वे अपने सारे समय को परलोक के गोरख धन्धों में लगाते फिरें। हम जनता को यह बात भली प्रकार जना देना चाहते हैं कि परलोक इस लोक के कर्मों का फल है, अतएव हमारा मुख्य कर्तव्य इस लोक पर विजय प्राप्त करना है। जो साधन हमें इस लोक के सुधारने के लिए दरकार हैं हम उन्हीं की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। हमारी जाति के इस लोक की विजय के लिए सङ्गठन ही ब्रह्मास्त्र है।

वह सङ्गठन कैसे हो? जैसे योरुप की जातियों ने मज़हब को व्यक्ति की निजी चीज़ बना दिया है, उसी प्रकार हम भी मज़हबी झगड़ों को ताक पर रख दें और राष्ट्र के हित के लिए जो साझी बातें हैं, उन्हें अपने जीवन में धारण करें। आचार, सच्चरित्रता या इख़लाक की बातों का प्रचार जनता में करें और जन साधारण को मुल्क की आज़ादी और उसके कल्याणार्थ सङ्गठित करें। जो बातें संगठन की विघातक हैं, जो मज़हबी असूल हमारी आज़ादी में रोड़े अटकाने वाले हैं, जो बातें हमारे देश की आर्थिक उन्नति की विघातक हैं, उन सब को सदा के लिए त्याग दें। समाज-हित के लिए मज़हबी ज़ञ्जीरों को तोड़ दें और राष्ट्र को बलशाली बनाने के लिए देश-प्रेम का अमृत पान करें ताकि हम समष्टि धर्म को समझें और परोपकार के उच्चतम आदर्श को साक्षात करें।

बस हमारा कथन केवल यह है कि मज़हबी सङ्गठन का युग अब लौट कर नहीं आ सकता। जिसको इल्हामी किताब को मानना है माने, जिसको उसका प्रचार करना है करे, लेकिन इल्हामी किताब के मानने वालों की संख्या बढ़ा

कर एक क़ौम बनाने का ख़्याल निरा पागलपन है। अब संसार आज़ादी की ओर जाएगा, गुलामी की ओर नहीं; राष्ट्र-धर्म इस लोक को स्वर्ग बनाएगा। मज़हबी बहिश्त के जाल में नहीं फँसेगा। इसलिए सङ्गठन के प्रत्येक प्रेमी का यह कर्तव्य है कि वह वेद शास्त्र, क़ुरान और बाइबिल के नाम पर संगठन करने के ख़्याल को छोड़ दे। ग़ुलाम क़ौम का कोई मज़हब नहीं होता। सब से पहले देश की स्वतन्त्रता है, जिसमें हर एक आदमी को स्वेच्छानुकूल काम करने की आज़ादी मिले और अपना अपना मज़हब मानने की स्वाधीनता हो। एतदर्थ संगठन के प्रत्येक सिपाही को सब से पहले अपने देश और अपनी क़ौम को रखना चाहिए और तत्पश्चात् अपने मज़हब और संप्रदाय को स्थान देना उचित है।

अब यह बात तो बिलकुल स्पष्ट हो गई है कि भारतवर्ष में संगठन की प्रगति का जो प्रवाह बहने लगा है वह मज़हब की भित्ति पर नहीं चल सकेगा। यदि हम अपने यहाँ के संगठन की प्रगति को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें भी योरुप की तरह क़ौम-परस्ती के आधार पर संगठन करना चाहिए। यहाँ पर प्रश्न यह उठता है कि भारतवर्ष में तो हिन्दू, मुसल-मान, ईसाई, भिन्न भिन्न सभ्यताओं के लोग बसते हैं तो फिर यहाँ पर योरुप के ढंग का संगठन किस प्रकार हो सकेगा। हमारे जैसे क़ौम परस्त लोग हिन्दू-संगठन क्यों करते हैं, हिन्दी-संगठन क्यों नहीं करते? इसका उत्तर यह है कि हम हिन्दू शब्द को उसके धार्मिक जामे में नहीं देखते बल्कि इसके भौगोलिक रूप में देखते हैं। "हिन्दुस्थान" यह नाम इस देश का है, इसलिए इसके सब निवासी हिन्दू हैं। हिन्दू शब्द को उसका अपना उचित अधिकार कैसे मिले? मज़हबी संगठन

के स्थान पर क़ौमी संगठन का प्रचार भारतीय जनता में किस प्रकार हो सके? संगठन की इन कठिन समस्याओं पर प्रकाश डालने की चेष्टा हम अगली आवाज़ों में करेंगे।

छब्बीसवीं आवाज़

हिन्दू शब्द की महत्ता

हमारा देश बड़ा प्राचीन है। इसका सब से पुराना नाम आर्यवर्त है। जब आर्य लोगों ने इस देश पर अपना प्रभुत्व जमाया तो उन्हीं के नाम से इस देश के उत्तरीय भाग से लेकर, विन्ध्याचल तक के भूप्रदेश का नाम 'आर्यवर्त' पड़ा। बाद में जब आर्यों का विस्तार हुआ तो महा-प्रतापी भरत की कीर्ति के उपलक्ष्य में इस देश को 'भारतवर्ष' कहने लगे और 'भरत-खण्ड' यह नाम भी इस देश का प्रसिद्ध हुआ।

. शोक है कि आर्यों की उस समय की गौरवगाथा अभी तक प्राचीन इतिहास के पुराने पर्दों में छिपी हुई है। विद्वानों ने अभी तक उस पर ऐसा प्रकाश नहीं डाला कि जिससे उसकी घटनाओं को सिलसिले वार निश्चत रूप से कहा जा सके। यह काम केवल स्वतन्त्र भारत के बच्चे ही कर सकेंगे। जो इतिहास हमारे सामने है, जिसकी खोज निश्चित रूप से हो चुकी है, उससे पता चलता है कि बौद्धों की उज्जवल कीर्ति के काल में इस देश का नाम 'हिन्दुस्तान' प्रचलित हो चुका था। यूं तो वेदों में 'सप्त सिन्धु' नाम की चर्चा की गई है और पारसियों के धर्मग्रन्थ ज़िन्दावस्था में भी 'हिन्दू' शब्द का ज़िक्र आया है, पर जो विदेशी भारतवर्ष में आए—जिन्होंने

पहले पहल इस देश में पदार्पण किया—उन्होंने सिन्धु नदी के किनारे बसने वाले आर्यों के साथ सब से पहले परिचय प्राप्त किया, और वे हम लोगों को हमारी 'सिन्धु' नदी के नाम से ही हिन्दू कहने लगे। मध्य एशिया की जातियों का सब से पहले हमारे साथ सम्पर्क हुआ और शताब्दियों तक हमारा बनिज व्यापार उन्हींके साथ होता रहा। 'सिन्धु' के किनारे बसने वाले हमारे पूर्वज बड़े उत्साही, महा-पराक्रमी थे और वे अपने व्यापार के लिये दूर दूर जाया करते थे, इस लिये 'हिन्दू' नाम एशिया के भिन्न भिन्न देशों में प्रसिद्ध हो गया।

निस्संदेह तुर्कों के आने से बहुत पहले इस देश के लोगों का 'हिंदू' नाम सारे एशिया में प्रसिद्ध हो चुका था। क्योंकि जब बौद्ध धर्म की दुंदभी एशिया में गूंज उठी और दूर देशों के लोग अध्यात्मवाद के लिए हमारे देश में आने लगे, उस समय भी उन्होंने 'हिन्दू' नाम से ही हमारा व र्न किया है। चीनियों के प्राचीन साहित्य में यही नाम हमारे देश और हमारी जाति के लिए बराबर प्रयोग में आया है। जब तुर्कों ने इस देश पर हमला किया, तो वे द्वेष वश हमारी जाति के नाम को बुरे अर्थों में प्रयोग करने लगे। जैसे योरुप के पिछले महा समर में अङ्गरेज़ों ने द्वेष वश "जर्मन" शब्द का दुरुपयोग करना आरम्भ किया था और सारी दुनिया में "जर्मन" शब्द के लिए घृणा फैलाने की चेष्टा की थी, इसी प्रकार तुर्कों ने भी हमारे साथ किया। यदि अङ्गरेज़ों और जर्मनों का युद्ध एक सौ वर्ष तक बराबर बना रहता और जर्मन जाति अत्यन्त पददलित हो जाती तो अङ्गरेज़ी कोषों में जर्मन शब्द का वैसा ही अर्थ लिखा जाता, जैसा कि इस्लामी इतिहासकारों ने 'हिंदू' शब्द का

किया है। परन्तु आज तो वह बर्बरता का ज़माना ख़त्म हो गया है, इसलिए उस प्रकार की घृणा का भाव बहुत देर तक टिक नहीं सकता।

यद्यपि हमारे देश के कई एक सुधारकों ने हिन्दू शब्द के स्थान पर 'आर्य' शब्द का प्रचार करने की जी जान से कोशिश की है, परन्तु वे उसमें कृतकार्य नहीं हो सके। उसका कारण स्पष्ट है। हिंदी भाषा के सभी कवियों ने पिछले एक हज़ार वर्ष में उसी शब्द का प्रयोग अपनी पुस्तकों में कर, इसी की महत्ता की छाप जनसाधारण के हृदय पर विठलाने की चेष्टा की है। इस कारण जनता में 'हिन्दू' शब्द पूर्ण रूप से घर कर गया है और हमारा सदियों का इतिहास इसी नाम से रंगा जा चुका है। अतएव आज इस नाम को हटा कर, दूसरे नाम के प्रचार की चेष्टा करना सर्वथा निरर्थक है। तुर्क, पठान और मुग़ल बादशाहों ने इस देश के भिन्न भिन्न भागों में शताब्दियों तक राज्य किया, परन्तु वे भी इसके निवासियों के नाम से प्रसिद्ध 'हिन्दुस्तान' को बदल कर इसे 'मुसलमानिस्तान' न बना सके। यह नाम अब हमारा है। पृथ्वी राज के समय से अबतक बराबर इसी नाम के गौरव के लिए हमारे बुजुर्गों ने अपने देश के शत्रुओं से घोर युद्ध किया है। अतएव अब हमें इस नाम को और भी अधिक व्यापक बना कर इसे इसका सच्चा अधिकार देना चाहिये।

अच्छा, वह अधिकार क्या है? 'हिन्दू' शब्द जैसे पहले इस देश के निवासियों का नाम था, जैसे अब भी हिन्दुस्तान से बाहर की सभ्य जातियाँ यहाँ के सभी निवासियों को 'हिन्दू' कहती हैं, उसी प्रकार हमें भी इस शब्द को इसका राष्ट्रीय स्वरूप देना चाहिए। आज हम केवल हिन्दुस्तान में उत्पन्न

सम्प्रदायों के अनुयायियों को ही 'हिन्दू' कहते हैं, लेकिन अब भविष्य में हमें इस शब्द का प्रयोग अपने देश के सभी निवासियों के लिए करना पड़ेगा। हिन्दुस्तान का रहने वाला चाहे किसी मज़हब को मानता हो—ईसाई, मुसाई, पारसी, मुसलमान, यहूदी और हिन्दू—चाहे कोई हो, वह हिन्दू है। मज़हब मनुष्य की निजी चीज़ है, उसका उसकी जन्मभूमि से कोई सम्बंध नहीं। क़ौमियत जन्मभूमि से होती है, मज़हब से नहीं। हिन्दू शब्द क़ौम के लिए आना चाहिये, इसका व्यवहार देश के नाते से होना चाहिये। राष्ट्र के लिए ही यह नाम पहले व्यवहृत होता था, लेकिन हमारी ग़ुलामी ने इसे संकुचित बना दिया है। यदि हम अब फिर स्वतंत्र होना चाहते हैं, तो इसे इसके संकुचित दायरे से निकाल कर इसे राष्ट्रीय दर्जा देना चाहिए।

वह दर्जा 'हिन्दू' शब्द को कैसे प्राप्त होगा? इसका उत्तर स्पष्ट है। विचार-स्वातंत्र्य के कारण नागरिकों के मज़हब भिन्न भिन्न होंगे, पर अपनी जन्म-भूमि एक, सभ्यता एक, भाषा एक और देश-प्रेम एक होना चाहिए। सब से मुख्य वस्तु सभ्यता तथा संस्कृति है। एक देश के रहने वालों की एक संस्कृति होनी चाहिए, क्योंकि वही मूल है, जिस पर राष्ट्र का इमारत खड़ी की जाती है। अगली आवाज़ में हम हिन्दू संगठन के राष्ट्रीय तत्वों पर विचार करते हुए क़ौमपरस्ती की सङ्गठित मशीन के स्वरूप को भी पाठकों के सामने रखेंगे। ध्यान से पढ़िये।

सत्ताइसवीं आवाज़

हिन्दू-सङ्गठन के राष्ट्रीय तत्व

भारतवर्ष में जब से अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रचार हुआ है, जब से पाश्चात्य देशों के स्वतन्त्रता के विचार अंग्रेज़ी सभ्यता द्वारा इस देश में फैलने लगे हैं, तब से जातीयता की एक नई लहर यहाँ पर चलनी शुरू हुई है। अंग्रेज़ी कालिजों में पढ़े हुए लोग योरुपीय देशों की स्वतन्त्रता के इतिहास पढ़कर अपने देश की आज़ादी के स्वप्न देखने लगे हैं और यह समझने लगे हैं कि यदि वे सब धर्मों के लोगों को मिलाकर कोई पोलिटिकल समझौता कर लेंगे, तो उनका मुल्क शीघ्र ही आज़ाद हो जाएगा। उन्होंने कभी गम्भीरता से बैठ कर अपने देश की परिस्थिति का मुकाबला दूसरे देशों के साथ नहीं किया, और न कभी, उन्होंने जातीयता के मूल तत्वों के परखने की कोशिश ही की है। हमारे देश में ऐसे बहुत थोड़े आदमी हैं जो इस विशाल देश की सारी समस्याओं को मन में लाकर—उनका जीवितचित्र सामने रखकर—फिर देश की स्वाधीनता के प्रश्न को हल करने की चेष्टा करें। अधिकांश लोग तो ऐसे हैं जो अपने अधकचरे विचारों को लेकर देश की जनसंख्या की अत्यन्त अधिकता को स्वतन्त्रता का मुख्य साधन समझकर मन के मोदक खाने लग जाते हैं; वे समझते हैं कि उनकी बत्तीस करोड़ की आबादी के सामने मुट्ठी भर विदेशी कोई हक़ीक़त नहीं रखते। इसलिए भारतवर्ष की जनता को विदेशियों के विरुद्ध भड़काने में वे स्वतन्त्रता प्राप्ति की इति श्री मान लेते हैं। यही कारण है कि कांग्रेस के पिछले इकतालिस वर्षों के उद्योग का फल हमारी इच्छा अनुकूल नहीं निकला।

आइए, भारतवर्ष के साथ योरुप का मुक़ाबला करें। रूस को छोड़कर बाक़ी जितना योरुप का भाग है, उतना बड़ा हमारा सारा भारतवर्ष है। योरुप के उस भाग में बहुत से छोटे बड़े देश हैं जो सभी स्वतन्त्र हैं। उनमें से कई हमारे ज़िलों के बराबर हैं। इन सब छोटे बड़े स्वतन्त्र देशों के समूह का नाम योरुप है। आज तक सारा योरुप एक गवर्नमेंट के अधीन नहीं हो सका; हाँ, वहाँ राष्ट्र-संघ बनाकर आपस के समझौते को निपटाने की चेष्टा ज़रूर की जा रही है। जब एक ईसाई धर्म के मानने वाले, अत्यन्त शिक्षित और सभ्य योरुप के लोग आपस में मिलकर एक क़ौम नहीं बना सके तो भारतवर्ष के अनपढ़ और जात-पाँत में डूबे हुए—परस्पर विरोधी मज़हब रखने वाले—एक क़ौम कैसे बना सकते हैं? क़ौम बनाने के लिए जिन बातों की आवश्यकता है उन पर अभी तक हम लोगों ने ध्यान भी नहीं दिया। यहाँ पर यह प्रश्न होगा कि क्या भारतवर्ष को भी योरुप की तरह अलग अलग क़ौमों में बाँट देना पड़ेगा? इसके उत्तर में हमारा कथन यह है कि सब से बड़ी शक्ति जो सारे भारत को एक क़ौम में बद्ध करने में समर्थ हो सकती है, अनायास ही हमारे हाथ में आगई है और वह है बत्तीस करोड़ भारतीयों की साझी गवर्नमेंट। हम अपनी आँखों के सामने यह बात स्पष्ट रूप से देख रहे हैं कि मुट्ठी भर आदमी सात हज़ार मील के फ़ासले से आकर इस विशाल देश पर अपना शासन कर रहे हैं। उन मुट्ठी भर लोगों में क्या ख़ास बातें हैं कि जिन के बल पर वे इतनी आसानी से इतनी जनसंख्या के देश को एक शासन-सूत्र में बाँध सके हैं। अगर अंग्रेज़ इस देश में न आते तो भारतवर्ष योरुप की तरह भिन्न भिन्न राष्ट्रों में बँटा होता। कुछ भाग में मुसलमान, दूसरे में

सिक्ख, तीसरे में मरहठे, चौथे में राजपूत और पाँचवें में गोरखे राज करते होते। इतना बड़ा विशाल देश एक हिन्दू राज्य के अन्तर्गत कभी न हो सकता था और न भिन्न भिन्न प्रान्तों के लोग आपस में एक दूसरे के साथ सहानुभूति ही कर सकते थे। हमारे सामने ब्रिटिश गवर्नमेंट का निर्माण किया हुआ एक शासन-यन्त्र मौजूद है, उसका सङ्गठन मौजूद है। क्या उस यन्त्र के सङ्गठन को समझना, उस के मूल तत्वों का अध्ययन कर उससे लाभ लेना कोई गुनाह है? शायद ऐसा अवसर अपने इस विशाल देश को सङ्गठित करने का ऐसी आसानी से हमें न मिल सकता। हमें बड़ी तत्परता से इस अवसर से फ़ायदा उठाना चाहिए। वह कैसे? सुनिए।

इस देश का नाम हिन्दुस्थान है। हिन्दू इसके सब भागों में काफी संख्या में बसे हुए हैं। इस देश की चप्पा चप्पा ज़मीन हिन्दू संस्कृति की द्योतक है। इस देश के नदी नाले, जंगल पहाड़, और नगर—सभी हिन्दुओं के प्राचीन इतिहास की याद दिलाते हैं। कोई प्रान्त ऐसा नहीं है जहाँ हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ स्थान न हों। मोक्ष प्राप्ति में सभी हिन्दुओं का सभी प्रान्तों से साझा सम्बन्ध है। राष्ट्रीय-त्योहार सभी प्रान्तों में बराबर मनाए जाते हैं, किसी में कम किसी में ज़्यादा। साझा साहित्य हिन्दुओं को आपस में एक दूसरे के साथ प्रेम गाँठ से बाँधता है; वेद, शास्त्र, उपनिषदें, रामायण और महाभारत, तथा पुराण सभी प्रान्तों के हिन्दू बराबर मानते हैं और अपने अपने प्रान्त की भाषाओं में उनका प्रवचन करते हैं। वेदान्त का अध्यात्म-वाद सब हिन्दुओं पर बराबर प्रभाव डालता है। ऐसी अवस्था में देश-भक्त हिन्दुओं को अंग्रेज़ी शासन-सङ्गठन के राष्ट्रीय तत्वों को अपने सामने रखकर उन्हींके अनुसार अपना

सङ्गठन कर लेना उचित है, ताकि वे आवश्यकता पड़ने पर अपने देश का शासन भार आसानी से अपने हाथ में ले सकें। जब हिन्दुओं का सङ्गठन सुदृढ़ हो जायगा तो मुसलमान, ईसाई और पारसी चुम्बक पत्थर की तरह उनकी ओर खिंचे आएँगे और भारतवर्ष में एक हिन्दू जाति आसानी से बन जायगी।

अच्छा, वे कौन से राष्ट्रीय तत्व हैं जिनके बल पर अंग्रेज़ जाति भारतवर्ष में एक शासन क़ायम कर सकी है। उस सङ्गठन के मूल तत्वों को ब्यौरे वार हम नीचे लिखते हैं—

(१) एक भाषा—सब से पहली चीज़ एक भाषा की है, हिन्दू-सङ्गठन के प्रेमियों को एक राष्ट्र-भाषा हिन्दी का प्रचार सब प्रान्तों में करना चाहिए। हमारे देश का नाम "हिन्दुस्तान" क़ौम का नाम "हिन्दू" और भाषा का नाम हिन्दी है। अंग्रेज़ी शासन सङ्गठन में भी सब से पहली चीज़ एक भाषा है।

(२) खुला सामाजिक जीवन—दूसरी ग्रहण करने योग्य बात है खुले सामाजिक जीवन की। अंग्रेज़ी शासन-सङ्गठन में हम इसके गुण भली प्रकार देख सकते हैं। जो अंग्रेज़ यहाँ पर आए हुए हैं वह आपस में एक दूसरे के साथ मिल बैठ सकते हैं; उनमें कोई सामाजिक भेद-भाव नहीं; उनका खाना पीना, बैठना उठना, पहराव और चाल ढाल सब एक प्रकार की है। शादी विवाह में उनमें कोई सामाजिक बन्धन नहीं। यदि उन सब को इकट्ठा कर एक स्थान पर खड़ा कर दिया जाये तो वे लोहे की दीवार की तरह संगठित हो जाएंगे। उनका खुला सामाजिक जीवन उनके संगठन में पूरी सहायता देता है। वही खुला सामाजिक जीवन अपने हिन्दू संगठन के लिये हमें भी ग्रहण करना पड़ेगा।

(३) एक उद्देश्य—तीसरी बात है एक उद्देश्य की। इङ्गलैंड से चल कर जब कोई अंग्रेज़ अधिकारी भारत की ओर आता है तो स्वेज़ नहर पार करते ही उसके जीवन का एक ख़ास उद्देश्य हो जाता है, और वह उद्देश्य है ब्रिटिश साम्राज्य की हर प्रकार से रक्षा करना। बड़े से बड़े और छोटे से छोटे अंग्रेज़ अधिकारी के हृदय में प्राण रूपी यह उद्देश्य हर समय उपस्थित रहता है और उसी उद्देश्य से प्रभावित होकर वे अपना सारा आचार व्यवहार बना लेते हैं, इसी कारण हमारे इङ्गलिस्तान में घूमे हुए भारतीय बन्धु यह कह बैठते हैं कि भारत में रहनेवाला अंग्रेज़, इङ्गलिस्तान के अंग्रेज़ों से, भिन्न प्राणी हैं। असल में यह उत्तर दायित्व की बात है। इङ्गलैंड में रहने वाले अंग्रेज़ का उत्तर दायित्व वह नहीं है जो भारतीय अंग्रेज़ का है। यदि हम अपना हिन्दू सङ्गठन करना चाहते हैं तो हमें भी एक उद्देश्य निश्चित करना होगा और वह होगा भारतीय राष्ट्र की स्थापना। हमें अपने सारे चाल ढाल, अपने सारे रस्म व रिवाज और अपना सारा विचार प्रवाह उसी आदर्श के मुताबिक़ बनाना होगा। तेइस करोड़ हिन्दुओं का बलशाली सङ्गठन हो, उनका एक ज़बर्दस्त राष्ट्र स्थापित हो, उनका प्यारा देश उज्जवल कीर्ति को प्राप्त हो—यह एक उद्देश्य हिन्दू सङ्गठन के सभी प्रेमियों के हृदय में आ जाना चाहिए। यह एक उद्देश्य मुख्य हो जाए और बाक़ी सभी बातें गौण। जातपाँत, वेद, शास्त्र, सामाजिक बन्धन—कोई भी बात जो इस उद्देश्य के रास्ते में बाधक हो सर्वथा त्याज्य समझी जानी चाहिए।

(४) स्वदेश प्रेम—चौथी बात है अगाध स्वदेश प्रेम की। जिन जातियों में स्वदेश प्रेम की पवित्र अग्नि प्रज्वलित रहती है, वही जातियाँ परीक्षा आने पर अपना सर्वस्व अपनी स्वतन्त्रता

के लिए बलिदान कर सकती हैं। जैसे अंग्रेज़ों को अपने देश की वस्तुओं से, उसके कलाकौशल से और उसके मान से शुद्ध प्रेम है उसी प्रकार का अगाध प्रेम जब तक हिन्दू सङ्गठन करने वालों के दिलों में उत्पन्न नहीं होगा, तब तक हिन्दू सङ्गठन कदापि नहीं हो सकता। हिन्दू सङ्गठन करने वाले सैनिक स्वदेश प्रेम के गीतों का प्रचार जन साधारण में अवश्य करें। देश की बनी हुई वस्तुओं का प्रचार बढ़ावें; देश की कला कौशल की उन्नति का ध्यान रक्खें और अपने प्राचीन गौरव की गाथायें जन साधारण को ज़रूर सुनावें ताकि स्वदेश-प्रेम "धर्म" बन जाय, और देश की स्वतन्त्रता प्राणों से प्यारी हो जाए।

(५) संयम—पांचवीं बात है सङ्घ के नियमों के पालन करने की। जो क़ायदा, जो नियम सङ्घ के लिए बनाये जाएं, जिन्हें अधिकांश लोग स्वीकार करलें उन्हें पालन करने की आदत डालनी चाहिए, ताकि मशीन बे रोक टोक चल सके और उसका उद्देश्य सफल हो। हिन्दुओं में धैर्य्य के साथ नियमों पर चलने की आदत बहुत कम है, इसीसे वे संस्थाओं को बहुत दिन तक नहीं चला सकते। नियम पर चलने की आदत मनुष्य को संयमी बनाती है और वह अपने सब काम ठीक समय पर कर सकता है। सङ्गठन के प्रेमियों को यह याद रखना चाहिए कि सङ्गठन मशीन का नाम है और मशीन तभी चल सकती है यदि उस के सब पुर्ज़े ठीक काम दें। एक पुर्ज़े के बिगड़ने से सारी मशीन टूट जाती है। इसलिए यह बात हमें अंग्रेज़ी शासन-यन्त्र से सीखनी चाहिए कि कोई भी सदस्य नियम की अवहेलना नहीं कर सकता। जिसके ज़िम्मे जो कर्तव्य लग जाए उसे अपनी सारी शक्ति लगा कर, मन

एकाग्र कर, उसे पूरा करना उचित है।

यह पांच मोटी मोटी बातें हमने बतलाई हैं। मुट्ठी भर विदेशी इस विशाल देश पर अपने सङ्गठन के बल से शासन कर रहे हैं। हम में से भी यदि कुछ लोग उनके सामाजिक सङ्गठन के गुणों को धारण कर, वैसी कर्तव्य परायणता प्राप्त कर, भारत जननी के प्रेम में मग्न हो जाएं, तो क्या हम वही काम नहीं कर सकते? सम्प्रदाय हमारा कोई भी हो, मज़हबी ख़्यालात हम कुछ भी रक्खें, पेशा हमारा कैसा ही हो, लेकिन उद्देश्य हमारा एक होना चाहिए। उसी उद्देश्य की प्राप्ति-हेतु हम अपना सङ्गठन करें। जैसे बौद्ध काल के हिन्दुओं ने जातपाँत की दीवारों को छिन्न भिन्न कर, छूतछात की हत्या कर, समता के सिद्धान्त पर सामाजिक सङ्गठन कर अपना सङ्घ स्थापित किया था वैसा ही हिन्दू सङ्घ तुम्हें भी स्थापित करना चाहिए। हमारे पास धन, बुद्धि और मनुष्य-बल सभी कुछ है, कमी केवल सङ्गठन की है। आइए उस कमी को पूरा कर हम अपनी दुखी माता को सुखी बनावें और आने वाले बच्चों के लिए "शाही सड़क" तैयार कर जायें।

लोग हम से पूछेंगे कि उस हिन्दू सङ्गठन का कांग्रेस के साथ क्या सम्बन्ध होगा। अगली आवाज़ में हम इस शङ्का का निवारण करेंगे।

अट्ठाइसवीं आवाज़

कांग्रेस और हिन्दू-संगठन

इण्डियन नैशनल कांग्रेस का भारतवर्ष में वही स्थान है जो इङ्गलिस्तान में अंग्रेज़ी पार्लीमेंट का। यद्यपि हमारी कांग्रेस के

हाथ में कोई ऐसी सत्ता नहीं है जिसके बल पर वह अपने हुक्म को मजबूरन मनवा सके, पर उसका दर्जा क़ौमी गवर्नमेंट से किसी प्रकार भी कम नहीं है। ज्यों ज्यों हिन्दुस्थान में राष्ट्र-धर्म फैलता जायगा, त्यों त्यों कांग्रेस का बल बढ़ता जायगा और सभी नागरिक प्रसन्नता पूर्वक उसकी आज्ञा को मानने लगेंगे। भारत वासियों की प्रतिनिधि-स्वरूप यह संस्था, स्वराज्य की लड़ाई लड़ने के लिए खड़ी की गई है। इसकी आज्ञा के बिना कोई देश-भक्त किसी प्रकार का समझौता अंग्रेज़ी सरकार (विदेशी गवर्नमेंट) से नहीं कर सकता। देश में पोलिटिकल पार्टियां चाहे कितनी ही बन जाएं, परन्तु जो फ़ैसला कांग्रेस में बहुमत से होगा, तमाम देश के नेता उसी फ़ैसले के अनुसार अंग्रेज़ी सरकार से बात चीत कर सकेंगे। चुनाव का अधिकार केवल कांग्रेस का ही है क्योंकि चुने हुए लोग कौंसिलों और असेम्बली में जाकर अंग्रेज़ी सरकार से देशवासियों के हक़ूक़ की रक्षा सम्बन्धी बातें तै करते हैं।

अच्छा, तो फिर हिन्दू सङ्गठन किस लिए है? हिन्दू सङ्गठन हिन्दुस्थान के तेईस करोड़ 'हिन्दुओं' में सामाजिक क्रान्ति करने के लिए है। हिन्दू महासभा की स्थापना इसी लिए की गयी थी कि उसमें सभी मतों के लोग, राय बहादुर, राय साहिब, सभी प्रकार के सरकारी नौकर और सभी धन्धों के लोग शामिल होकर हिन्दू समाज की सेवा कर सकें। जो लोग कांग्रेस से डरते हैं, लेकिन देश-सेवा करना चाहते हैं, वे प्रसन्नता पूर्वक हिन्दू सभा द्वारा हिन्दूओं की सहायता कर सकें। हिन्दू महासभा की स्थापना इसीलिए की गई थी कि प्रत्येक अवस्था के हिन्दू को देश-सेवा का अवसर मिले और तेइस

करोड़ हिन्दू अपनी सामाजिक कुरीतियों को मिटा कर भली प्रकार सङ्गठित हो जाएँ। कांग्रेस गवर्नमेंट के साथ सीधी लड़ाई लड़ने के लिये है। उसमें निर्भीक और सिरफटे आदमी दरकार हैं। ऐसे आदमी देश में सब नहीं हो सकते, लेकिन काम सभी से लेना है, इस कारण कांग्रेस का बोझ हलका करने के लिए—उसका हाथ बँटाने के लिए हिन्दू महासभा की बुनियाद डाली गई थी। हिन्दू सङ्गठन कांग्रेस के लिए राष्ट्र-धर्म प्रचार का दरवाज़ा खोल देगा और राष्ट्रीयता के अंगों का निश्चय कर एक क़ौम सङ्गठित करने की सामग्री जुटा देगा। यह कांग्रेस का विरोधी नहीं बल्कि ज़बर्दस्त सहायक है। कांग्रेस सब मतों के झगड़ों का निबटारा करती है, हिन्दू सङ्गठन हिन्दुओं को ऐसा मज़बूत बना देना चाहता है कि झगड़े पैदा ही न हो सकें। यदि हिन्दू महासभा पोलिटिकल प्रश्नों में हाथ डालेगी और चुनाव के झगड़ों में पड़ेगी तो सङ्गठन का काम कदापि नहीं कर सकती।

देखिए सन् १९२६ के व्यवस्थापक सभाओं के चुनाव ने हमें क्या शिक्षा दी है? अपनी पोलिटिकल पार्टी बनाने के लिए पंडित मदनमोहन मालवीयजी ने हिन्दू सभाओं को चुनाव के पचड़े में डाल दिया और जहाँ हिन्दू सभाओं से काम न निकल सका वहाँ स्वतन्त्र दल बनाकर कांग्रेस के विरोध में खड़े हो गये। इस अनीति का परिणाम क्या निकला? हिन्दुओं में सङ्गठन होने के बजाए भयङ्कर फूट फैल गई और हिन्दू सभायें मटियामेट हो गईं। यहीं तक इसका बुरा नतीजा नहीं निकला। देश के लिए काम करने वाले लोग धन का लोभ पाकर अपने सिद्धान्त छोड़ बैठे और जनता में नैतिक पतन का वातावरण फैल गया। लखनऊ और बनारस विभाग में घूमने से हमें

स्वयं इसका कडुवा अनुभव मिला था। पञ्जाब का नैतिक पतन तो बहुत बुरी तरह से हुआ। उर्दू समाचार पत्रों में पार्टी बाज़ी का बाजार इस बेरहमी से गरम हुआ कि वे केवल झूठी बातें फैलाने के साधन बन गए।

क्या इस चुनाव के ज़खम शीघ्र भर जायेंगे? कदापि नहीं। लाला लाजपतराय और पंडित मालवीजी ने जो हानि देश की इस अवसर पर की है, उसके भयङ्कर फल वे स्वयँ चखेंगे। हिन्दू सङ्गठन और हिन्दू हितों के नाम पर देश में इस प्रकार का विद्रोह फैला कर उन्होंने जनता के मलीन भावों को उत्तेजित कर दिया है। स्वराज्य पार्टी ने अगर कोई बात इन लीडरों के विरुद्ध की भी थी तो उसका बदला वे गोहाटी कांग्रेस के अवसर पर ले सकते थे। पर इनको तो ज़मीदारों, साहूकारों और व्यापारियों को व्यवस्थापक सभाओं में भेजना था। पंजाब और संयुक्त प्रान्त में उन्होंने कांग्रेस को नीचा दिखा दिया। समय आएगा कि उन्हें अपनी भूल के लिए पश्चात्ताप करना पड़ेगा। भोली भाली भारतीय जनता को इस प्रकार के राजनीतिक दाँव पेंच किस गढ़े में ढकेल देंगे, इस अनर्थ पर हमारे नेताओं ने ज़रा भी ध्यान नहीं दिया! ख़ैर जो हो चुका सो हो चुका। इस चुनाव से हम यह बात स्पष्ट रूप से सीख गए हैं कि हिन्दू सङ्गठन की प्रगति को हम राजनीतिक झगड़ों में कदापि न डालें, बल्कि इसे चरित्र सङ्गठन, सामाजिक सुधार और शारीरिक बल बढ़ाने का साधन बनावें। हमें पूर्ण विश्वास है कि हमारे देश-बन्धु भविष्य में ऐसी भूल कदापि नहीं करेंगे। कांग्रेस अपना काम करेगी और हिन्दू सङ्गठन अपना काम। दोनों एक दूसरे की सहायता करते हुए भारत जननी की सेवा करेंगे।

यहाँ पर यह बात विचारणीय है कि क्या हिन्दू महासभा का वर्तमान स्वरूप हिन्दू सङ्गठन के उद्देश्य की पूर्ति कर सकेगा? हिन्दू सभा के लीडर यह चाहते हैं कि वे सारे हिन्दुओं को साथ लेकर चलें, कोई भी पीछे न रह जाए। वे समाज में क्रान्ति करना नहीं चाहते। उनकी इच्छा है कि धीरे धीरे हिन्दू समाज में परिवर्तन किया जाए। ऐसी अवस्था में क्या हिन्दू सङ्गठन का लक्ष्य पूरा हो सकेगा? हमारी तुच्छ सम्मति में यह एक वैज्ञानिक युग है। हमें यह चाहिए कि वर्तमान युग के अनुसार हम सामाजिक क्रान्ति करें। हम दुनिया की दूसरी स्वतन्त्र जातियों से बहुत पीछे हैं। यदि हम आज बैल गाड़ी की रफ़्तार से चलकर जातियों के जीवन-संग्राम में खड़े होने की कोशिश करेंगे तो हमें कभी भी विजय प्राप्त नहीं हो सकती। जापान पचास वर्षों के अन्दर अपना ढांचा बदल कर योरुप की जातियों के मुकाबले में खड़ा हो गया है। भला हम ग़ुलाम लोग जब तक जापान से भी अधिक बलिदान, जापानियों से भी अधिक फ़ुर्ती नहीं करेंगे तो किस प्रकार हम अपनी कमी को पूरा कर सकते हैं। कांग्रेस में जो हिन्दू हैं वे अपनी अधिक संख्या का अपनी सामाजिक कमज़ोरियों के कारण फ़ायदा नहीं उठा सकते। अगर हिन्दू भी मुसलमानों की तरह छूतछात और जातपाँत से मुक्त होते तो भारतवर्ष की स्वतंत्रता का प्रश्न अब तक बहुत कुछ हल हो गया होता। हिन्दू महासभा के कर्णधार जो लोग हैं, जिनके हाथ की कठपुतली हिन्दू महासभा है, वे छूतछात और जातपाँत में बुरी तरह जकड़े हुए हैं। जो लोग इन सामाजिक पचड़ों के कारण समुद्र यात्रा नहीं कर सकते, जिनकी रोटी थोड़ी सी छूतछात में भ्रष्ट हो जाती है, वे भला हिन्दुओं का सङ्गठन क्या कर सकते हैं कांग्रेस तो भारत के

तीस करोड़ लोगों को राष्ट्र-धर्म के सूत्र में पिरो देना चाहती है। हिन्दू सङ्गठन की प्रगति से कांग्रस को उसी दशा में सहायता पहुँच सकती है जब हिन्दू सङ्गठन वाले हिन्दुओं के अन्दर सामाजिक क्रान्ति का ऐसा प्रवाह चलादें कि जो उन्हें एक जाति में बद्ध कर सके। यदि हिन्दू महासभा वाले अछूतों को कूओं पर चढ़ाने, देवालयों में दर्शन कराने और वेद पढ़ाने के विरुद्ध प्रस्ताव पास करते रहेंगे तो वे कांग्रेस की मदद क्या ख़ाक कर सकते हैं? हम चाहते हैं कि हिन्दुओं में सामाजिक क्रान्ति की ज़बर्दस्त लहरें उठें और वे सदियों के कूड़े कचरे को वहा ले जाएँ। संसार की क्रान्तियों का इतिहास हमें बतलाता है कि पुराने सड़े गले रिवाजों पर चलने वाले लोगों को साथ लेने की कोशिश जिन सुधारकों ने की है वे कभी अपने काम में सफलता प्राप्त नहीं कर सके। गुरु गोविन्द सिंह जी ने पुराने ढर्रे के हिन्दुओं को साथ ले जाने की सिरतोड़ कोशिश की थी, पर वे कामयाव न हुए, उलटा उन्हीं लोगों ने उस समय के हाकिमों का साथ दिया और देश के शत्रु सिद्ध हुए। मज़हबी दीवानापन आज़ादी का दुश्मन है, उसमें भला बुरा सोचने की बिल्कुल तमीज़ नहीं रहती। हमें ऐसे लोग बहुत मिले हैं जिनकी राय में हिन्दुओं का मुसलमान या ईसाई हो जाना इतना बुरा नहीं कि जितना आर्य समाजी बनना; वे आर्य समाजियों को देश और धर्म का दुश्मन समझते हैं।

भला इस प्रकार के लोगों को साथ लेकर हिन्दू सङ्गठन कैसे हो सकेगा? हिन्दू सङ्गठन का विकसित स्वरूप अब जनता को जानना ही चाहिए। सब प्रकार के विरोधों का सामना कर हिन्दू समाज में प्रचण्ड क्रान्ति करने की ज़रूरत है। ऐसा क्रान्तिकारी दल कैसे बने? हिन्दू महासभा की काया पलटाने

वाला कौनसा प्रोग्राम है? अगली आवाज़ में हम सङ्गठन के विकसित स्वरूप को पाठकों के सामने रखते हैं।

उन्तीसवीं आवाज़

हिन्दू-संगठन-संघ

इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में हम ने पाठकों को हिन्दू सङ्गठन के जन्मदाताओं के दर्शन कराए हैं। सत्रहवीं सदी के मध्य में जो हिन्दू-सङ्गठन महाराष्ट्र और पंजाब में हुआ था, वह केवल हिन्दुओं की एक जाति बनाने के लिए था। उस समय हिन्दुओं को केवल अपनी रक्षा करने के लिए सङ्गठित होना पड़ा था। समर्थ गुरु रामदास और गुरु गोविन्द सिंह जी ने उस समय के देशकाल को समझकर हिन्दुओं के सङ्गठन का मार्ग बतलाया था। वह सङ्गठन सामाजिक और धार्मिक निमयों के बल पर हुआ, या यों काहए कि वह भी मज़हबी सङ्गठन का ही एक रूप था। उन्नीसवीं सदी में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने जो सङ्गठन करने की चेष्टा की थी, उसका दारोमदार भी मज़हबी सङ्गठन के सिद्धान्तों पर था। यदि हमारा देश इतना बड़ा न होता, यदि इसकी समस्याएँ घुण्डियों वाली न होतीं तो उसी सङ्गठन के सहारे हम लोग बहुत कुछ कर सकते थे। यदि पञ्जाब प्रान्त के बराबर हमारा देश होता तो हम सहज में ही अपनी स्वाधीनता प्राप्त कर लेते, पर हमारी समस्याएँ इस समय बड़ी जटिल हैं। भारतवर्ष एक ऐसी विदेशी गवर्नमेंट के आधीन है जिसके पास राष्ट्रीयता की बड़ी सुन्दर सुगठित मशीन है, और साथ ही

जो राजनीति के तत्वों में बड़ी दक्ष है। उसका निवास योरुप में होने के कारण हमारे देश की समस्याओं का सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों के साथ हो गया है, इसलिए जो सङ्गठन हम इस समय करना चाहते हैं वह हमें देशकाल समझ कर करना पड़ेगा। इल्हामी किताबों के सहारे, मज़हबी जोश दिलाकर हम अपना सङ्गठन कदापि नहीं कर सकते। सिक्खों का इतना सुन्दर सङ्गठन होने पर भी वह देश के लिए लाभकारी नहीं बन सका, क्योंकि उसकी भित्ति मज़हबी विश्वास पर अवलम्बित है। यदि सिक्खों का सङ्गठन केवल क़ौम-परस्ती के आधार पर होता तो केवल मुट्ठी भर सिक्खों से ही हम सारे भारतवर्ष को स्वतंत्र कर लेते। अतएव हिन्दू सङ्गठन के सैनिकों को आँखें बन्द कर काम नहीं करना चाहिए। आइए हम अपनी वर्तमान अवस्था को देखें, जो बाधायें हैं उनका सामना करें और फिर हिन्दू सङ्गठन की समस्या को हल करें।

ज़रा पक्षपात छोड़ कर अपने देश की दशा पर विचार कीजिये। आज हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के अतिरिक्त छः सात करोड़ मुसलमान भी बसते हैं। इनको यहीं रहना है। हम इन सब को ज़बर्दस्ती हिन्दू नहीं बना सकते। ऐसे लोग जो हिन्दुस्तान के सब मुसलमानों को शुद्ध कर हिन्दू बनाने की चिन्ता में हैं, उन्हें पाग़लख़ाने का रास्ता देखना चाहिए। न तो मुसलमान हिन्दुओं को मिटा सकेंगे और न हिन्दू मुसलमानों को ही। ईसाई और पारसी भी यहीं रहेंगे। हमें वह रास्ता निकालना है जिसके सहारे हम सब के लिये स्थान बना सकें और सब को न्यायोचित अधिकार दिला सकें। इस समय चालीस हज़ार ऐंगलो इण्डियन्स भारतवर्ष में हैं जिनका भाग्य हमारे साथ है, ऐसी अवस्था में हिन्दू सङ्गठन

का प्रश्न केवल हिन्दुओं के हितों को ही सामने रखकर तय नहीं किया जा सकता। हम आँखें बन्द कर शेखचिल्लियों की तरह स्वप्न नहीं देख सकते। सङ्गठन का जो विकसित स्वरूप योरूप की जातियों ने अपने सामने रक्खा है, हमें भी उसीका अनुकरण करना पड़ेगा और अपनी समस्याओं का हल बाक़ी सब फ़िरक़ों के भले को ध्यान में रखकर करना होगा।

सङ्गठन का वह विकसित स्वरूप क्या है? इस पर विचार कीजिए। समाज में सब सदस्यों को अपने ईश्वरदत्त अधिकारों में पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। समाज का सङ्गठन इस ढंग का होना उचित है कि जिसमें सब मतों के लोगों को अपने अधिकारों की रक्षा करने की स्वतन्त्रता रहे। हिन्दुओं की संख्या इस देश में सर्व प्रधान तेइस करोड़ है; उन्हीं के पास इस देश के साहित्य का ख़ज़ाना है; वे ही इस देश की संस्कृति के मालिक हैं; उन्हीं के पास कुशाग्र बुद्धि विद्वान हैं, इसलिए हिन्दुओं की ज़िम्मेदारी सब से बड़ी है। उन्हें आज इस देश में एक क़ौम बनाने का काम सुपुर्द है। यदि हिन्दू केवल अपने ही भले को देखकर सङ्गठन के काम को उठाएंगे तो उन्हें कभी भी सफलता नहीं हो सकती। सङ्गठन का विकसित स्वरूप यह है कि समाज में मज़हबी ढकोसलों को कोई स्थान न दिया जाय, वे केवल व्यक्ति की अपनी निजी चीज़ें रहें। देश की पूजा की भावना समाज में सर्वोच्च स्थान पावे और उसी के हित के लिए सब लोग अपना सङ्गठन करें। सब से पहले हिन्दुओं को अपने समाज में एक ऐसा दल तैयार करना चाहिये जो योरूप की जातियों की तरह खुला सामाजिक जीवन रक्खे। छूतछात और जातपाँत को मिटा दे; हिन्दी भाषा को राष्ट्रीयता का स्थान दे; राष्ट्रीय त्योहारों का प्रचार करे; अपने देश के प्राचीन गौरव का

अभिमानी हो; अपने साहित्य में से देश-हित और चरित्र-सङ्गठन की बातें निकाल कर जनता में उसका प्रचार करे और भारत माता की पूजा की भावना जनता में फैलावे। ऐसे दल के लोग सभी हिन्दुओं के घरों में खान पान का व्यवहार करेंगे और शादी विवाह में सब सामाजिक खर्चों को मिटा कर केवल योग्य वर और कन्या को ही विवाह की ऊंची कसौटी समझेंगे। यह दल शुद्ध राष्ट्र-धर्म का प्रचार करेगा और हिन्दुओं में सामाजिक क्रान्ति कर उनका ज़बर्दस्त सङ्गठन करेगा। देशभक्त मुसलमान, ईसाई, पारसी और ऐंगलो इण्डियन्स सभी इस दल में सामाजिक आश्रय पा सकेंगे और अपने सामाजिक बन्धनों को त्याग कर वे इस सङ्गठित हिन्दू दल में शामिल हो सकेंगे। हिन्दुओं का यही क्रान्तिकारी दल विशाल हिन्दू-राष्ट्र की नींव रक्खेगा और भारतवर्ष में एक क़ौम बनाएगा।

हिन्दुओं का यह सङ्गठित दल और क्या करेगा? सब प्रकार के विदेशीपन का बहिष्कार, जनता की ग़ुलामी की सभी बातों का विरोध और हिन्दू जाति का अपमान करने वाले सभी कारणों का मूलोच्छेद करना, इस दल का काम होगा। यह अपने देश के निवासी मुसलमानों को बराबर के सामाजिक और राजनीतिक अधिकार देगा, परन्तु इस बात का कट्टर पक्षपाती होगा कि सब विधर्मी सम्प्रदाय अपने बच्चों को इस देश का इतिहास, साहित्य और संगीत पढ़ावें ताकि देश के सभी नागरिक एक संस्कृति के भक्त बन जाएं। मुसलमान अपने क़ुरान को हिन्दी भाषा में पढ़ावें और इस्लामी मज़हब की सभी पुस्तकों को देश की राष्ट्रीय भाषा में अनुवाद कर उसे हिन्दुस्तानी जामा पहनावें। रामायण, महाभारत, गीता और उपनिषदें मुसलमान और ईसाई बच्चे बराबर पढ़ें ताकि उन्हें अपने देश के प्राचीन

कवियों और दार्शनिकों से वाक़फ़ियत हो और वे भी अभिमान से उनके सिद्धान्तों पर अपने विचार प्रगट कर सकें। कहने का तात्पर्य्य यह है कि हिन्दू-सङ्गठन की प्रगति हिन्दुस्तान में राष्ट्र-निर्माण की कठिन समस्या को हल करने के लिए खड़ी हुई है। हिन्दू महासभा के लीडरों को स्वप्न में भी यह बातें सूझ नहीं सकतीं। वे तो सब काम "धीरे धीरे" करना चाहते हैं; वे अनपढ़ों को मार्ग दिखलाना नहीं चाहते, बल्कि स्वयं अनपढ़ों के पीछे जाना चाहते हैं। ऐसे लोगों ने कभी किसी देश में कोई ठोस काम नहीं किया। वे केवल थोड़े समय के लिए अपनी पार्टी बना कर अनपढ़ जनता के मिथ्या विश्वासों का लाभ लेकर अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं।

अच्छा, तो इस प्रकार के हिन्दू-सङ्गठन का कार्यक्रम क्या होना चाहिए ? यदि हमारे सैनिक हिन्दू महासभा को हमारे प्रोग्राम के अनुसार चला सकें तो फिर नये संघ के स्थापित करने की कोई आवश्यकता नहीं। हम नामों के पुजारी नहीं, हमें तो काम चाहिए। यदि हिन्दू महासभा से यह काम न हो सके तो हमारे क्रान्तिकारी दल को "हिन्दू-सङ्गठन-सङ्घ" की स्थापना करनी उचित है। जो लोग इस बिगुल को पढ़ कर हिन्दू-सङ्गठन करना चाहते हैं, वे अपने अपने क़स्बे, ग्राम और नगर में "हिन्दू-संगठन-संघ" स्थापित करें। प्रत्येक ज़िले के दो-चार आदमी खड़े होकर पहले अपने प्रधान नगर में ऐसा संघ स्थापित करें, और फिर उसकी शाखायें अपने सारे ज़िले में फैला दें। संघ का उद्देश्य हमने स्पष्ट कर दिया है, बाक़ी, संघ के लिए निम्न लिखित नौ आवश्यक विभाग बनावें—

(१) **प्रचार विभाग**—इस विभाग के द्वारा हिन्दू-सङ्गठन के आदर्शों का प्रचार व्याख्यानों और छोटे छोटे ट्रैक्ट बाँट कर

किया जाय ।

(२) अछूतोद्धार विभाग—इस विभाग में केवल अछूतों का उद्धार करने वाले लोग काम करें। जन साधारण में अछूतपन के ख़्याल दूर करने की चेष्टा की जाय और अछूतों में आचार तथा शिक्षा फैलाने का प्रबन्ध किया जाय।

(३) सेवा समिति विभाग—इस विभाग में स्वयं सेवक भर्ती कर समाज-सेवा का काम जनता को सिखलाया जाय। मेले और त्योहारों में स्वयं सेवक जनता की सेवा करें। स्वयं सेवकों को पहले १५,२० दिन सेवा के नियम समझाये जायँ और संघ के अधिकारी उनके साथ भाइयों का सा बर्ताव करें।

(४) राष्ट्रीय त्योहार विभाग—इस विभाग में अच्छे मज़बूत आत्मिक बल वाले लोग रक्खे जाएं जो हिन्दू त्योहारों को भली प्रकार मनाना हिन्दू जनता को सिखलावें। ख़ास ख़ास त्योहारों पर अपने जलूस बड़ी धूमधाम से निकाल कर जनता का उत्साह बढ़ावें और जहाँ कहीं कोई सम्प्रदायविशेष इनके जलूस को रोकने का प्रयत्न करे, वहाँ वे बड़ी दृढ़ता से अपने हक़ पर खड़े रहें, और आवश्यकता पड़ जाय तो धैर्य्य से सत्याग्रह भी करें।

(५) क्षात्र-धर्म विभाग—इस विभाग में ऐसे लोग रक्खे जाएँ जो शरीर से हृष्टपुष्ट हों और व्यायाम से प्रेम करते हों। वे मुहल्ले मुहल्ले व्यायामशालाएँ खुलवा कर हिन्दू जनता को क्षात्र-धर्म का उपदेश दें। अखाड़ों में सब वर्णों के हिन्दुओं को आने दें, और किसी प्रकार की छूतछात न रक्खें। त्योहारों के अवसर पर दङ्गल करावें और जीतने वालों को पुरस्कार दें, और हारने वालों को भी उत्साहित करें ताकि

आपस में वैमनस्य उत्पन्न न हो।

(६) ख़ुफ़िया विभाग—इस विभाग का काम गुण्डे लोगों की मरम्मत करना होगा। लड़के लड़कियाँ भगाने वाले बदमाशों का पता लगाना, रेल के स्टेशनों पर पहरा देना, दुष्टों को दण्ड दिलाना और अवसर पड़ने पर सब प्रकार के ख़तरे सिर पर लेना—बस ऐसा काम इस विभाग के वीरों का रहेगा।

(७) क़ानूनी विभाग—इस विभाग में होशियार वकील लोग रहेंगे जो समय समय पर क़ानूनी सलाह दें, और ज़रूरत पड़ जाय तो ग़रीबों के मुफ़्त मुक़दमे लड़ें।

(८) अनाथ और विधवा विभाग—इस विभाग के सुपुर्द सङ्घ की ओर से एक अनाथालय और विधवा आश्रम रहे। जो बच्चे अनाथालय में आवें उन्हें कला-कौशल की शिक्षा दी जाय, जैसे दर्ज़ी और बढ़ई का काम। विधवा आश्रम में दुष्टों से बचाई हुई विधवाओं को रक्खा जाय, और योग्य वर तलाश कर उनका विवाह कर दिया जाय। विधवा आश्रम का प्रबन्ध किसी वृद्धा स्त्री के हाथ में रहे।

(९) शुद्धी विभाग—शुद्धी का काम भी इस समय बड़ा ज़रूरी है। धार्मिक स्वतन्त्रता के प्रचार के लिए हिन्दुओं से मुसलमान बने हुए लोगों की शुद्धी अत्यन्त आवश्यक है और साथ ही हिन्दू-धर्म से प्रेम करने वाले जन्म के मुसलमान, ईसाई और यहूदियों को भी हिन्दू-धर्म में लाना चाहिए। मुसलमानों की धर्मान्धता दूर करने के बराबर कोई पुण्य कार्य नहीं। इसलिए जन्म के मुसलमानों को शुद्ध कर अपने समाज में मिलाना प्रत्येक हिन्दू का कर्तव्य है।

इस सङ्घ का एक सभापति चुना जाए और नौ विभागों के अलग अलग उपसभापति—जो उन विभागों में दिलचस्पी लेते हों। प्रत्येक विभाग का अलग अलग मन्त्री चुना जाए और वह अपने उपप्रधान के साथ मिल कर आवश्यकतानुसार अन्य सदस्य चुन ले। सङ्घ का एक महामन्त्री होना चाहिए। एक कोषाध्यक्ष और एक आय-व्यय निरीक्षक। सङ्घ का रुपया सङ्घ के नाम पर किसी बैङ्क में जमा करना उचित है, जिसे महामन्त्री, प्रधान और कोषाध्यक्ष के हस्ताक्षरों के बिना कोई न निकाल सके। नियम ऐसे बनाए जाएँ कि जिससे सङ्घ को हानि पहुँचाने वाले अधिकारी, सङ्घ से शीघ्र अलग किये जा सकें। यदि आपस में कोई झगड़ा हो जाए तो नगर के तीन प्रतिष्ठित लोगों के सामने उस झगड़े को रख कर फ़ैसला करवा लिया जाए, और उस फ़ैसले को सब लोग स्वीकार करें। इस प्रकार हिन्दू-सङ्गठन की पुनीत प्रगति को सारे देश में फैलाना चाहिए। जो जैसी योग्यता रखता है वह वैसा ही काम अपने सिर पर लेकर हिन्दू-सङ्गठन में लग जाए। पेट तो कुत्ता भी भर लेता है पर जीना उन्हीं का धन्य है जो अपने समाज और देश की सेवा में अपना सर्वस्व लगा देते हैं।

पाठक! सङ्गठन का विकसित स्वरूप आपने देख लिया है। हिन्दू समाज में क्रान्ति करने वाले साधनों को भी आपने दूसरे खण्ड में पढ़ लिया है, हिन्दू-सङ्गठन का पवित्र सन्देश भारत-वर्ष के प्रत्येक समुदाय के लिये क्या है? किस प्रकार हिन्दू-सङ्गठन राष्ट्र-निर्माण में सहायता देगा? चतुर्थ खण्ड में हम इस महत्वपूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश डालते हैं।

चतुर्थ खण्ड

हिन्दू-सङ्गठन का सन्देश

विषय-सूची

तीसवीं आवाज़

हिन्दू-सङ्गठन का सन्देश मुसलमानों को

प्यारे मुसलमान भाइयो ! जब से हिन्दू संगठन की हलचल शुरू हुई है तब से तुम्हारे लीडर तुम्हें संगठन के सम्बन्ध में बहुत ग़लत बातें बता रहे हैं। वे तुमको हिन्दुओं के बख़िलाफ़ भड़काने की हर तरह से कोशिश कर रहे हैं। आज तुम अपने एक सच्चे हितैषी की बात ध्यान से सुनो। मुझे तुम से कोई रुपया नहीं चाहिये और न मैं तुम्हारी लीडरी का ख़्वाहिशमन्द हूँ। मैं तुम्हें हिन्दू-संगठन के सम्बन्ध में सच्ची सच्ची बातें बताना चाहता हूँ, क्योंकि मैं देखता हूँ कि तुम्हें बुरी तरह से धोखा दिया जा रहा है। मैं तुम को आने वाली मुसीबत से बचाना चाहता हूँ, और तुम में ख़ुद सोचने की आदत डालना चाहता हूँ।

ज़रा ग़ौर से सोचो। जब सन् १९१२ में तुर्की की लड़ाई बलकान से हुई तो तुम्हारे लीडरों ने तुर्की की मदद का बहाना बना कर हज़ारों रुपये तुम से लेकर बरबाद कर दिये। उसमें से कितना रुपया तुर्की गया और कितना लीडरों के पेट में, इसका कुछ भी हिसाब नहीं मिला। जब योरुप का बड़ा जंग शुरू हुआ तब तुर्की ने इङ्गलैण्ड से लड़ाई छेड़ते वक्त, तुम्हारी सलाह भी नहीं पूछी और जब बम्बई के मुसलमानों ने तुर्कों से जर्मनी के साथ शामिल न होने की अर्ज़ की तो तुर्कों ने लानत से भरा हुआ जवाब भेजा। तुम्हारे लीडरों ने ख़िलाफ़त का बहाना बना कर तुमसे अस्सी लाख रुपये बटोर लिये। तुमने अपनी जोरू और बच्चों का पेट काट काट कर रुपया

दिया। उस रुपये में से कितना तुर्की पहुँचा और कितना लीडरों की मौज बहार में ख़र्च हुआ, अगर इसका कच्चा चिट्ठा तुमको मालूम हो तो तुम कभी भूल कर भी इन लीडरों के पास खड़े न हो। आख़िर ख़िलाफ़त के उस अस्सी लाख रुपये ख़र्च करने का नतीजा तुमको मिला क्या? तुर्की ने ख़िलाफ़त तोड़ डाली और ख़लीफ़ा को भी तुर्की से निकाल दिया।

तुम ज़रा अपनी नासमझी पर रहम खाओ। तुम्हारे जितने पोलिटिकल लीडर और मज़हबी पेशवा हैं, उनमें से सिर्फ़ दो चार को छोड़ कर बाक़ी सब ख़ुदग़र्ज़ी के पुतले हैं। वे तुम्हें हिन्दुओं के बख़िलाफ़ बहका कर अपनी दुकानदारी चला रहे हैं; कोई न कोई नई बात खड़ी कर तुम्हें मज़हब का जोश दिला कर ये लोग पैसा जमा करते हैं और यही इनका धन्धा है। मौलवी-मुल्ला तुम्हें बहिश्त के सब्ज़ बाग़ दिखला दिखला कर तुमसे दंगे करवाते हैं और तुम अनजान बन कर इनके कहने में आ जाते हो। ये मौलवी ख़ुद तो बड़ी चालाकी से बच जाते हैं पर तुम को मुक़द्में में फँसा जेल भिजवा देते हैं। हिन्दू मुसलमानों में लड़ाई रहने से इनकी मुट्ठी ख़ूब गर्म रहती है, क्योंकि फिर ये तुम्हारे मुक़द्मों का नाम लेकर दूसरों से पैसा एंठते हैं। यह सिर्फ़ पैसा कमाने का इनका पेशा है।

मेरी बात ध्यान से सुनो। तुम्हारे लीडर तुम्हारा सत्यानाश करके अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। ख़ुद तो तुम्हारे पैसे से लीडर बन मोटरों में घूमते हैं; तुम्हारे नाम से कौंसिलों में जा गवर्नमेंट के प्यारे बनते हैं; तुमको हिन्दुओं से हमेशा अलग रख अपनी लीडरी क़ायम रखने की दिन रात कोशिश करते हैं; तुम अपना भला बुरा सोचने की आदत डालो; तुमको

इसी मुल्क में हिन्दुओं के साथ रहना है ; हिन्दुओं के साथ तुम्हारा चोली दामन का साथ है । भला एक हिन्दू की एक ग़रीब मुसलमान के साथ क्या लड़ाई है ; दोनों को रोटी कपड़ा चाहिए ; स्वराज्य मिलने पर दोनों का बराबर फ़ायदा है । तुम्हें और सब मुल्कों के ख़्याल छोड़ सिर्फ़ हिन्दुस्तान से मुहब्बत करनी चाहिये । हिजरत करने वाले जो हिन्दुस्तानी मुसलमान अफ़ग़ानिस्तान गये थे, उनके साथ जो बुरा सलूक हुआ, उससे सबक़ सीखो । अफ़ग़ानिस्तान वाले तुम्हें नालायक़ समझते हैं, तुर्क लोग तुमसे नफ़रत करते हैं, फ़ारिस वाले तुम्हे जंगली मानते हैं, हिन्दुस्तान से बाहर के मुसलमान तुम्हें बिल्कुल नहीं चाहते, लेकिन तुम ऐसे बेवक़ूफ़ हो कि अपने मुल्कवालों से दुश्मनी कर बाहरवालों के गले पड़ते हो । तुम्हारे लीडर केवल पैसा कमाने के लिए तुम्हें बाहर की बातें सुनाते रहते हैं । वे जानते हैं कि जिस दिन तुम हिन्दुस्तान से मुहब्बत करने लगे, जिस दिन तुमने हिन्दुओं से लड़ना छोड़ दिया, उसी दिन से उनकी लीडरी ख़त्म हो जायगी और उनकी दूकानों पर ताले लग जायँगे । कभी भूल कर भी इनके कहने में आकर किसी बाहर के मुसलमानी फण्ड में पैसा मत दो और न मौलवी मुल्लाओं के कहने में आकर हिन्दुओं से झगड़ा करो ।

फिर सुनो । हिन्दू-सङ्गठन हिन्दुस्तान की अज़मत बढ़ाने के लिए किया जा रहा है ; हिन्दू-सङ्गठन हिन्दू समाज में फैली हुई बुराइयों को दूर करने के लिये किया जा रहा है; हिन्दू-सङ्गठन स्वराज्य की लड़ाई लड़ने के लिए किया जा रहा है ; हिन्दू-सङ्गठन तुम्हारा बिलकुल विरोधी नहीं ; हाँ यह उन दुष्ट लोगों को जो हिन्दू बालक, बालिकाओं और औरतों को धोखे से भगा ले जाते हैं, ज़रूर भयभीत करनेवाला है;

भले आदमियों के लिए हिन्दू-सङ्गठन एक बड़ी भारी बरकत होगी और बदमाशों के लिए यह मौत का पैग़ाम होगा।

तुम पूछोगे कि मुसलमानों की शुद्धी क्यों की जाती है? इसका जवाब यह है कि यह शुद्धी सिर्फ़ तुम में हिन्दुस्तान की मुहब्बत भरने के लिए है; यह शुद्धी तुम्हें मज़हबी ग़ुलामी से आज़ाद करने के लिए है; यह शुद्धी तुम्हें पक्के हिन्दुस्तानी बनाने के लिए है। हिन्दू-सङ्गठन तुम्हें फिरक़ादाराना झगड़ों से निकाल कर क़ौमपरस्ती के सच्चे मज़हब में ले जाना चाहता है। इसके लिए तुम्हें बुतपरस्त होने की ज़रूरत नहीं, तुम्हें किसी किताब को इल्हामी मानने की ज़रूरत नहीं, तुम्हें राम और कृष्ण को अवतार मानने की ज़रूरत नहीं, हिन्दू-सङ्गठन यह चाहता है कि तुम हिन्दुस्तान को अपने प्राणों से प्यारा समझो और हिन्दुस्तान के पुराने आलिमों को अपना बुज़ुर्ग मानो; हिन्दू-सङ्गठन यह चाहता है कि तुम हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता और उसके सुन्दर साहित्य की इज़्ज़त करो; हिन्दू-सङ्गठन यह चाहता है कि तुम हिन्दुस्तान की आज़ादी के सच्चे सिपाही बनो और अपने मुल्क को दूसरी आज़ाद क़ौमों के मुक़ाबिले का बनाने की कोशिश करो। हिन्दू-सङ्गठन तुम्हें क़ुरान या बाइबिल पढ़ने से मना नहीं करता, दुनियाँ के सभी मज़हबों में जो अच्छी बातें हैं उन्हें ज़रूर ले लो, लेकिन हिन्दुस्तान का हक़ सब मज़हबों से ऊपर रक्खो। हिन्दू-सङ्गठन मज़हबी आज़ादी का ज़बर्दस्त मानने वाला है। अगर तुमको क़ुरान का मज़हब अच्छा ही लगता है और तुम उसमें कोई बुराई नहीं देखते हो तो तुम्हें उसको मानने का पूरा इख़्तियार है, लेकिन उसको हिन्दुस्तानी जामा पहिना लो और उसके अमल में लाने वाले अच्छे असूलों को

अपनी ज़िन्दगी में ढाल लो। इसका ख़्याल ज़रूर रक्खो कि अगर क़ुरान का कोई असूल हिन्दुओं के साथ लड़ने पर अमादा करता है या हिन्दुस्तान की भलाई के ख़िलाफ़ है तो उसे फ़ौरन छोड़ दो। हिन्दू-सङ्गठन यह चाहता है कि मुसलमान लोग मज़हब का हिन्दुस्तान की भलाई की कसौटी पर तौलना सीखें और मज़हबी दीवानापन छोड़ दें।

एक ज़रूरी बात और सुनो। तुम्हें यह जो बतलाया जा रहा है कि स्वामी सत्यदेव आर्य समाजी है, यह बात बिलकुल झूठ है। मेरा मज़हब तो क़ौमपरस्ती है और हिन्दुस्तानी क़ौम की भलाई करनेवाली जितनी सोसाइटियाँ हैं, मैं उन सब का ख़ैरख़्वाह हूँ। मैं केवल उन बातों का दुश्मन हूँ, जिनकी वजह से हिन्दुस्तान में क़ौमपरस्ती को धक्का पहुँचता है। जैसे आजकल तुम्हारे बहुत से मौलवी और दूसरे लीडर तुम्हें मसजिद के सामने बाजा बजाने के वक्त दङ्गा करने पर आमादा करते हैं और यह कहते हैं कि जो मुसलमान ऐसे दङ्गों में मर जायगा वह सीधा बहिश्त में जायगा। तुम ऐसी निकम्मी और फ़ज़ूल बातों पर इतबार कर हिन्दुओं के साथ झगड़ा करते हो। क़ौमपरस्ती यह सिखलाती है कि बाज़ार और सड़कें पब्लिक की हैं और इन पर किसी भी फ़िरक़े का जलूस रोका नहीं जा सकता। मुसलमानों की बादशाहत के ज़माने में भी हिन्दुओं के जलूस, रामलीला या दूसरे त्योहारों के मौक़े पर, बड़ी बड़ी पुरानी मसजिदों के सामने बाजे बजाते हुये जाते थे; हिन्दुओं के त्योहार और उनकी मज़हबी रस्में सब बाजे गाजे के साथ अदा की जाती हैं; सदियों से हिन्दू लोग बराबर मसजिदों के सामने बाजा बजाते चले आये हैं; आज इस किस्म की बातें निकाल कर तुम्हारे मौलवी और लीडर तुम्हें मुल्क और

क़ौम का दुश्मन बनाने की कोशिश कर रहे हैं, ताकि तुम हमेशा के लिये हिन्दुओं से अलग हो जाओ। इनकी ऐसी हरकतों का नतीजा यह होगा कि तुम्हारे आने वाले बच्चे बड़ी ख़ौफ़नाक मुसीबत में मुबतिला हो जायँगे, और उन्हें वे सब काँटे अपने हाथों से चुनने पड़ेंगे जो आज तुम्हारे लीडर तुम्हारे रास्ते में बो रहे हैं। पब्लिक सड़कों पर जलूस कभी रोके नहीं जा सकते। जलूस का बाजा सिर्फ़ दो तीन मिनट में मसजिद के सामने से गुज़र जाता है। इस ज़रा सी बात के लिये तुम्हारा हिन्दुओं से हमेशा की लड़ाई मोल लेना सिर्फ़ तुम्हें बरबादी के समुद्र में ढकेलना है।

याद रक्खो कि अभी तो हिन्दू तुम्हारी ज़्यादतियाँ बरदाश्त कर लेते हैं, लेकिन जिस दिन हिन्दुओं ने लड़ना सीख लिया और वे भी तुम्हारा पूरा मुक़ाबिला करने लग गये तो तुम्हें सख़्त मुसीबत का सामना करना पड़ेगा; तुम्हारा खाना पीना और रहना मुश्किल हो जायगा और तुम्हारी ज़िन्दगी के दिन दोज़ख़ बन जायँगे। इसलिये बाजे की फ़ज़ूल बात पर हिन्दुओं के साथ कभी भी झगड़ा मत करो। भला सोचो तो सही कि जब तुम्हारा मसजिद का इमाम दोनों कानों में अंगुली डालकर अज़ाँ देता है तो इसके माने यह हैं कि नमाज़ के वक़् तक तुम्हारा बाहर की दुनिया के साथ कोई ताल्लुक नहीं रहा। फिर जब तुम दो मिनट के बाजे की आवाज़ से छटपटा उठते हो तो तुम्हारा नमाज़ पढ़ना बिलकुल फ़ज़ूल है। जो आदमी नमाज़ पढ़ते वक़् दुनिया की बाहर की बातों पर दिल दौड़ाता है, उसका नमाज़ पढ़ना सिर्फ़ धोखेबाज़ी है।

तुम मुझसे पूछोगे कि फिर हिन्दू लोग क्यों मुसलमानों को गाय का जलूस आम बाज़ारों में निकालने नहीं देते? जब

हिन्दू बाजे के जलूस को सड़कों पर निकालना अपना हक़ समझते हैं तो फिर मुसलमानों को गाय का जलूस निकालने से क्यों रोकते हैं? इसका जवाब यह है कि गाय का जलूस मुसलमान लोग अपना मज़हबी फर्ज़ समझ कर नहीं निकालते, वे सिर्फ़ हिन्दुओं को चिढ़ाने के लिये ऐसा करना चाहते हैं। किसी इस्लामी मुल्क में क़ुर्बानी के पशु का जलूस नहीं निकाला जाता, और न हिन्दुस्तान में उस किस्म का जलूस निकालने का कोई रिवाज ही है। जिस गाय को मुसलमान और ईसाई रोज़ मार कर खाते हैं, उसका जलूस निकालना सिर्फ़ फसाद बढ़ाना है। जब हिन्दू, मुसलमानों को बूचरखानों में गाय मारने से मना नहीं करते तो फिर ख़ास तौर से उस गाय को जलूस के साथ निकाल कर मारना सिवाय दंगा बढ़ाने के और हो ही क्या सकता है। इसलिये जो मुसलमान भाई बाजे को बन्द करने के बदले में गाय का जलूस निकालना चाहते हैं, वे पब्लिक सड़क के हक़ के लिए नहीं लड़ते, बल्कि हिन्दू और मुसलमानों में हमेशा के लिये फ़साद को क़ायम रखना चाहते हैं। क्या पब्लिक सड़कों पर बूचर खानों में जाने वाले गाय बैल नहीं गुज़रते? लेकिन अगर ख़ास तौर से गाय को सजा कर उसका जलूस निकाला जाता है तो वह काम हक़ का नहीं रहता बल्कि झगड़ा करने का सबब बन जाता है। अगर मुसलमान लोग गाय का जलूस पब्लिक सड़कों पर निकालना अपना हक़ बतलाने लगेंगे तो क्या हिन्दू अपना हक़ सूअर का जलूस निकालने के मुतअल्लिक़ पेश न करेंगे? फिर यह झगड़ा कभी तय न होगा; फजूल के हक़ों की बात बढ़ती ही जायगी। इसलिये सब समझदार मुसलमानों का यह फ़र्ज़ है कि वे ताअस्सुब को छोड़कर अपनी आने वाली नस्लों के

फ़ायदे के लिये उन बातों को बहुत जल्द छोड़ दें जो उन्हें हिन्दुओं से लड़ाने वाली हैं, और हिन्दुओं को भी वे बातें छोड़नी पड़ेंगी जो ख़्वामख़्वाह मुसलमानों का दिल दुखाने वाली हैं। अब हिन्दू-सङ्गठन का ज़माना है। मुल्क के चारों ओर के हिन्दू अपना सङ्गठन कर ख़ूब मज़बूत हो रहे हैं और वे मुसलमानों की नाजायज़ बातों के बख़िलाफ़ हमेशा आवाज़ बुलन्द करेंगे और मौका पड़ने पर अपनी हिफ़ाज़त के लिये अब लड़ेंगे भी। अगर इस प्रकार की हालत जारी रही तो हिन्दुस्तान के २३ करोड़ हिन्दुओं की एक ज़बरदस्त जंगजू क़ौम हो जाएगी, फिर मुसलमानों को ख़ौफ़नाक मुसीबत का सामना करना पड़ेगा।

बस अगर मुसलमान भाई हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के साथ एक होकर रहना चाहते हैं तो उन्हें हमेशा जायज़ और नाजायज़ हक़ पर विचार करना चाहिए। और भूल कर भी ख़ुदग़र्ज़ लीडरों के कहने में आकर हिन्दुओं के साथ नहीं लड़ना चाहिए।

इकतीसवीं आवाज़

हिन्दू-संगठन का संदेश ईसाइयों को

मेरे प्यारे ईसाई भाइयो!

देश में इस समय हिन्दू-सङ्गठन की प्रगति का प्रारम्भ हुआ है। आप में से शायद बहुत से भाई यह समझते होंगे कि यह प्रगति ईसाइयों के बख़िलाफ़ है। मैं आज आप की सेवा में उपस्थित होकर हिन्दू-सङ्गठन का पवित्र सन्देश आप को सुनाता हूँ। हज़रत ईसा मसीह ने, धर्म के जिन तत्वों

का बखान अपने उपदेशों में किया है, हिन्दू लोग उनके विरोधी नहीं हैं। संसार के महापुरुषों में हज़रत ईसा मसीह का स्थान ऊँचा है और उनका चरित्र भी निर्मल और शुद्ध है। इसलिये हिन्दुओं ने ईसाई धर्म का प्रचार अपने देश में बे रोक टोक होने दिया और ईसाइयों के स्कूलों में हिन्दू बालक और बालिकायें बे खटके पढ़ने लगीं। हिन्दू धर्म धार्मिक सहनशीलता का ज़बर्दस्त पक्षपाती है, इसलिये वह किसी मज़हब के साथ झगड़ा नहीं करता, जब तक कि दूसरे मज़हब वाले न्यायसङ्गत तरीक़ों से अपना काम करते हैं। भारतवर्ष में जिस गवर्नमेंट का राज्य है, वह ईसाई धर्म को मानती है, इसलिये स्वाभाविक ही जब विदेशी गवर्नमेंट के अत्याचार लोगों को असह्य हुए तो उनमें विदेशी गवर्नमेंट के मज़हब के प्रति भी घृणा का भाव उत्पन्न हुआ। यदि भारतवर्ष स्वतन्त्र होता तो स्वतन्त्र भारत के बच्चों को ईसाई धर्म के साथ अपने धर्म का मुक़ाबला करने का अधिक अच्छा अवसर मिलता और ईसाइयों को भी हिन्दू धर्म की विशेषताएँ जानने के सहज साधन मिल जाते। भारतवर्ष के जो लोग हिन्दू धर्म छोड़कर ईसाई बने हैं, उनमें से अधिकांश ने पहले यह समझा था कि शासकों का धर्म स्वीकार कर वे भी नौकरशाही के प्रियपात्र बन जाएँगे, परन्तु श्वेतांग प्रभुओं के रंग के पक्षपात ने हिन्दुस्तानी ईसाइयों की आँखें खोल दीं और उन्हें पता लगा कि जब तक हिन्दुस्तान में स्वराज्य नहीं होता तब तक हिन्दुस्तानी ईसाई बेचारे कुछ भी उन्नति नहीं कर सकते। हिन्दुओं के सद्व्यवहार से ईसाई लोग सदा सन्तुष्ट रहे हैं, और वे जानते हैं कि स्वराज्य होने पर देश के बहु संख्यक हिन्दू ही स्वराज्य की बागडोर सँभालेंगे, इसलिये पिछले असहयोग के दिनों में भारतीय ईसाइयों ने खुले

हृदय से कांग्रेस का साथ दिया और कई ईसाई भाई जेल में भी गये।

लेकिन जब से हिन्दू-सङ्गठन की प्रगति आरम्भ हुई है, तब से ईसाई बन्धुओं के दिलों में कुछ शङ्काएँ उत्पन्न होने लगी हैं और स्वार्थी लोग भी उन्हें बहकाने की चेष्टा कर रहे हैं। मैं आज अपने ईसाई भाई-बहनों से नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि हिन्दू सङ्गठन का उद्देश्य हिन्दू समाज की कुरीतियों को दूर कर, हिन्दुओं को सङ्गठित करना है; इसका लक्ष्य हिन्दू नवयुवकों में स्वावलम्बन की शिक्षा भरना है, और उन्हें स्वराज्य का उत्तरदायित्व समझाना है। हिन्दू सङ्गठन यह चाहता है कि हिन्दू सभ्यता, हिन्दू साहित्य और हिन्दू आदर्शों की रक्षा हो, ताकि स्वराज्य की नींव भी दृढ़ बन सके।

ख़्याल रखिये कि हिन्दू सङ्गठन धार्मिक स्वतन्त्रता का ज़बर्दस्त पक्षपाती है, और ईसाइयों को उनके धार्मिक विचारों की पूरी आज़ादी देता है, लेकिन वह यह अवश्य चाहता है कि ईसाई स्कूलों और पाठशालाओं में विदेशी मिशनरियों की प्रभुता न रहे और ईसाई बच्चे भारतीय इतिहास, भारतीय साहित्य और भारतीय कविता पढ़ें। यहूदियों के पुराने इतिहास से हिन्दुस्तानी ईसाई बच्चे कुछ विशेष लाभ नहीं उठा सकते, उन्हें रामायण और महाभारत पढ़ कर भारतवर्ष के प्राचीन बुज़ुर्गों की इज़्ज़त करना सीखना चाहिये। हिन्दू-सङ्गीत का बड़ा ऊँचा दर्जा है, हिन्दू-सङ्गठन यह कहता है कि ईसाई बच्चे हिन्दुस्तानी सङ्गीत के मुताबिक अपने गिरजों में भजन गावें और सूरदास, तुलसीदास तथा कबीरदास जैसे भारतीय कवियों की कविता पढ़ें। वे हज़रत ईसा मसीह को अपना मुक्तिदाता मान कर उनके चरित्र के अनुसार अपना जीवन बना सकते हैं, पर उनका बाक़ी रहन-

सहन तथा शिक्षा का ढंग सब भारतीय आदर्शों के अनुसार होना चाहिये ताकि देश में एक क़ौम बन सके और ईसाई भाई हिन्दुओं से जुदा न मालूम हों। जैसे यहूदी इङ्गलिस्तान में रह कर अंग्रेज़ों से मिल गये हैं और अंगरेज़ी सभ्यता तथा साहित्य के अभिमानी हैं, इसी प्रकार ईसाइयों को भी हिन्दुस्तान में बनना चाहिये। हिन्दू-सङ्गठन का उद्देश्य भारतवर्ष के बत्तीस करोड़ लोगों की बाहर की विभिन्नता मिटा कर उन्हें एक राष्ट्र के सूत्र में पिरोना है।

हाँ, एक बात हिन्दू-सङ्गठन साफ़ तौर से कहता है और वह यह है कि हिन्दू बच्चों और स्त्रियों की हीन आर्थिक दशा का अनुचित लाभ लेकर धन सम्पन्न विदेशी गोरे मिशनरी जिन ढंगों से उन्हें ईसाई बनाते हैं, वह अत्यन्त निन्दनीय है। नाबालिग़ बच्चों और जाहिल स्त्रियों की दुरवस्था का नाजायज़ फ़ायदा उठा कर उन्हें बपतिस्मा देना धर्म प्रचार का न्यायसङ्गत मार्ग नहीं। हिन्दू-सङ्गठन इसका घोर विरोधी है। सेवा-धर्म से, प्रेम द्वारा वशीभूत कर, बालिग़ उम्र के लोगों को ईसाई बनाने का अधिकार बेशक आप को है, पर अपनी संख्या बढ़ाने के ख़्याल से, समुद्र पार बैठे हुए अमरीकन और यूरोपियन ईसाई धनकुबेरों को नये ईसाई लोगों की अधिक संख्या दिखला कर, उनसे पैसा लेना अधर्म का मार्ग है। हिन्दू-सङ्गठन इस प्रकार भेड़ें बढ़ा कर धर्म के नाम पर दुकानदारी करने के ख़्याल को नफ़रत की निगाह से देखता है। सारांश यह है कि हिन्दू-सङ्गठन सत्य, न्याय, और सदाचार का पक्षपाती है इस-लिये मैं अपने ईसाई भाइयों को कहता हूँ कि वे हिन्दू-सङ्गठन की पुनीत प्रगति के साथ पूरी सहानुभूति करें, और जो सुधार हिन्दू-समाज में हिन्दू-सङ्गठन के नेता करना चाहते हैं उनकी

सफलता के लिये ईश्वर से प्रार्थना करें। हिन्दू-समाज का सुधार, हिन्दुओं का बलशाली होना तथा तेइस करोड़ हिन्दुओं का सङ्गठन, भारत के बाक़ी सम्प्रदायों के लिये अभयदान का कारण होगा और इसके द्वारा भारत की बत्तीस करोड़ जनता सुख पूर्वक स्वराज्य का आनन्द ले सकेगी।

बत्तीसवीं आवाज़

हिन्दू-संगठन में सिक्खों का स्थान

मेरे बहादुर सिक्ख भाइयो !

दसवें गुरु वीर श्रेष्ठ गुरु गोविन्दसिंहजी ने अपना सर्वस्व होम कर हिन्दू सङ्गठन की पुनीत प्रगति को जन्म दिया था। उनकी यह इच्छा थी कि उनका प्यारा पञ्जाब भारतवर्ष का सच्चा द्वारपाल बने, और बहादुर अकाली दल भारतवर्ष की स्वतंत्रता का रक्षक हो। उन्होंने अपनी जाति के सब दोषों को भली प्रकार देख लिया था और भारतवर्ष के ख़तरे के कारणों को अच्छी तरह समझ लिया था। अफ़ग़ानिस्तान तथा मध्य एशिया की बर्बर जातियों के हाथों से भारतवर्ष की पवित्र भूमि को कितनी हानि पहुँची है, उसकी यथार्थ कथा उनके सामने थी। विदेशियों द्वारा पददलित जाति कैसी पतित हो जाती है, उसका इख़लाक़ कैसा गिर जाता है; उसकी आदतें कैसी कमीनी हो जाती हैं, इन सब बातों को वे भली प्रकार जानते थे, इसीलिए उन्होंने सैकड़ों वर्षों के रस्म रिवाज पर लात मार कर, पुराने ढर्रे के ब्राह्मणों की कुछ परवा न कर, हिन्दू-समाज में अद्भुत क्रान्ति की, और जन्म के ढकोसले को जड़ से उखाड़ कर फेंक दिया। वे इस बात से भली प्रकार

भिज्ञ थे—"The claim of the race is the claim of Religion." जब जाति ही खतम हो जायगी तो मज़हब क्या काम आयेगा। अतएव जाति की रक्षा, उसका उत्थान ही धर्म की पुकार है। देश और काल के समझने वाले उस राजनीतिज्ञ महापुरुष ने जब यह देखा कि शास्त्रज्ञ ब्राह्मण, जाति की रक्षा, नहीं कर सकते, तो उन्होंने समयानुकूल अपने ग्रन्थ साहिब का निर्माण किया।

आप यह जानते हैं कि सिक्ख धर्म के निर्माता नौ गुरु हिन्दू सभ्यता के अनन्य भक्त थे, इसलिये उन्होंने श्री ग्रन्थ साहिब के अन्दर प्रसिद्ध हिन्दी कवियों और भक्तों की उक्तियों का संग्रह किया, और उन्हीं के ढंग पर कविता द्वारा उपदेश दिया। सिक्ख धर्म हिन्दू-संस्कृति की भित्ति पर क़ायम किया गया है और गुरु गोविन्दसिंहजी ने उसमें क्षात्र-धर्म का समावेश कर उसे समयानुकूल और जाति की रक्षा करने का ज़बर्दस्त साधन बना दिया है। उसी साधन के बल से महाराजा रणजीतसिंह जी ने मुट्ठी भर सिक्खों की मदद से दुर्दमनीय पठानों के दाँत खट्टे किये थे, और पंजाब तथा सरहद के कठोर मुसलमानों को पालतू भेड़ें बनाकर अपने राज्य में रक्खा था। गुरु गोविन्दसिंह जी के उस अद्भुत चमत्कार ही की बदौलत पंजाब के हिन्दुओं ने ख़ैबर घाटी के ख़तरे को सदा के लिये मिटा दिया और पंजाब सिक्खों का प्रान्त बन गया।

ईसा की इस बीसवीं शताब्दी में सिक्खों का भारतमाता के प्रति क्या कर्तव्य है? अकाली वीरों को पिछले इतिहास से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। उनकी स्वाधीनता क्यों नष्ट हुई? महाराजा रणजीतसिंह जी का किया हुआ पुरुषार्थ उनकी मृत्यु के बाद विफल क्यों हो गया? इसका उत्तर स्पष्ट है। सिक्ख

हिन्दुओं के आगे आगे चलनेवाला क्रान्तिकारी दल है। हिन्दू-समाज के यह लाड़ले सिपाही हैं। यदि सिक्ख लोग हिन्दुओं के साथ संगठित होकर हिन्दू समाज की सेवा कर हिन्दू जनता की सहानुभूति जीतकर चलते तो भारतवर्ष का इतिहास इस समय दूसरा ही होता, और हज़ारों मील दूर रहने वाली गोरी जाति भारतवर्ष में आसानी से शासन न कर सकती। जो लोग सिक्खों को बहकाते हैं कि वे हिन्दू नहीं, वे सिक्ख बिरादरी के घोर शत्रु हैं। वे चाहते हैं कि सिक्ख मिट जाँय और अकालियों का बीज नष्ट हो जाए। जो युद्ध महाराजा रणजीतसिंह जी की मृत्यु के बाद अंगरेज़ों के साथ सिक्खों का हुआ, वह हमारे लिये बड़ा शिक्षाप्रद है। यदि हिन्दू लोग सिक्खों के साथ होते तो पंजाब की स्वाधीनता कभी नष्ट न होती। इसलिये मैं अपने सिक्ख भाइयों से बड़ी नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि वे हिन्दू समाज में अपना उचित स्थान ग्रहण करें। आज सङ्गठन का युग है। हिन्दू सङ्गठन यह चाहता है कि भारत के हिन्दुओं का भली प्रकार सङ्गठन किया जाए। जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए गुरु गोविन्दसिंह जी को इतना भगीरथ प्रयत्न करना पड़ा था, उसकी पूर्ति का समय आ गया है। हिन्दू आज छुआछूत को दूर करने पर उद्यत हुए हैं। जात पाँत के किले की ईंट बजाने का समय आ गया है। आज हिन्दू समाज को क्षात्र धर्म के मन्त्र से दीक्षित करने की घड़ी उपस्थित हुई है। हमारे सिक्ख भाइयों को हर्षनाद कर "सत्य श्रीअकाल" की ध्वनि कर हिन्दू समाज के आगे चलना चाहिए ताकि गुरु गोविन्दसिंह जी का मिशन पूरा हो और हिन्दू जाति सदा के लिए स्वाधीन हो जाए।

सचमुच हिन्दू-सङ्गठन में बहादुर सिक्खों का बड़े आदर

का स्थान है। आज उन्हें अपने आपको हिन्दू कहलाने में गौरव मानना चाहिए और जिस प्रकार गुरु गोविन्द सिंह जी ने अपना सर्वस्व होम कर अकालियों को सङ्गठित किया था, उसी प्रकार अकालियों को अपना जी जान बलिदान कर हिन्दुओं का सङ्गठन करना चाहिए, तभी वे अपने परम प्यारे गुरु गोविन्द सिंह जी के ऋण से मुक्त हो सकते हैं।

तैंतीसवीं आवाज़

हिन्दू-सङ्गठन का दिव्य स्वप्न

दिसम्बर का महीना था। सूर्य की खिलखिलाती धूप में मैं अपने कुछ मित्रों के साथ फल्गू नदी के किनारे किनारे बुद्ध गया के ऐतिहासिक मन्दिर को देखने के लिये जा रहा था। मेरी घड़ी में दो बज चुके थे। तीन बजे के बाद हम लोग बुद्ध-गया में पहुँच गये। हमारे दाहिने हाथ एक बड़े बरामदे में पुरानी बौद्धों की मूर्तियाँ इकट्ठी की हुई रखी थीं। वहीं पर भगवान बुद्ध की एक भव्य मूर्ति देखने में आई। उस सड़क से नीचे बाँयें हाथ कई सीढ़ियाँ उतर कर हम लोग मन्दिर देखने के लिये गये। जब उस प्रसिद्ध ऐतिहासिक मन्दिर के द्वार पर पहुँचे तो कई मङ्गोलियन चेहरे देखने में आये। पूछने पर मालूम हुआ कि वे यात्री हैं, जो भगवान बुद्ध की मूर्ति के दर्शन करने के हेतु दूर दूर देशों से आये हैं। अधिक तहक़ीक़ात करने पर पता लगा कि वे चीन, मङ्गोलिया, तिब्बत, बरमा और लङ्का के निवासी हैं। अत्यन्त विस्मित होकर मैं वहाँ खड़ा रह गया और मेरे मस्तिष्क में एक नया ख़्याल दौड़ने लगा—मानों

मेरे मस्तिष्क में आग लग गई। "मेरे देश के साथ इनका क्या सम्बन्ध है? दूर देशों के रहने वाले ये मङ्गोल जाति के लोग भारतवर्ष में पूजा के लिये आए हैं!" मैं ख़ूब ग़ौर से सोचने लगा। मैंने कभी भी गम्भीर परिणाम उत्पन्न करने वाले इस दृश्य को नहीं देखा था। मैंने समझा था कि बौद्ध धर्म आया और चला गया, अब उसका कोई विशेष सम्बन्ध हमारे साथ नहीं रहा। आज अपने सामने करोड़ों जन संख्या के प्रतिनिधियों को अपने देश की सभ्यता का प्रचार करने वाले भगवान बुद्ध की मूर्ति के सामने सिर झुकाते हुये देख मुझे नवीन स्फूर्ति की सामग्री मिली। बौद्ध-धर्म के मानने वाले ये लोग हिन्दू हैं, कोशिश करने पर भारतवर्ष के हित के लिये इनकी आत्मा को चैतन्य किया जा सकता है। सभ्यता सिखलाने वाले भगवान बुद्ध की जन्मभूमि के लिये ये लोग क्या कुछ वलिदान नहीं कर सकते! इस प्रकार के विचार मेरे मन में दौड़ने लगे। सचमुच हिन्दू लोग व्यावहारिक धर्म से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं। पड़ोस में रहने वाले इन बलशाली बौद्धों को हमने अपना मित्र नहीं बनाया; बौद्ध धर्म की निन्दा कर हमने अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली। इस भयंकर भूल का प्रायश्चित्त कैसे हो?

मेरे मित्र तो मन्दिर के ऊपर जाकर भगवान बुद्ध की दूसरी मूर्तियाँ देखने लगे, पर मैं वहीं एक पत्थर पर बैठ कर पिछले इतिहास के पन्ने पलटने लगा। मैंने सोचा कि बौद्धकाल का यह मन्दिर सैकड़ों वर्षों के बिछुड़े हुए बौद्धों को हिन्दुओं के साथ मिला सकता है; चैतन्य हुई बौद्ध-धर्म की आत्मा हिन्दुओं को बलशाली बना सकती है, इसके लिये क्या उपाय किया जाय? मैंने विचार किया कि यदि हम इस मन्दिर को ब्राह्मी

और भारतीय बौद्धों के सुपुर्द कर दें और साथ ही हिन्दुओं की ओर से आठ-दस लाख रुपया लगा कर बौद्ध यात्रियों के आराम के लिये धर्मशालाएं बनवा दें तथा उनका अपने देश में सहर्ष स्वागत करें तो पचास करोड़ बौद्धों का तेईस करोड़ हिन्दुओं के साथ घनिष्ट सम्बन्ध हो सकता है—ऐसा सम्बन्ध जो भविष्य में महाद्वीप एशिया के निवासियों का बड़ा कल्याण कर सकता है। मेरे अन्तः करण से यह शब्द आप ही आप निकल गये—"हिन्दुओं की बेसमझी पर शोक ! महा शोक !!"

निस्सन्देह, बुद्ध गया के मन्दिर में एशिया के तिहत्तर करोड़ हिन्दुओं के सङ्गठन का दिव्य स्वप्न दिखलाई देता है। हमें बहुत काल पहले इस बात को उठा लेना चाहिये था। जो अमूल्य समय हमारे हाथ से निकल गया है, अब उसकी हानि को बहुत शीघ्र पूरा कर लेना चाहिये। बुद्ध गया का मन्दिर बौद्धों के हवाले कर अब हमें अपनी उदारता का परिचय देना चाहिये। आज हिन्दू-सङ्गठन के युग में हिन्दुओं की सब शक्तिओं को एक स्थान पर सङ्गठित करने का उद्योग प्रत्येक हिन्दू को करना उचित है। बुद्ध गया का मन्दिर भविष्य में सारी दुनिया के बौद्धों को अपनी ओर खींचेगा। भगवान बुद्ध के भक्त संसार में नित्य प्रति बढ़ रहे हैं। इसलिये अब हमें अपने संकुचित विचारों को त्यागकर भावी संतान के हित के लिये हिन्दू सङ्गठन के प्रत्येक सम्भव उपाय का सहारा लेना चाहिये। चीन हमारा पड़ोसी है, तिब्बत हमारे उत्तर में है, लङ्का हमारे दक्षिण में है, इन अपने पड़ोसियों के साथ गहरी मित्रता पैदा करने से हमारी कई एक कठिन समस्याओं का हल निकल आयेगा। आज प्रत्येक हिन्दू को अपने व्यक्तित्व को मिटाकर अपने देश और अपनी सभ्यता को गौरवान्वित करने की चिन्ता करनी चाहिये। हिन्दू-सङ्गठन अपने बौद्ध बन्धुओं को बड़े प्रेम

से आलिङ्गन करता है। हमारी साझी सभ्यता है और हमारा आदर्श एक है। इसीलिये भारत से बाहर के बौद्धों को हिन्दू सङ्गठन की पुनीत प्रगति का हृदय से स्वागत करना चाहिये। यह प्रगति हिन्दू संस्कृति की आत्मा को जागृत करने वाली है। इसी के द्वारा एशिया की .ग़ुलाम जातियाँ स्वतन्त्र होंगी, और इसीके सहारे वे स्वतन्त्र होकर अपना ज़बर्दस्त सङ्घ स्थापित करेंगी, ताकि संसार में सुखऔर शान्ति फैले।

चौंतीसवीं आवाज़

हिन्दू-संगठन और देशी रियासतें

हिन्दू समाज के इस घोर संकट के समय भारतवर्ष की हिन्दू रियासतों का क्या कर्त्तव्य है? इस प्रश्न पर अब हम विचार करते हैं। हिन्दू सङ्गठन की नीरोग प्रगति का प्रचार देशी रियासतों में ज़ोर शोर से होना चाहिये। कांग्रेस की नीति अब तक यह रही है कि देशी रियासतों के किसी काम में दख़ल न दिया जाय, लेकिन हिन्दू सङ्गठन ऐसा नहीं कर सकता। हिन्दू सङ्गठन की प्रगति भारतवर्ष की सभ्यता, उसके गौरव, और उसके साहित्य की रक्षा के लिये है। यह हिन्दुओं में ऊँचे दर्जे का बलिदान करने की भावना भरने के लिये है, ताकि हिन्दू आदर्शों की रक्षा हो। देशी रियासतों के हिन्दू-शासकों को चैतन्य होकर इस हिन्दू-प्रगति से उत्पन्न होनेवाले हितकर परिणामों का लाभ लेना चाहिए। उन्हें अपने प्राचीन बुज़ुर्गों के गौरव की गाथा स्मरण कर हिन्दू संगठन की पुनीत प्रगति में पूरा योग देना उचित है। हिन्दू समाज की छुआछूत को

मिटाकर, जाति पाँति की निकम्मी दीवारों को गिराकर, अछूतों को सामाजिक अधिकार देकर, यदि हिन्दू शासक अपनी प्रजा को संगठित करें तो देश में एक चमत्कार हो जाय। भारतवर्ष की एक तिहाई आबादी देशी रियासतों में रहती है और उनमें अधिकांश संख्या हिन्दुओं की है। हिन्दू संगठन का वर्तमान प्राग्राम पोलिटिकल नहीं, यह सामाजिक सुधार का प्रोग्राम है। बिखरी हुई हिन्दू-शक्तियों को संगठित करने में हिन्दू शासकों का अपना कल्याण है, इसलिये हम विनीत भाव से देशी रियासतों के अधिकारियों से निवेदन करते हैं कि वे हमारी निम्न लिखित बातों पर ध्यान दें।

(१) अपनी रियासतों में चुन चुन कर हिन्दू जाति के हितैषी अधिकारियों को नियुक्त करें। ख़ास तौर से तलाश कर हिन्दू सभ्यता के अभिमानी सच्चरित्र योग्य हिन्दुओं को रियासत के ओहदों पर नियत करें ताकि वे हिन्दू हितों को सामने रखकर हिन्दू समाज संगठित करने में सहायक हों। किसी अच्छे हिन्दू अधिकारी के मिलते हुए अयोग्य मुसलमान अथवा अन्य विधर्मी व्यक्ति को हरगिज़ रियासत के किसी ओहदे पर नियुक्त न करें। आज आँखे खोलकर चलने का समय है। हमें पिछले इतिहास से कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

(२) रियासत के गाँव गाँव और क़स्बे क़स्बे में हिन्दू सभाएँ स्थापित कर जनता में हिन्दू त्योहारों और उत्सवों के मनाने का विचार फैलाया जाय। क्षात्र-धर्म की शिक्षा हिन्दू जन साधारण को दी जाय तथा सामाजिक जीवन लाभ के लिए आपस में मिलकर बैठने, सहानुभूति करने की योजनाएँ बनाई जायँ।

(३) रियासत के अछूतों को हिन्दू धर्म का गौरव सिखला कर उन्हें उचित सामाजिक अधिकार देने का प्रयत्न करना

चाहिए। उनकी तनख़्वाहें बढ़ाकर उन्हें साफ़ सुथरा रहने की शिक्षा दी जाय, तथा पब्लिक कुओं और मन्दिरों में जाने की रिवाज चला देना उचित है, ताकि हमारे अछूत बन्धु हिन्दू समाज के मज़बूत अंग बन जाएँ और अवसर पड़ने पर हमारी पूरी सहायता करें।

(४) देशी रियासतों में अपने बिछुड़े हुए हिन्दू भाइयों की शुद्धी का प्रचार ज़ोर शोर से होना चाहिये। आर्यसमाजियों को ख़ास तौर से बुला कर इस विषय में उनकी पूरी सहायता करनी उचित है। धर्म का परिवर्त्तन स्वेच्छा और विवेकपूर्वक होना चाहिये। शुद्धी का प्रचार करना बड़े पुण्य का काम है। रियासतों के अधिकारियों को अपने धर्म के गौरव तथा अपनी भावी सन्तान के हित का ख़्याल कर इस काम में पूरा योग देना चाहिए।

बस, इन चार बातों पर अमल करने से हिन्दू रियासतों में सङ्गठन का काम भली प्रकार हो सकेगा। हमारे इस सङ्गठन के बिगुल को रियासतों के कोने कोने में बजाना चाहिए और इसका प्रचार घर घर में कर देशी रियासतों की हिन्दू जनता को भली प्रकार से सङ्गठित कर बलशाली बनाना उचित है।

पैंतीसवीं आवाज़

शुद्धी

सन् १९११ के जुलाई मास में मैं अमरीका से लौट कर भारतवर्ष आया था। उसी समय से मैंने मानवी अधिकारों

की शिक्षा जन साधारण को देनी शुरू की थी। धार्मिक-स्वतंत्रता मनुष्य का ईश्वर दत्त अधिकार है, क्योंकि इसी के ऊपर उसका मानसिक विकास अवलम्बित है। यदि मनुष्य को सोचने और मानने की आज़ादी न मिले तो वह ईश्वरीय खज़ाने में से कोई भी नई वस्तु समाज की भेंट नहीं कर सकता—उस का जीवन निरा पशु सा बना रहता है। मज़हवी संगठन-युग का जहाँ पर अन्त होता है वहीं पर मानवी अधिकारों का युग प्रारम्भ होता है। समाज की प्रारम्भावस्था में पहला युग शारीरिक बल की प्रधानता का आता है, इसमें मज़बूत और लड़ाके आदमी हो बड़े माने जाते हैं। समाज में दूसरा युग आता है परलोक और ख़ुदा के ठेकेदारों का। जब जनता प्राकृतिक घटनाओं का हाल स्वयं नहीं पा सकती तो चतुर आदमी मन गढ़न्त बातें बना कर मूर्ख जनता की तसल्ली करते हैं और वे परलोक के बाद नरक और स्वर्ग की रचना करते हैं। स्वयं बहिश्त और दोज़ख के ठेकेदार बन कर वे अपनी खुदाई हकूमत क़ायम करने की चेष्टा करते हैं। यह हकूमत शारीरिक बल की हकूमत से भी अधिक ख़तरनाक होती है। क्योंकि इसके सहारे पर किए गए गुनाहों को गुनाह नहीं समझा जाता बल्कि उलटा सबाब (पुण्य) ठहरा दिया जाता है। इस प्रकार की हकूमत के विरुद्ध लड़ना कोई हँसी मज़ाक़ की बात नहीं, क्योंकि इसमें खुदा के ठेकेदार अपनी बनाई हुई ख़ुदाई फ़ौज का आश्रय लेकर भयंकर से भयंकर दंड दिलाने का दावा करते हैं, जिसके भय से मूर्ख लोग उनके सामने सिर उठाते हुए कांपते हैं। शारीरिक बल का मुक़ाबला शारीरिक बल से किया जा सकता है, परन्तु मज़हबी सङ्गठन का मुक़ाबला तो केवल उस सारे गोरखधन्धे को त्याग देने से ही हो सकता

है। जिस समय जनता में मज़हबी डाकुओं के विरुद्ध मुँह खोलने की शक्ति आ जाती है, उस समय समाज में स्वतन्त्रता का युग आरम्भ होता है।

इसी स्वतन्त्रता के युग का स्वागत करने के लिए मैंने अपनी "मनुष्य के अधिकार" नामक पुस्तक की रचना की थी और उसमें स्पष्ट तौर से विचार-स्वातन्त्र्य और धार्मिक स्वतन्त्रता का प्रतिपादन किया था। उस समय मुझे यह मालूम नहीं था कि इस्लाम में मुसलमानी मज़हब छोड़ने वाले को क़तल करने का हुक्म है। यद्यपि सन् १८९७ में आर्य मुसाफिर पंडित लेखराम की शहादत के समय मुझे इस बात की हलकी सी शंका हुई थी, पर बाद में वह उदारता के समुद्र में लीन हो गई। मगर जब सन् १९२४ के सितम्बर मास में अफ़गानिस्तान में मिरज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी के चेलों को अफ़ग़ान सरकार ने अपने मौलवी मुल्लाओं के फतवा देने पर, पत्थरों से मार डाला और भारत के मौलवी मुल्लाओं ने अमीर क़ाबुल को इस पैशाचिक कर्म की ख़ुशी में बधाई के तार भेजे, तो मेरे दिल को गहरी चोट लगी। स्वतन्त्रता का पुजारी होने के कारण मैं कभी यह स्वप्न में भी ख़्याल नहीं कर सकता था कि हज़रत ईसा की इस बीसवीं सदी में कोई भी समझदार आदमी इस प्रकार का हुक्म मान सकेगा। मैंने तो सन् १९११ से लेकर सन् १९२३ तक बराबर शुद्धी का विरोध किया, केवल इसलिए कि मुसलमान और ईसाई व्यर्थ में चिढ़ न जाएं और देश में किसी प्रकार की अशान्ति जन साधारण में न फैले। लेकिन जब अधिक तहक़ीक़ात करने का अवसर मिला तो पता लगा कि रियासत भूपाल में इस प्रकार का क़ानून मौजूद है कि वह मुसलमान से हिन्दू होने

वाले नागरिक को तीन वर्ष की जेल देता है। अर्थात् हिन्दू तो भले ही मुसलमान हो जाएँ लेकिन मुसलमान हिन्दू न हो सकें।

मेरे मन की व्यथा और भी बढ़ी। कांग्रेस के दायरे में मौलाना अब्दुल बारी (लखनवी) का नाम बहुत प्रसिद्ध था। खोज करने पर मालूम हुआ कि वे भी मुरतिद् (इस्लाम से इन्कारी) को वाजिबुलक़त्ल (मार डालने के योग्य) समझते हैं। तब क्या था। मेरे अन्दर तो मानों आग सी लग गई। इस मेरे प्यारे देश में सात करोड़ के क़रीब मुसलमान हैं, यदि उन में से चार करोड़ भी इस सिद्धान्त को सच्चा मानते हैं तो भला ऐसे लोगों के साथ मिलकर स्वराज्य की लड़ाई कैसे लड़ी जा सकती है। स्वराज्य तो मानवी अधिकारों की लड़ाई है, भला जो लोग मुसलमानों के अतिरिक्त दूसरे मज़हब वालों को इन्सान ही नहीं समझते, उनके साथ मिलकर आज़ादी की लड़ाई कैसे लड़ी जा सकती है। हिन्दू मुसलमानों के दंगे कभी बन्द नहीं हो सकते, जब तक कि इस प्रकार का असूल मुसलमानों में मौजूद रहेगा। इस देश में ईसाई और पारसी भी तो बसते हैं, भला उनके साथ हिन्दू लोग दङ्गा क्यों नहीं करते ? आए दिन मसजिदों के सामने बाजा बजाने के कारण हिन्दू मुसलमानों में वैमनस्य खड़ा हो जाता है, यह साफ़ प्रगट करता है कि मुसलमानों में एक बड़ी भारी संख्या ऐसे मौलवियों की है जो इस प्रकार के दङ्गा कराने वाले असूलों का प्रचार करते हैं।

और सुनिये। सन् १९२६ के दिसम्बर मास की २३ तारीख़ को दिल्ली में जो घटना घटी है, उसने भारतवर्ष के देश-भक्त लोगों में गहरी चिन्ता उत्पन्न करदी है। स्वामी श्रद्धानन्दजी रुग्नावस्था में शैय्या पर लेटे हुये थे। ऐसा कहा जाता है कि अब्दुल-रशीद नाम का मुसलमान इन से धार्मिक प्रश्न पूछने के बहाने आया।

स्वामीजी के भृत्य, धर्मसिंह, के मना करने पर भी स्वामीजी ने बड़ी उदारता से अब्दुलरशीद को अपने पास आने दिया और जब उसने पानी माँगा तो नौकर पानी लेने के लिये चला गया। मौका पाकर उसने स्वामीजी पर पिस्तौल से गोली चलाई। स्वामीजी वीर गति को प्राप्त हुए। घटनाओं का जो क्रम स्वामी श्रद्धानन्दजी की शहादत के बाद दिल्ली में हुआ उन पर ठंडे दिल से विचार करने पर यह विदित होता है कि अब्दुलरशीद को दृढ़ विश्वास था कि स्वामी श्रद्धानन्दजी की हत्या करने से उसे बहिश्त मिलेगा। यद्यपि कई बड़े बड़े मुसलमान नेताओं ने अब्दुलरशीद के कुकृत्य पर घृणा प्रगट की है और कुछ मुसलमानी अख़बारों ने भी उसके विरुद्ध नाराज़गी जाहिर की है, लेकिन यह बात भी सारा देश जानता है कि उस की फ़ोटो दिल्ली तथा अन्य भारतीय नगरों में बेंची गई और उस फ़ोटो के नीचे "ग़ाज़ी अब्दुलरशीद" लिख कर उस की बड़ाई की गई है। अगर पुलिस का डर मुसलमान जनता को न होता या मुसलमानों का राज्य दिल्ली में होता तो उस फ़ोटो की लाखों कापियों का देश में प्रचार हो जाता और अब भी चुपके चुपके उस फ़ोटो का प्रचार हो रहा है। इससे यह बात स्पष्ट है कि मुसलमानों में एक बड़ा गिरोह इस प्रकार की हत्या को क़ुरान के हुक्म से जायज़ मानता है। अगर्चे क़ादियानी फ़िरके के लाहौरी मुसलमानों ने बड़े बड़े पोस्टर छाप कर स्वामी श्रद्धानन्द जी की हत्या से इस्लाम पर लगे हुए कलंक के टीके को मिटाने की चेष्टा की है, पर उनका यह उद्योग केवल हास्यास्पद है। वे चाहे ढोल पीट कर इस्लाम को ऐसी शिक्षा से मुक्त करने की कोशिश करें किन्तु उनका उद्योग कभी सफल नहीं हो सकता। क्योंकि

हिन्दुस्तान में ऐसे बड़े बड़े .कुरान के हाफ़िज़ मौलवी मौजूद हैं जो इन्हीं मिरज़इयों को क़ाफिर कहते हैं। उन्हीं लोगों ने अफ़ग़ानिस्तान के अमीर को सन् १९२४ के सितम्बर मास में बधाई के तार भेजे थे, जब क़ाबुल में अमीर ने मिर्ज़ा .ग़ुलाम अहमद क़ादियानी के चेलों को पत्थरों से मरवा दिया था। अतएव सभी देश-भक्त हिन्दू ईसाई और पारसी लोगों को अपने देश में फैले हुए इस ख़तरे को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। जब तक मुसलमानों में इस किस्म के असभ्य सिद्धान्तों का प्रचार बना रहेगा तब तक भारत वर्ष को शान्ति नहीं मिल सकती।

अच्छा, तो इसका इलाज क्या है? मैंने इस पर विचार करना शुरू किया। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि इस ख़तरे को दूर करने के दो उपाय हैं—एक शुद्धी और दूसरा बुद्धिवाद। जब से इस्लामी मज़हब हिन्दुस्तान में फैलना शुरू हुआ है तभी से हिन्दुओं ने मुसलमानों का अपने मज़हब में शामिल करना शुरू नहीं किया और जो हिन्दू लोग लोभ, धोखे और तलवार के ज़ोर से मुसलमान बनाए गए, वे इच्छा रहते हुए भी पण्डितों की बेरहमी से हिन्दू समाज में शामिल न हो सके। जो लोग अपनी इच्छा से मुसलमान हुए थे, उनमें से भी बहुतों को जब अपनी भूल का ज्ञान हुआ, तो लाख प्रार्थनाएँ करने पर भी ब्राह्मणों ने उन्हें हिन्दू समाज में वापिस न लिया। परिणाम यह हुआ कि मुसलमान से हिन्दू होने का ख़्याल असम्भव माना जाने लगा। लाखों अछूत हिन्दू समाज को छोड़ कर मुसलमान बन गए और इस प्रकार कई सौ वर्षों तक यह क्रम जारी रहा। अब जब हिन्दुओं को अक़ल आई और वे भी अपने बिछुड़े हुए भाइयों को हिन्दू

बनाने लगे तो स्वाभाविक ही मुसलमानों में हलचल मच गई। नई बात से हलचल मचती ही है। मुसलमानों की इस हलचल को कैसे बन्द किया जाए? जैसे हिन्दुओं को मुसलमान होते हुए देखकर हिन्दू उसे मामूली बात समझते हैं, ऐसा कौन सा ढङ्ग इख़्तियार किया जाए कि मुसलमान भी हिन्दुओं की तरह मुसलमानों से हिन्दू बनने को मामूली बात समझें। मैं इस पर ख़ूब विचार करने लगा।

सोचते सोचते मैंने सच्चा मार्ग पाया। मैंने सोचा कि जब किसी जङ्गली घोड़े को पकड़ कर लाते हैं और उसकी पीठ पर हाथ रखते हैं तो वह बड़े ज़ोर से दुलतियाँ मारने लगता है। इसमें उस घोड़े का क्या दोष है? आज तक उसकी पीठ पर किसी ने हाथ रक्खा ही नहीं था। इस नई बात पर वह दुलतियाँ न मारे तो क्या करे। उसका दुलतियाँ बन्द करने का तरीक़ा यह है कि रोज़ उसकी पीठ पर हाथ फेरा जाए ताकि वह उसकी आदत बन जाए। चुनांचे ऐसा ही किया जाता है, और इसी प्रकार जङ्गली घोड़े पालतू बनाए जाते हैं। मुसलमानों को कभी मुसलमान से हिन्दू होते देखने का अवसर नहीं मिला था, मुसलमानों के लिये यह बिल्कुल नई बात है, अब अगर वे, मुसलमान को हिन्दू होते देख कर हाय तोबा मचाते हैं तो यह उनके लिए स्वाभाविक बात है। इसका सीधा सरल इलाज यह है कि हम हज़ारों और लाखों मुसलमानों को हिन्दू बनावें ताकि मुसलमान से हिन्दू होने की बात स्वाभाविक हो जाए। फिर मुसलमानों को अपने आप ही शुद्धी को सहन करने का आदत पड़ जाएगी। धार्मिक स्वतंत्रता के पुजारी, राष्ट्र-धर्म के मानने वाले प्रत्येक स्वराज्य के सैनिक का यह कर्तव्य है कि वह मुसलमानों की शुद्धी में योग दे ताकि मुसलमानों को

मज़हबी आज़ादी की क़द्र मालूम हो। इस से बढ़ कर पुण्य का काम इस सङ्कट के समय दूसरा कोई नहीं हो सकता।

और दूसरी बात कौन सी है? योरुप के विद्वान इस नतीजे पर पहुँचे हैं, और मैं भी उनके साथ पूर्णतया सहमत हूँ, कि आज़ादी का सबसे बड़ा दुश्मन "इल्हाम" है। जब तक मनुष्य-समाज "इल्हामी" किताब को मानता रहेगा तब तक इन्सान की आज़ादी हमेशा ख़तरे में रहेगी। इल्हामी किताब के मानने वाले मज़हबी दीवाने होते हैं। वे ख़ुदा के कलाम में लिखे हुए सभी हुक्मों को, चाहे वे कैसे ही बुरे क्यों न हों, पुण्य समझ कर मानते हैं और जो उन हुक्मों का विरोध करते हैं उन्हें वे काफ़िर, म्लेच्छ और हीदन (Heathen) कहते हैं। दुनिया में सब बुराइयों की जड़ इल्हाम है। सारे मज़हबी पाप, बेगुनाहों की हत्या, जीतों को जला देना, और अन्य अगणित पैशाचिक कर्म इसी इल्हाम के कारण संसार में हुए हैं। 'इल्हाम' में अन्ध विश्वास को सब से ऊँचा स्थान दिया जाता है, और तर्क को कोई जगह नहीं दी जाती। जो थोड़ा बहुत तर्क करते भी हैं वे केवल वितण्डावाद और ज़िद के सिवाय और कुछ नहीं होता। इसलिए मैं इल्हाम के सिद्धान्त को मानवीसमाज का सब से बड़ा शत्रु समझता हूँ। योरुप के विद्वानों ने बुद्धिवाद का प्रचार कर "इल्हाम" के भूत की हत्या कर दी है। ईश्वर से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि हम लोग भी ख़ुदाई किताब और उसके पैगम्बर के असूल को अपने देश की सीमा से बाहर कर दें ताकि हमारी भोली भाली जनता ख़ुदा के ठेकेदारों और बहिश्त के पण्डों के जाल से बचे।

संक्षेप में मैं शुद्धी को आज बड़े महत्व की वस्तु समझता हूं। ऋतु ऋतु का फल होता है और प्रत्येक युग का अपना

धर्म होता है। हिन्दू समाज को मज़बूत करने के लिए, इसका हाज़मा दुरुस्त करने के लिए, शुद्धी से बढ़ कर कोई दूसरी औषधि नहीं। सचमुच यह रामबाण है। जब हिन्दू समाज जन्म के मुसलमानों और ईसाइयों को हज़म करने की शक्ति पैदा कर लेगा तभी इस देश में बलशाली "भारत-राष्ट्र" की स्थापना हो सकेगी। हिन्दू सङ्गठन के प्रेमियो! कमर कस कर शुद्धी की पुनीत प्रगति में योग दीजिए। आज हम सब लोग संगम पर स्नान करने चले हैं। उस संगम पर जहाँ गङ्गा, यमुना और सरस्वती मिल कर बहती हैं, जहाँ पर स्नान करने से मोक्ष मिलता है। इस युग में "शुद्धी" वही सङ्गम है, जहाँ हिन्दू, मुसलमान और ईसाई, तीनों मिल जाते हैं और नाम केवल "हिन्दू" का ही रह जाता है, और वही हिन्दू नाम गंगावत् होकर समुद्र में मिल जाता है। शुद्धी, भारतवर्ष में हिन्दुओं की मुख्य धारा बहाएगी और यही धारा संसार की जातियों में आदर का स्थान पाएगी।*

छत्तीसवीं आवाज़

अन्तिम शब्द

हिन्दुस्थान की स्वाधीनता के लिए अपने प्राण न्योछावर करने वालो! अब मैं आपसे इस विषय पर आख़िरी बातें करना

---

* इस आवाज़ में हमने "शुद्धी" शब्द को दीर्घ ईकार से लिखा है जिसका अभिप्राय यह है कि जहाँ 'शुद्धि' शब्द ह्रस्व इकार से आवे वहाँ इसके अर्थ सफ़ाई और पवित्रता के हैं और जहाँ दीर्घ ईकार से "शुद्धी" का प्रयोग हो वहाँ उसके अर्थ मज़हब परिवर्तन की प्रगति समझना चाहिये।

—लेखक

चाहता हूँ। आप जानते हैं कि मैं राष्ट्र-धर्म के अतिरिक्त दूसरा धर्म नहीं मानता और उस राष्ट्र-धर्म के विकसित स्वरूप को ही मैं वेदान्त का शुद्ध स्वरूप समझता हूँ। मेरे बहुत से प्रेमी यह चाहते हैं कि मैं हिन्दू-संगठन के बजाए "हिन्दी-संगठन" करूं ताकि, क़ौमपरस्त ईसाई और मुसलमान भी इस पुनीत प्रगति में योग दे सकें। मेरा वक्तव्य इस पर यह है कि क़ौमपरस्ती का सारा उत्तरदायित्व हिन्दुओं के सिर पर है। क़ौमपरस्ती के स्वरूप का निश्चित करना, उसके व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से सामने लाना—यह काम हिन्दुओं का है। जब तक हिन्दू अपने अदम्य उत्साह से अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए उच्चतम कोटि का बलिदान करके नहीं दिखलायेंगे, तब तक राष्ट्र-धर्म की जड़ इस देश में नहीं जम सकती। हिन्दुओं की सामाजिक निर्बलतायें क़ौमपरस्ती के मार्ग में काँटा बन रही हैं। मुसलमान और ईसाई अपने बूते पर इस देश में राष्ट्र-धर्म की नींव नहीं बाँध सकते, क्योंकि उनके पास इस देश का ख़जाना नहीं है। विदेशी मिशनरियों ने उन्हें विदेशी मज़हब देकर विदेशी संस्कृति उनके अन्दर भर दी है, इसीलिए वे राष्ट्र-धर्म का स्वरूप निश्चित नहीं कर सकते। यदि हिन्दू-समाज में ईसाई और मुसलमानों का समावेश खुले तौर पर होता और किसी प्रकार का छूतछात उनसे हिन्दू लोग न मानते होते तो निस्सन्देह मैं "हिंन्दी-सङ्गठन" करता। हिन्दू-सङ्गठन के द्वारा मैं बड़ी सुन्दर भूमि तैयार करूँगा। उस भूमि में भारतवर्ष की बत्तीस करोड़ जनता अपने आपको एक झण्डे के नीचे ला सकेगी। ईसाई, मुसलमान और पारसियों से मेरा कोई भी द्वेष नहीं। मैं उन्हीं का भविष्य बनाने के लिए सबसे पहले हिन्दू-सङ्गठन

कर रहा हूँ। अपनी सब शङ्काओं को दूर कर इन मेरे भारतीय बन्धुओं को हिन्दू-सङ्गठन की सफलता के लिए प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए।

अन्त में हिन्दुओं को भी मैं दो चार बातें कह देना चाहता हूँ। मेरे प्यारे हिन्दू भाइयो! आज क़रीब एक हज़ार वर्ष से हमारा प्यारा देश विदेशियों द्वारा पददलित हो रहा है। यद्यपि हमारे तेजस्वी बुज़ुर्गों ने समय समय पर बड़ी वीरता से अपने देश के शत्रुओं के दाँत खट्टे किये हैं, तो भी भारतवर्ष के अधिकांश भाग में विदेशियों का राज्य बराबर रहा है। महाराज पृथ्वी राज के समय से लेकर महाराजा रंजातसिंह की मृत्यु के बाद तक हिन्दुओं को बराबर अपनी स्वाधीनता के लिये युद्ध करना पड़ा है, लेकिन इन युद्धों में हिन्दू अपनी स्वाधीनता स्थापित न कर सके। हमारे इस पवित्र देश में वीरों की कमी कभी नहीं रही। सुन्दर और ओजस्वी साहित्य हमारे ऋषियों ने हमें दिया है, हमारा देश, धन-धान्य से सदा पूरित रहा है, और हमारे यहाँ जन संख्या की कमी भी कभी नहीं रही। तिस पर भी दूर दूर देशों से आकर विदेशी लोग हमारी जन्मभूमि को पदाक्रान्त करते रहे हैं। अगर मैं आप को अपने देश की दीनावस्था का इतिहास सुनाऊँ तो सचमुच आप के रोंगटे खड़े हो जाएँगे। बड़े बड़े महापुरुषों ने देश के अत्यन्त आपत्काल के समय, हमें जगाने, मिलाने और उठाने की कोशिश की, लेकिन अफ़सोस! हम अभी तक ग़ुलामी की ज़ंजीरों से जकड़े हुए हैं। राजपूतों ने अपने काल में अत्यन्त वीरोचित काम किये थे। महाराना प्रतापसिंह का हल्दी घाटी का युद्ध देशभक्तों के लिये बड़े गौरव की चीज़ है; छत्रपति शिवाजी महाराज का मुट्ठी भर मावलियों को साथ लेकर महापराक्रमी औरङ्गज़ेब

से टक्कर लेना ऐसी घटना है जो हिन्दुओं की कीर्ति को इतिहास में सदा उज्ज्वल करेगी। इसी प्रकार चिल्लियाँ वाला में जो बहादुरी ख़ालसा फ़ौज ने अंग्रेज़ी सेना के मुकाबले में दिखलाई थी वह हिन्दू बच्चों के हृदयों को सदैव आह्लादित करेगी। ये सब कुछ हमारे बुज़ुर्गों ने किया था। यदि और आगे बढ़ कर देखें तो गुरु गोविन्दसिंह जी के बलिदान की मिसाल हमारे इतिहास में दूसरी नहीं मिलती। इस आधुनिक युग में राजा राममोहनराय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ और लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक जैसे भारत सुपुत्रों ने हमें जगाने की चेष्टा की; एड़ी से चोटी का जोर लगाकर उन्होंने हमें उठाने का प्रयत्न किया; इस युग के अद्वितीय महापुरुष महात्मा गाँधी जी ने भी भगीरथ तपस्या कर हमें चैतन्य करने की कोशिश की, पर शोक! हम अभी तक कमर कस कर खड़े नहीं हुए। सोचिए और अपनी आने वाली सन्तान के भविष्य पर विचार कीजिए। यदि हमने अति शीघ्र अपनी ग़ुलामी को दूर करने का सङ्गठित प्रयत्न न किया तो निस्सन्देह हमारा भविष्य घोर अन्धकार में है। आज इस बीसवीं सदी में केवल हिन्दू सङ्गठन ही हमें बचा सकता है; यही एक ऐसा ब्रह्मास्त्र है जो न केवल हमारी वर्तमान सामाजिक निर्बलताओं को दूर करेगा, बल्कि हमारे बुज़ुर्गों के सद्गुणों को संसार में फैलाएगा। पिछले एक हज़ार वर्ष के इतिहास पर सिंहावलोकन करने से यह बात भली प्रकार स्पष्ट हो जाती है कि यदि एक बार भी सब प्रान्तों के वीर हिन्दू, सङ्गठित होकर, अपनी स्वाधीनता के लिये खड़े हो जाते तो भारत माता सदा के लिये स्वतन्त्र हो जातीं। बस, यही एक भयङ्कर भूल हमारे बुज़ुर्गों से हो गई, जिसका प्रायश्चित्त

हमको अभी तक करना पड़ रहा है। इस समय हमारे सिर पर बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। भारतवर्ष की स्वाधीनता का सारा बोझ हमारे कन्धों पर है। प्रत्येक हिन्दू स्त्री और पुरुष को यह बात भली प्रकार जान लेनी चाहिए कि हिन्दुस्तान की आज़ादी के संग्राम में कोई भी उनकी मदद करने वाला नहीं है; उन्हें सारा काम स्वयं करना पड़ेगा। जब तक वे अपने पाँव के बल खड़े न होंगे, जब तक वे अपनी बिखरी हुई शक्तियों को नहीं समेटेंगे, जब तक वे बिल्कुल खुला समाजिक जीवन नहीं बनाएंगे, तब तक उनकी जन्मभूमि का दुख कभी दूर नहीं हो सकता। प्रत्येक हिन्दू नवयुवक को सीधे खड़े होकर अपने देश की समस्याओं को हल करने का उद्योग करना चाहिए। अपने देश के उज्जवल भविष्य पर विश्वास कर, हमें सच्चा सैनिक बनना उचित है और सैनिक वही हो सकता है जिसके पास केवल अत्यावश्यक चीज़ें हों, ताकि उसे मञ्ज़िल मारने में कोई दिक़्क़त न हो। छूतछात के पचड़ों को साथ लेकर, जातपाँत के झमेलों का बोझा सिर पर लाद कर, मूर्ख पण्डित पुरोहितों और ज्योतिषियों की बेसिरपैर की बातों पर विश्वास कर कोई भी हिन्दू नवयुवक सैनिक नहीं बन सकता। किस्मत की निकम्मी फ़िलासफ़ी को दूर फक कर हिन्दू नवयुवकों को आज पुरुषार्थ की गङ्गा में स्नान करना चाहिए। हम हिन्दू हैं और हिन्दुस्तान की आज़ादी का हल हमारी मुट्ठी में है, इस दृढ़ सङ्कल्प को हिन्दू-सङ्गठन हिन्दुओं में फैला देना चाहता है। सब प्रकार की क़ुरबानी इस दृढ़ सङ्कल्प के लिए करने को उद्यत हो जाना चाहिए।

दूसरी बात जो हिन्दू सङ्गठन प्रत्येक हिन्दू के सामने रखना चाहता है, वह है भारतवर्ष की अभिन्नता। रासकुमारी से

हिमालय तक और आसाम से दर्रा ख़ैबर तक जो विशाल देश है, यही हमारी जन्मभूमि है। एक इञ्च भर टुकड़ा भी हम इसका किसी को दे नहीं सकते। यदि सरहद्दी मुसलमान, रूस या अफ़ग़ानिस्तान की मदद पाकर, सिन्ध और बलोचिस्तान को भारतवर्ष से अलग करने की चेष्टा करेंगे, तो हम उन्हें वही दण्ड देंगे जो सभ्य संसार देश-द्रोहियों को देता है। जब तक एक हिन्दू भी जीवित है, भारत माता के टुकड़े नहीं हो सकते। भारतवर्ष सदा अभिन्न और अविछिन्न देश रहेगा। हम यह जानते हैं कि अफ़ग़ानिस्तान कराची बन्दरगाह लेने के लिए जी जान से कोशिश करेगा और पञ्जाब के मुसलमान इस विषय में अफ़ग़ानिस्तान का विरोध करना नहीं चाहेंगे, परन्तु हम हिन्दू-मात्र से साधारण तौर पर और पञ्जाब के हिन्दुओं से विशेष तौर पर अनुरोध करते हैं कि वे इस भावी ख़तरे का मुक़ाबला करने के लिए अभी से तैयार हो जाएँ। यह आँधी एक न एक दिन उठने वाली है। यदि हम इसके प्रति ग़ाफ़िल रहे तो यह हमारे अस्तित्व को ख़तरे में डाल देगी। अफ़ग़ानिस्तान वाले केवल किसी दूसरे योरोपीय महासमर का रास्ता देख रहे हैं। जब ज़रा भी इङ्गलिस्तान की शक्ति कमज़ोर होगी, यदि कहीं भी ब्रिटिश जङ्गी जहाज़ों को हानि पहुँच जाएगी तो अफ़ग़ानिस्तान रूस की सहायता लेकर पञ्जाब पर हमला करेगा। उस हमले का हमें निश्चित समझना चाहिए और आज से ही उसका मुक़ाबला करने की तैयारी करनी चाहिये। विदेशी गवर्नमेंट के सहारे हम कब तक सुख की नींद सोएँगे। हिन्दुओं को आज अपनी सब शक्तियाँ अपने समाज को सुधारने में लगा देनी पड़ेंगी और शुद्धी की प्रगति को पञ्जाब में बड़े ज़ोर से चलाना होगा ताकि सारी हिन्दू

आबादी अपने सिक्ख बन्धुओं के साथ मिलकर फ़ौलादी दीवार की तरह हो जाए।

तीसरी बात जो हिन्दू सङ्गठन हिन्दुओं के सामने रखना चाहता है, वह है हिन्दू-संस्कृति का श्रेष्ठतम आदर्श। प्रत्येक हिन्दू बालक बालिका को यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि हमारी जाति का प्राचीन इतिहास हमारे पूर्वजों की उज्वल कीर्ति से गौरवान्वित है, और हम लोगों ने श्रेष्ठतम संस्कृति की रचना की है। अपने वीर और पुण्यात्मा पूर्वजों की कीर्ति को हम तभी अमर कर सकते हैं यदि हम उनसे भी अधिक वीरोचित कार्य कर दिखलावें। अपने बाप दादाओं की कमाई पर बगले बजाने से हम केवल उनका उपहास कराते हैं। जिस जाति ने ब्रह्मस्रोत से सनी हुई उपनिषदों की रचना की, जिस जाति के ऋषियों ने रामायण, महाभारत, और गीता की धाराएँ बहाईं, जिस जाति ने भगवान बुद्ध, यतीवर महावीर, ब्रह्मचारी शंकर को उत्पन्न किया और जिस भारतमाता की कोख में आदर्श साहसी वीरों ने जन्म लिया वह हमारी जाति संसार को अपना सुखद सन्देश सुनाने वाली है। हम अपनी स्वतंत्रता इसलिए नहीं चाहते कि हमें केवल अच्छा खाना और पहनना मिले—पेट तो कुत्ता भी भर लेता है—हम हिन्दू सङ्गठन कर अपनी स्वाधीनता इसलिए चाहते हैं कि हम भी अपने पूर्वजों की तरह तपस्या कर प्रभु के ब्रह्माण्ड में से अमूल्य रत्न निकाल कर मानवी समाज का भण्डार भरें, ताकि संसार में ज्ञान की वृद्धि हो। हम स्वाधीनता के लिए इस कारण अधीर हो रहे हैं कि हमारी जाति के मिशन में देर हो रही है। अब तक तो भिन्न भिन्न प्रान्तों से उस उद्देश्य के मस्ताने योगी अपना सङ्गीत सुनाते हुए विचरते रहे, पर अब हिन्दू सङ्गठन यह चाहता है कि पञ्जाब का गुरु नानक,

बङ्गाल का चैतन्य, संयुक्त प्रान्त का कबीर, महाराष्ट्र का तुका राम और गुजरात का नरसी महता—यह सब मस्ताने एक स्वर, एक तान में अनहद का राग गाएँ और उस दैवी ध्वनि से सारे संसार को प्रतिध्वनित कर दें। बस हिन्दू सङ्गठन हिन्दुस्थान के प्रान्तीय द्वैत को दूर कर राष्ट्रीय अद्वैतवाद का पाठ हिन्दुओं को पढ़ाना चाहता है। जब हिन्दू राष्ट्र-धर्म के इस अद्वैतवाद में मस्त होकर बाँसुरी बजाएँगे तो मुसलमान, ईसाई और पारसी सभी उस मधुर तान को सुन कर दौड़े आएँगे। उस समय सब भेद भाव दूर होकर एक हिन्दू जाति का पुनर्जन्म होगा। आज यह आदर्श है, अविश्वासियों के लिए यह स्वप्न है, पर मेरे लिए यह सत्य है। इसी सत्य सङ्कल्प की सिद्धि के लिए मेरा सारा उद्योग है। परमात्मा के सामने अटल भक्ति और श्रद्धा से सिर झुकाकर मैं इस सत्य सङ्कल्प की पूर्ति के लिए विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ।

स्वतन्त्र विचारों से सनी हुई

स्वामी सत्यदेवजी रचित पुस्तकें

(१) अमरीका-भ्रमण—यह पुस्तक स्वामी जी के अमरीका में पैदल भ्रमण की कथा सुनाती है। २३०० मील की पैदल यात्रा, बिना किसी साधन के, स्वामीजी ने अमरीका में इसलिये की थी कि नई दुनियाँ के लोगों का ग्राम्य जीवन अपनी आँखों से देखें। वाशिंगटन रियासत के प्रसिद्ध नगर, सिएटल से यह यात्रा प्रारम्भ होती है। पैसिफ़िक महासागर की पाँच रियासतों का सजीव वर्णन इस पुस्तक में है। कठिन पहाड़ों की यात्रा, बीहड़ रेगिस्तानों में रातें काटना, बरफ़ानी मैदानों में बिना किसी गरम कपड़े के रातें बिताना—यदि सच्ची राबिन्सन क्रूसो को आप पढ़ना चाहते हैं तो इस पुस्तक को मँगा कर देखिये। मुखपृष्ठ पर स्वामीजी का यात्रा के समय का चित्र दिया गया है। मूल्य एक रुपया।

(२) अमरीका-दिग्दर्शन—बिलकुल नया संस्करण। इस पुस्तक में पहली बार स्वामीजी ने उन कारणों को स्पष्ट तौर से अपने देशवासियों को बतलाया है जिनकी वजह से वे १५) लेकर अमरीका की ओर चल पड़े थे। भारत के प्रत्येक नवयुवक को, स्वावलम्बन की शिक्षा देने वाली, इस पुस्तक को मँगा कर पढ़ना चाहिये। इस पुस्तक का अनुवाद अंगरेज़ी मराठी, गुजराती आदि प्रान्तीय भाषाओं में भी हो गया है। स्वाधीन अमरीका की रोचक कथा यदि पढ़नी हो तो इसे मँगाइये। मूल्य एक रुपया।

(३) मेरी जर्मन-यात्रा—यदि आप योरुप की सैर घर बैठे करना चाहते हैं, यदि रंगीले पैरिस के मनोहर दृश्य देखने हैं, यदि जर्मनों की प्यारी राहिन नदी के प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेना है, यदि देशभक्त लाला हरदयाल जी की, दिल को रुलाने वाली कथा, जाननी है तो इस पुस्तक को अवश्य खरीदिए। मूल्य एक रुपया।

(४) मेरी कैलाश यात्रा—नया और सुन्दर संस्करण। १८३०० फीट ऊँचे हिमालय को लाँघ कर, स्वामीजी सन् १९१५ में, तिब्बत गये थे। श्री कैलाशजी के दर्शन और मानसरोवर के स्नान का यदि पुण्य-लाभ लेना हो तो इस पुस्तक को पढ़िये। मूल्य दस आने।

(५) संजीवनी बूटी—यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त लाभकारी है। वीर्य-नाश होने से जितने कष्ट नवयुवकों को होते हैं, उन सब का इलाज सीधी सादी भाषा में इस पुस्तक में दिया गया है। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कैसे हो सके? इसका रास्ता इस ग्रन्थ-रत्न में मौजूद है। मूल्य आठ आना।

(६) संगठन का बिगुल—सुन्दर राष्ट्रीय चौथा संस्करण। इस पुस्तक के मुखपृष्ठ पर स्वामी जी का व्याख्यान देने का चित्र है। यह पुस्तक जनता में हिन्दू-संगठन के सिद्धान्तों का प्रचार करती है। इसे संगठन की गीता समझिये। जो लोग इस की इकट्ठी प्रतियाँ खरीद कर जन साधारण में इसका प्रचार बढ़ावेंगे, वे अत्यन्त पुण्य के भागी होंगे। मूल्य आठ आने।

(७) हिन्दी का सन्देश—मूल्य डेढ़ आना। हिन्दी-भाषा के प्रेमियों के लिये यह पुस्तक बड़े काम की है। इसका प्रचार प्रत्येक प्रान्त में होना चाहिये।

(८) राष्ट्रीय संध्या—मूल्य दो पैसे। इस पुस्तिका की हज़ारों प्रतियाँ जनता में प्रचलित हो चुकी हैं। इस राष्ट्र-युग में जैसी संध्या देश के नागरिकों के लिये दरकार है, वैसी यह है। प्रत्येक बालक बालिका को इसे कंठ करना चाहिये।

(९) वेदान्त का विजय-मन्त्र—मूल्य डेढ़ आना। स्वामीजी का यह प्रसिद्ध व्याख्यान है। वेदान्त का जो सच्चा अर्थ जनसाधारण को जानना चाहिये, उसी की इसमें व्याख्या है।

स्वामीजी के प्रेमी देश-भक्त सज्जन इन पुस्तकों को मँगा कर इनका प्रचार बढ़ावें। जो देशभक्त सज्जन इकट्ठी पुस्तकें मँगाकर जनता को मुफ़्त बाँटना चाहते हैं, जिनकी इच्छा है कि ये राष्ट्रीय पुस्तकें भारत के कोने कोने में पहुँच जाएँ; उन्हें हम ख़ास रियायत से पुस्तकें देंगे। वे ५०) से अधिक की पुस्तकें मँगावें, तो उन्हें सुभीता हो सकेगा। थोड़ी पुस्तकों का पार्सल रेल द्वारा नहीं भेजा जाता। आशा है कि प्रेमी ग्राहक बहुत शीघ्र हमें पत्र भेज कर अनुग्रहीत करेंगे।

स्वामीजी की नई पुस्तक "राष्ट्र-धर्म" इस वर्ष निकालने की कोशिश की जाएगी। इस पुस्तक में इस लोक को स्वर्ग बनाने के सभी साधनों का सविस्तर वर्णन किया जाएगा, और जीवन की सभी समस्याओं पर प्रकाश डालने की चेष्टा की जाएगी।

निवेदक—

जगदीशचन्द्र
मैनेजर सत्यग्रन्थ माला आफ़िस
राम गली लाहौर

संगठन के सैनिक बनिये

यदि मेरे इस बिगुल को पढ़कर आप के हृदय में संगठन की आग लग जाय तो आप तीन दिन निराहार रहकर भारत माता का ध्यान कीजिए, और उसकी प्रतिमा को अपने हृदय-मन्दिर में बिठलाइए। चौथे दिन प्रभु के सामने दृढ़ प्रतिज्ञा कर संगठन के सैनिक बनने का व्रत लीजिए। क्रान्ति का रंग लाल है, इसलिए अपने सिर पर गहरे लाल रंग की खद्दर की टोपी रखिए और अपने अन्दर पहनने के वस्त्र पर "संगठन-सैनिक" इन शब्दों को लिख लीजिए। नित्य प्रति हमारे इस बिगुल का पाठ रात को सोने से पहले घंटेभर के लिये कीजिए और सोचिए कि आप ने दिन भर में हिन्दू-संगठन के लिये क्या काम किया? जो कुछ सेवायें मैंने हिन्दू-सङ्गठन के सम्बन्ध में इस पुस्तक में लिखी हैं, अपनी रुचि के अनुसार उनमें से किसी एक को श्रद्धा से पकड़ लीजिए। एक महीने में कम से कम नए दस आदमी संगठन के बिगुल का पाठ अवश्य कर लिया करें और इस प्रकार आप बिगुल के पाठकों की संख्या बराबर बढ़ाते जाइए। जहाँ सात आदमी हिन्दू-संगठन के भक्त मिल जाएँ, वहीं एक "संगठन-समिति" बना लें और बिगुल में लिखी हुई बातों को अमली जामा पहनाने की क़ोशिश करें। यदि एक करोड़ हिन्दू नवयुवक मेरे इस बिगुल की आवाज़ को सुन लेंगे तो मुझे पूरा विश्वास है कि हिन्दुओं में सामाजिक क्रान्ति हो जाएगी। अतएव प्रत्येक सैनिक का यह धर्म है कि अपने ग्राम, क़स्बे और नगर में मेरे इस बिगुल का प्रचार, बड़े उत्साह से करे और भारतवर्ष की चारों दिशाओं को हिन्दू-संगठन की पवित्र ध्वनि से प्रतिध्वनित करदे। आज बलिदान का समय है। उनका जीवन धन्य है जो हिन्दू जाति के इस अत्यन्त संकट के समय अपना तन, मन, धन इस पर न्योछावर कर देंगे।

प्रार्थी—

सत्यदेव परिव्राजक